इस पुस्तक के कुछ अंश प्रयाग के "विज्ञान" में प्रकाशित हुए थे। विज्ञान परिषद के मंत्री जी ने उन लेखों को पुस्तक में सम्मिलित करने की आज्ञा देने की कृपा की है, इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

संसार में सुख, सफलता और समृद्धि पाने के लिए मानसिक बल और कार्यक्षमता की आवश्यकता होती है। आर्थिक, व्यावसायिक, वैज्ञानिक और दूसरे क्षेत्रों में उन्नति उन्हीं जातियों ने की है, जिन्होंने समुचित शिक्षा द्वारा अपने सदस्यों की मानसिक दक्षता बहुत उच्च-कोटि तक बढ़ा ली है। इस विषय पर मनोविज्ञानाचार्य बड़ा अनुसंधान कर रहे हैं। यद्यपि उन्हें अभी तक किसी ऐसी तरकीब का पता नहीं चला है जिससे जन्मजात बुद्धि की मात्रा में वृद्धि की जा सके, पर उन्होंने ऐसी अनेक बातें खोज निकाली हैं जिनके करने से कोई भी व्यक्ति अपने मस्तिष्क की योग्यता बढ़ा सकता है। इस पुस्तक में व्यावहारिक मनोविज्ञान की बताई हुई उन शिक्षाओं का संकलन किया गया है जो प्रयोग और अनुभव द्वारा गुणकारी सिद्ध की जा चुकी हैं। इसमें मस्तिष्क से काम लेने की उत्तम रीतियों का उल्लेख है, जिनका पालन करके कोई भी उच्चाकांक्षी मनुष्य अपनी योग्यता और कार्यकारिणी शक्ति को बढ़ा सकता है।

पश्चिम के देशों में इस उपयोगी विषय की ओर जनता की बड़ी रुचि है। अंगरेजी में, विशेषकर अमरीका में, इस पर अनेक पुस्तकें छप चुकी हैं, और नई नई पुस्तकें बराबर निकलती रहती हैं। मेरी कामना है कि हिन्दी लेखक और पाठक भी इस विषय की इसकी महत्ता के अनुसार अपनावें और इसके ज्ञान का घर घर में प्रचार हो, जिससे हमारे देशवासियों की मानसिक दक्षता में दिन दिन उन्नति हो।

—लेखक

विषय-सूची

पहला अध्याय

—:-०-:—

मानसिक दक्षता का महत्व

ऐसा शायद ही कोई मनुष्य होगा जिसे अपने जीवन का कारोबार चलाने में अपने दिमाग़ का उपयोग न करना पड़ता हो। अगर आप ऐसे व्यक्तियों में से नहीं हैं, अगर आपको इस बात का मान है कि आपके जीवन के कार्यों का संचालन मुख्यतः मानसिक शक्तियों द्वारा ही होता है, तो कदाचित् आपको यह जानने का कौतूहल होगा कि आपके मन की विविध क्रियायें किस प्रकार होती हैं, और अगर उनकी दक्षता में वृद्धि की जा सकती है, तो किन उपायों से ! अगर आपको इस प्रकार की कोई उत्कंठा है तो आइये हमारे साथ मनोविज्ञान वाटिका की सैर कीजिये। वहाँ के सुन्दर दृश्य, वहाँ की सुगन्धित स्वास्थ्यकर वायु, वहाँ के फूल और फल आपका मनोरंजन ही नहीं करेंगे वरन् आप में मानसिक स्वास्थ्य और बल का भी संचार करेंगे।

१. मानसिक दक्षता से लाभ

शरीर और मन मनुष्य के व्यक्तित्व के प्रधान अंगों में से दो हैं। उनमें घना सम्बन्ध है और वे क्रिया और प्रतिक्रिया करके एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। उनका आदर्श संयोग तो यह होगा कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन हो, पर अपूर्णताओं से भरे संसार में ऐसी पूर्णता तो बहुत ही दुष्प्राप्य है। मन और शरीर में मन ही का महत्व अधिक है। यदि मन दूषित हो तो एक निरोग शरीर भी व्यर्थ हो जाता है, पर चाहे शरीर अपूर्ण या रोगी हो

तो भी एक निपुण मन द्वारा मनुष्य न केवल दीर्घायु प्राप्त कर सकता है बल्कि असाधारण उत्कृष्टता का काम भी कर सकता है। मन शरीर का राजा है और सभ्यता तथा उन्नति के शिखर पर संसार की वही जातियां पाई जाती हैं जिन्होंने अपने सदस्यों के मन को बहुत ही परिष्कृत किया है, और इसी प्रकार व्यक्तिगत जीवन में साधारणतः वही लोग अधिक सफल और निपुण होते हैं जिन्हों ने अपने दिमाग को ऊँचे दर्जे तक तरक्क़ी दी है। एक अच्छी तरह सुशिक्षित और प्रवीण मन ही दुनिया में सबसे अधिक उपयोगी सम्पत्ति है। धन भी इसका मुक़ाबिला नहीं कर सकता और इसके बिना निःसहाय रहता है। प्रत्येक देश, प्रत्येक व्यापार तथा प्रत्येक पेशा इसका स्वागत करने और इसको काम में लाने के लिये उत्सुक रहता है। यह हर प्रकार की सफलता की कुंजी है और ऊँचे से ऊँचे समाज के अन्दर प्रवेश करने के लिये आज्ञापत्र है। विद्यार्थी, साहित्यिक, वैज्ञानिक और अध्यापक के लिये तो मानसिक दक्षता का मूल्य स्वतः स्पष्ट है, विशेष कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। इसके अतिरिक्त व्यापार और शिल्प, कला और दस्तकारी से सम्बन्ध रखने वाले धन्धों में भी, जहाँ शारीरिक परिश्रम का अंश अपेक्षाकृत अधिक रहता है, इसका महत्व बहुत ही बड़ा है, चाहे उतना साफ़ भले ही दिखलाई न पड़ता हो।

मानसिक दक्षता प्राप्त करने के फलस्वरूप विद्यार्थी न केवल पढ़ी हुई सामग्री को ज्यादा अच्छी तरह से समझ सकता है और याद रख सकता है, बल्कि अपने काम को कम समय में पूरा भी कर सकता है, और इस तरह बचाये हुये समय को आगे के काम या किसी दूसरे ही काम में लगा सकता है। इसी प्रकार एक व्यवसायी के लिये भी इसके फायदे कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। उसके लिये भी मानसिक दक्षता बड़े काम की वस्तु है। क्योंकि बातों को विस्तार पूर्वक समझने, उनको मन के समक्ष रखने,

तुलना करने, कीमतों को याद रखने, ग्राहकों के नाम एवं विशेषताओं आदि को ध्यान में रखने की शक्ति तथा बाज़ार भाव के भविष्य में घटने बढ़ने की सम्भावना का अन्दाज़ा लगाने की दूरदर्शिता किसी भी व्यापारी के लिये उसके प्रतिद्वन्द्वियों के मुकाबिले में एक बहुत बड़ी सुविधा सिद्ध होगी। यहां यह भी बता देना आवश्यक है कि माल या योग्यता का बेचना भी निश्चित् मानसिक नियमों के ही अनुसार होता है जिनको भली भांति समझे बिना कुशलता से प्रयोग नहीं कर सकते। चाहे आदमी के सुपुर्द कोई भी काम हो, उसमें उसकी सफलता और सुख दोनों ही अधिकांशतः उसके मन के दक्षता पूर्वक काम करने पर अवलम्बित हैं। चाहे काम हो, चाहे खेल या हमारे दैनिक जीवन के लिये उपयोगी हुनर हो, सभी में एक योग्य मन से अत्यन्त लाभ होगा।

हर प्रकार की सफलता सर्व प्रथम विचार के रूप में उत्पन्न होती है। हर प्रत्यक्ष कार्य आरम्भ में एक अदृश्य विचार ही रहता है। अतएव बुद्धिमानी से सोचने का ही तात्पर्य बुद्धिमानी से काम करना होता है। इसी प्रकार मानसिक कार्यक्षमता ही अन्य हर प्रकार की कार्यक्षमता का आधार है। प्रत्येक उत्कृष्ट तथा महत्वपूर्ण कार्य जैसे एक बढ़िया काव्य, एक सुन्दर चित्र, एक समृद्धशाली कारोबार या एक लाभदायक आविष्कार, सबसे पहले मन में उत्पन्न होता है। मन को विकसित कीजिये तो उत्तम फलों का मिलना निश्चित् हो जायगा। मानसिक कार्यक्षमता के लिये प्रयत्न शील होने में कोई स्वार्थपरायणता नहीं है। ऐसा करना तो आपका अपने, अपने कुटुम्ब और अपनी जाति के प्रति परम कर्तव्य है।

एक विद्वान् ने कहा है कि कारोबार तथा सामाजिक जीवन, दोनों में ही मनुष्य का पद मुख्यतः इस बात पर निर्भर रहता है कि उसने अपने मस्तिष्क की उन्नति के लिये क्या किया है। एक रसायनिक पदार्थ के नाते तो मनुष्य का मूल्य केवल ३ या ४रु०

होगा। भगवान बुद्ध महाराज विक्रमादित्य तथा परमहंस शंकराचार्य का मूल्य बस इतना ही था। शरीर से काम करने वाली कल के नाते मनुष्य का मूल्य तीस, चालीस रुपया मासिक हो सकता है, सम्भव है पचास, साठ रुपया भी हो जाय, पर इससे अधिक नहीं। हड्डी, पुट्ठों, और मांसपेशियों के बस यही दाम हैं। लेकिन मनुष्य के मस्तिष्क का मूल्य लाखों करोड़ों रुपये तक हो सकता है, और अगर वह अपने मूल्य को बढ़ाने का इच्छुक है तो उसे चाहिये कि अपने मस्तिष्क को अच्छे ढंग से काम में लगाने का गुर सीखे।

२. क्या मानसिक दक्षता में उन्नति संभव है?

यहां कुछ लोग यह आपत्ति कर सकते हैं कि भाई मानसिक दक्षता के महत्व में सन्देह ही किसको है! इसे तो सभी मानते हैं और समझते हैं। पर मानने और समझने ही से क्या कोई अपनी योग्यता बढ़ा सकता है? क्या ईश्वर की प्रदान की हुई मानसिक शक्तियों की सम्पत्ति को बढ़ाना सम्भव है? क्या मनोविज्ञान ने कोई ऐसा महामन्त्र ढूँढ़ निकाला है जिसके द्वारा अल्प-बुद्धि वाला भी बुद्धिमान बनाया जा सके? थोड़े से शब्दों में इन प्रश्नों का उत्तर यह है कि जन्म से प्राप्त मानसिक सम्पत्ति को बढ़ाने की कोई युक्ति अभी तक तो मनोविज्ञानाचार्य नहीं खोज पाये हैं। परन्तु उनके प्रयोगों से यह बात निश्चित् रूप से सिद्ध हो गई है कि मस्तिष्क से काम लेने के सही और गलत तरीके होते हैं, और एक मनुष्य की मानसिक शक्तियां चाहे कुछ भी हों उनकी व्यावहारिक उपयोगिता अथवा उनकी कार्यक्षमता में बहुत हद तक वृद्धि की जा सकती है, बशर्ते कि उन्हें अच्छी तरह से संगठित किया जाय और उन तरीकों से काम में लाया जाय जिन्हें मनोविज्ञान स्वीकार करता है। सच तो यह है कि मानसिक दक्षता में उन्नति

सम्भव मानकर ही व्यावहारिक मनोविज्ञान का श्रीगणेश होता है, और इस विषय का अध्ययन ही क्यों किया जाता यदि इसकी शिक्षाओं से दैनिक जीवन में कोई लाभ नहीं उठाया जा सकता ? मनोविज्ञान का यह दावा नहीं कि वह दिमाग़ पैदा कर सकता है या किसी के सिर में भूरे रंग वाले माद्दे की मात्रा को बढ़ा सकता है, पर इतना अवश्य है कि जितना कुछ भी मस्तिष्क किसी के पास है उसे काम में लाने की और उससे अधिकतम फल प्राप्त करने की उत्तम विधियों का सुझाव वह कर सकता है। इस बात को जान कर किसी को निराश न होना चाहिये, क्योंकि मनोविज्ञान के सबसे विचित्र अनुसन्धानों में से एक यह है कि अधिकांश मनुष्य शायद ही कभी अपनी शक्तियों के दशमांश से अधिक का उपयोग करते हैं। उनकी शक्तियों का शेष ९० प्रतिशत तो पड़ा सोता रहता है, और यदि मनोविज्ञान उसे जाग्रत करने की युक्ति बता सके, तो उनकी कार्यक्षमता में जो वृद्धि होगी वह उनकी सारी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये काफ़ी होगी और उन्हें अपनी मानसिक शक्तियों के भंडार में वृद्धि करने का प्रयोजन ही न रहेगा।

विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्राप्त की हुई सफलता में जो अन्तर देखने में आते हैं वे उनकी जन्म प्राप्त योग्यता में अन्तर के कारण उतने नहीं उत्पन्न होते जितने इस कारण से कि प्रत्येक व्यक्ति किस ढंग से और किस हद तक अपनी स्वाभाविक योग्यता को काम में लाता है। यदि बहुत से औसत लड़कों और लड़कियों की प्रकृति से मिली मानसिक सम्पत्ति की जांच की जाय तो उनमें बहुत ही थोड़ा अन्तर मिलेगा, फिर भी ऐसा अक्सर देखने में आता है कि एक व्यक्ति जिसके भाग्य में न तो विशेष बुद्धि और न अवसर ही आये हैं, अपनी पूँजी के मूल्य को कई सौ या कई हज़ार गुना बढ़ा लेता है, जब कि ९९ प्रतिशत इसी बात पर आश्चर्य करते

रहते हैं कि क्यों उनका काम इतनी निम्न कोटि का रहता है और अपनी असफलता के लिये अपने भाग्य को दोषी ठहराते हैं।

दिमाग़ी ताक़तों के लिहाज से अधिकांश मनुष्य न तो विशाल काय दानव हैं और न बौने। मन और शरीर दोनों ही के डील-डौल में अधिकतर औसत में बहुत थोड़ी कमी बेशी देखने में आती है। उस कमी बेशी को बिल्कुल दबा लेना या और भी बढ़ा देना दोनों ही सम्भव हैं और इस बात पर निर्भर हैं कि मन की शक्तियों का किस प्रकार शिक्षण, संगठन और प्रयोग किया जाता है और उनसे कितना परिश्रम लिया जाता है।

३. हम अपनी शक्तियों से पूरा लाभ नहीं उठाते।

एक मामूली लोहार पिटवाँ लोहे की एक खुरखुरी छड़ लेता है और उसे अपनी बलवती मांसपेशियों और सीमित निपुणता द्वारा नालों के रूप में परिणत कर देता है। नाल बन जाने से लोहे के छड़ के दाम कई गुना बढ़ गये। मगर एक दूसरा कारीगर है जो तनिक और मेहनत तथा बुद्धिमानी से लोहे को तपाता है, उस पर पानी चढ़ाता है और उसे कठोर करता है तथा नालों की अपेक्षा अधिक मूल्यवान चाकू के फल बना लेता है। एक तीसरा कारीगर और भी चतुराई से काम लेकर नालों और चाकू के फलों के आगे बढ़ जाता है और उस कच्चे लोहे से बारीक सुइयां बना लेता है। यह परिवर्तन भी आश्चर्यजनक है, मगर एक और कारीगर, जो इन सबसे निपुण है, उसी लोहे के टुकड़ों से घड़ियों की मुख्य कमानियां बना लेता है, जिनका मूल्य नालों, चाकू के फलों,और बारीक सुइयों, सभी से अधिक है। परन्तु वह कच्चे लोहे की छड़ अब भी अपने अधिक से अधिक मूल्य पर नहीं पहुँची क्योंकि एक और कुशल शिल्पकार अपने चातुर्य और परि-श्रम से उसी लोहे से और भी मूल्यवान चीजें तैयार कर सकता है, जैसे घड़ियों की चाल कमानियां।

अगर एकधातु जिसे केवल थोड़े से स्थूल गुण प्राप्त हैं, अपने कणों से बुद्धि के मिल जाने के कारण, अपने मूल्य में इतनी आश्चर्यजनक वृद्धि कर सकती है, तो यह कैसे माना जा सकता है कि मनुष्य, जो शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आत्मिक शक्तियों का अद्भुत भंडार है, सीमित परिमाण में ही उन्नति कर सकता है?

बहुत से लोग दूसरों की तुलना में अपनी प्राकृतिक बुद्धि की छड़ को तुच्छ, रद्दी और अपर्याप्त समझते हैं। परन्तु यदि वे लोग निरन्तर आत्म सुधार की आदत डालें, उत्तम रीतियों का अवलम्बन कर अध्यवसाय से उस छड़ को हथौड़े से पीटने, खींचने और चमकाने को तैयार हों, अथवा भोंडे नालों से सूक्ष्म बाल कमानियों तक की अवस्था में अपने को परिष्कृत और सुसंस्कृत करने के परिश्रम एवं कष्ट को सहने के लिये कटिबद्ध हों, तो वे भी अपनी मानसिक पूँजी के मूल्य को एक अपूर्व सीमा तक बढ़ा सकते हैं। दुनिया में महान् तथा सफल व्यक्तियों की जीवनियों में इस बात के अनेक दृष्टांत मिलते हैं।

अमरीका के विख्यात विद्वान एमर्सन का कहना है कि दुनिया अपने काम करने वालों के हाथ में अब चिकनी मिट्टी नहीं रही, वरन् लोहा बन गई है और मनुष्य को हथौड़े की कड़ी और लगातार चोटों द्वारा अपने लिये स्थान बना लेना चाहिये।

एक दूसरे विद्वान स्वेटमार्डन ने लिखा है कि अपनी सामग्री को, चाहे वह कपड़ा, चाहे लोहा अथवा चरित्र हो, अधिक से अधिक उपयोगी बना लेना ही सफलता है, और साधारण सामग्री को अनमोल बना देना महान् सफलता है। दिमाग़ केवल पैदा ही नहीं होते, वरन् बनाये भी जा सकते हैं। मस्तिष्क के भार ही से उसकी उपयोगिता नहीं ज्ञात होती बल्कि उसकी शक्तियों की व्यवस्था और उद्योगशीलता से। बहुत से मनुष्य जिन्हें वंश परम्परा से

थोड़ा ही मानसिक बल मिला है, आत्म-विश्वास और अध्यवसाय द्वारा दुनिया के बड़े बड़े विचारकों में से हो गये हैं।

मनोविज्ञानाचार्यों ने औसत मनुष्य की मानसिक कार्यक्षमता का गहरा अध्ययन किया है और एक बात जिसने उनके ध्यान को बड़ी प्रबलता से आकृष्ट किया है, वह यह है कि आज कल के जमाने में भी, जब कि सुख और सफलता दोनों ही के लिये. निपुणता की बड़ी आवश्यकता है, असंख्य नरनारी अयोग्यता और मूर्खता का ही जीवन व्यतीत करके सन्तुष्ट रह जाते हैं। हर रोज एक औसत मनुष्य अपने कारोबार में कई घंटे लगाता है, और कई घंटे खेल कूद, दिल बहलाव, अथवा अपने विशेष मनोरंजन के कार्य या पुस्तकावलोकन, या किसी प्रश्न के हल करने में लगाता है। पर वह इन सभी कामों को जितना चाहिये. और जितना सहज ही में हो सकता है, उससे एक चौथाई से लेकर तीन चौथाई तक कम योग्यता से करता है। वह अपने मन की निपुणता को ऐसी नीची श्रेणी में छोड़ देता है और ऐसे गलत तरीकों से प्रयोग करता कि उसके लिये आसान काम कठिन बन जाते हैं और कठिन काम असम्भव। बिना किसी अच्छे कारण के वह कितनी ही प्रकार की योग्यतायें सीखने में असमर्थ रहता है। गतिशक्ति के व्यर्थ जाने या अनुपयुक्त रीतियों के अपनाने के कारण जितनी सफलता वह भली भांति प्राप्त कर सकता है उसकी आधी भी कठिनाई से उसे मिल पाती है।

अमेरिका के विख्यात मनोविज्ञानाचार्य विलियम जेम्स का कहना है कि "जैसा होना चाहिये उसकी तुलना में हम केवल अर्द्ध जाग्रत हैं। हम अपनी शारीरिक और मानसिक सम्पत्तियों के एक बहुत छोटे से भाग ही को काम में ला रहे हैं। यह कहने में अतिशयोक्ति न होगी कि मनुष्य की प्रगति उसकी सीमाओं

तक पहुँचने से बहुत पहले ही रुक जाती है। उसके पास भाँति-भाँति की शक्तियां रहती हैं जिन्हें वह कभी व्यवहार में नहीं लाता।"

औसत मनुष्य को देखकर मनोवैज्ञानिक को इंजिनियरिंग की आधुनिक उन्नति के इतिहास का स्मरण हो आता है। कोई २०० वर्ष हुए, जब यन्त्र युग का प्रादुर्भाव हुआ, तब बड़ा प्रश्न यह था कि शक्ति के नये नये स्रोत कैसे निकाले जायँ। सो विज्ञान ने हमें भापइंजिन, आन्तरिक दहन वाला इंजिन, तथा बिजली प्रदान की। परन्तु इस समय, यद्यपि शक्ति के नये स्रोतों की खोज जारी है, बहुत से विज्ञानाचार्य और व्यावहारिक इंजिनियर एक दूसरी ही दिशा में काम कर रहे हैं। प्रयोगों द्वारा वे इस बात का पता लगाने का प्रयत्न कर रहे हैं कि किस भांति हम उस शक्ति को जो हमें प्राप्त है किफ़ायत से खर्च करें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वे बहुत सी युक्तियों का प्रयोग करते हैं, जिनमें से एक महत्व पूर्ण युक्ति धारावाही निर्माण (Stream Lining) कहलाती है। इसके द्वारा हवा और पानी की उस रुकावट से बचते हैं और उसे दूर करते हैं, जो धीमी चालों पर तो नगन्य रहती है, पर तेज़ चालों पर एक ज़बरदस्त रुकावट डालने वाली तथा गति को मन्द करने वाली शक्ति बन जाती है। ऐसे उपायों द्वारा कोयले का एक टन पेट्रोल का एक गैलन, बिजली का एक किलोवाट हमें पहले से कहीं अधिक तेज़ी से तथा अधिक दूरी तक ले जा सकता है। शक्ति से अधिक लाभ मिलता है, क्योंकि वह व्यर्थ नहीं जाती। इसी तरह जब मनोविज्ञान वेत्ता आपकी ओर देखता है तो उसे इन सब बातों का ख़याल आ जाता है। वह जानता है कि प्रकृति ने आपको केवल इतनी ही शक्ति प्रदान की है। उसे बढ़ाने मे तो वह कम से कम अभी तक, असमर्थ है। वह आपकी वंश परम्परा का संशोधन नहीं कर सकता, न आपका नये सिरे से पुनर्निर्माण ही कर सकता है। परन्तु वह यह भी जानता है कि अगर आप

सचमुच एक औसत या मध्यमान पुरुष हैं, तो आप अपनी शक्तियों का केवल एक छोटा सा अंश ही उत्पादक काम में लगा रहे हैं और बाक़ी से कोई लाभ नहीं उठा रहे हैं। जितना आपको अधिकार है, उससे कहीं मन्द गति से आप चलते हैं और जितनी दूर तक आपको जाना चाहिये वहां तक आप पहुँच भी नहीं पाते। जब तक आप अपनी वर्त्तमान पूँजी से पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाते तब तक उसमें वृद्धि करने से फायदा ही क्या ? सच तो यह है कि अधिकांश मनुष्य यदि अपने मस्तिष्क की सम्भावित क्रिया शक्ति का पूरी तरह प्रयोग करें, अथवा अपनी मानसिक कार्यक्षमता को यथा सम्भव बढ़ावें, तो उन्हें अपनी मानसिक पूँजी अथवा जन्म से प्राप्त बल में वृद्धि करने की कदाचित् आवश्यकता ही प्रतीत न हो।

४. वृद्धावस्था और मानसिक विकास

मनोविज्ञानाचार्य जब जानवरों के बच्चों का अध्ययन करते हैं तो देखते हैं कि उनके शरीर और मन का विकास प्रायः एक ही गति से होता है। किन्तु मानव शिशु की उन्नति इस से विपरीत ढंग से होती है। मनुष्य के छोटे बच्चे का भी मन, आराम, तक़लीफ़, इच्छित और अनिच्छित वस्तुओं को कुछ न कुछ समझने की योग्यता रखता है। परन्तु उसके शरीर में इतनी सामर्थ्य नहीं होती कि जिन चीज़ों की उसे इच्छा है उन्हें उठा ले या प्राप्त कर सके। तात्पर्य यह है कि बचपन में मानव शिशु का मन उसके शरीर की अपेक्षा अधिक विकसित रहता है। आयु के बढ़ने के साथ ही मन और शरीर दोनों की योग्यताओं में वृद्धि होती है। पर दोनों के विकास की गति में बड़ा अन्तर रहता है, यहाँ तक कि युवावस्था में, जब शरीर अपने पूर्ण विकास को प्राप्त कर लेता है, मानसिक दृष्टि से व्यक्ति अधकचरा ही रहता है। इसके

बाद शरीर की शक्तियां कुछ समय अपनी सबसे अच्छी हालत में स्थिर रह कर अपनी युवावस्था बीतने पर धीरे धीरे ढलने लगती हैं। परन्तु क्या इस समय मन की शक्तियों का क्षीण होना आवश्यक है? कदापि नहीं। अभी तो मन के विकास ही का समय है। युवावस्था के बीत जाने के वर्षों बाद तक मनुष्य के मन की उन्नति होती रहती है, बल्कि देखने में तो प्रायः यह आता है कि जब मनुष्य का शरीर बुढ़ापे के कारण बिलकुल जवाब दे चुकता है, उस समय भी उसका मस्तिष्क जोरों से काम करने की योग्यता को बनाये रखता है। मनुष्य के शरीर का विकास आरम्भ में उनके मन के विकास के पीछे रहता है। युवावस्था के आते आते शारीरिक विकास मानसिक विकास के बहुत आगे पहुँच कर रुक-सा जाता है, पर मानसिक विकास को उस समय, अथवा वृद्धावस्था तक में, जारी रक्खा जा सकता है। परन्तु ऐसा तभी हो सकता है जब इसके लिये दृढ़ता एवं नियम पूर्वक प्रयत्न किया जाय।

हमारे जिन पाठकों की आयु ४०, ५० वर्ष से अधिक हो चुकी है वे कह सकते हैं "भई रहने भी दो। हम अधेड़ हो गये, बुढ़ापा सामने है। शरीर और मन दोनों की शक्तियां शिथिल हो चली। ऐसी अवस्था मे मानसिक कार्यक्षमता के लिये उद्योग करना या उसमें सफलता पाने की आशा करना बिल्कुल व्यर्थ है।" यह युक्ति और सन्देह सर्वथा भ्रम-मूलक हैं। जब कालेज और विश्वविद्यालय की पढ़ाई समाप्त हो जाती है, तभी जीवन की वास्तविक शिक्षा आरम्भ होती है। मनुष्य के जन्म लेने का उद्देश्य ही यह है कि वह अपनी शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आत्मिक, हर प्रकार की उन्नति करे। जैसा ऊपर कहा जा चुका है, मनुष्य के शरीर का विकास तो युवावस्था तक ही सीमित रहता है, पर उसके मानसिक विकास का क्रम वृद्धावस्था तक जारी

रक्खा जा सकता है। मानसिक कार्यक्षमता के लिये सदा प्रयत्न करते रहना सम्भव ही नहीं वरन् उचित और अत्यन्त आवश्यक भी है। ऐसा करना न केवल सफलता, सम्मान, सुख और शान्ति प्राप्त करने का अनुपम साधन है, वरन् वृद्धावस्था के निवारण का भी उत्तम उपाय है। यह मानसिक कायाकल्प है। मन का शरीर पर इतना गहरा प्रभाव पड़ता है कि अगर सदा उन्नति करते रहने की उच्चाभिलाषा और उपयुक्त प्रयत्न द्वारा मन के बल स्वास्थ्य, और यौवन को बनाये रक्खा जाय, तो ऐसा करने से शरीर को भी स्वास्थ्य, बल और दीर्घायु का लाभ होगा।

५. मानसिक दक्षता का अर्थ

यहा पर यह समझ लेना अच्छा होगा कि मानसिक कार्य क्षमता का अर्थ क्या है। किसी भी कार्य के सम्पादन में निपुणता के कम से कम तीन आवश्यक अग होते हैं। १ शुद्धता या यथार्थता अर्थात् काम सुचारु ढङ्ग से किया जाय न कि बेपरवाही से। उसमें भूल चूक न हों या बहुत कम हों। २ चाल या काम करने की रफ्तार दिया हुआ काम कम से कम समय में सम्पूर्ण हो जाना चाहिये। ३ उद्योग या परिश्रम की अल्प व्ययता, काम करने में कम से कम परिश्रम लगना चाहिये जिससे कार्यकर्ता को काम समाप्त कर लेने पर कम से कम थकावट मालूम पड़े और वह काम की और भी मात्रा बिना थके हुए कर सके। सच तो यह है कि वह अपने काम को थकाने वाला नहीं बल्कि आनन्द देने वाला बना लेता है। इनके अतिरिक्त उच्चकोटि की निपुणता में एक गुण और होना चाहिए। ४ उत्पादकता अथवा मौलिकता। यन्त्रवत् काम करने अथवा बने ढर्रे पर ही काम करते रहने, की योग्यता बहुत नीचे दर्जे की दक्षता होती है। उच्चकोटि की मानसिक कार्यक्षमता के लिये यह आवश्यक है कि वह काम चलाने

रहने के साथ साथ ही नये विचारों, नये सङ्गठनो, नई युक्तियों का उत्पादन भी कर सके। मौलिकता मानसिक निपुणता का एक आवश्यक अग है।

एक निपुण टाइप करने वाला एक कम निपुण टाइप करने वाले की अपेक्षा अपने काम को कम समय में पूरा करेगा उसका काम साफ़ सुथरा और कम त्रुटियो वाला होगा और काम समाप्त करने के बाद उसको थकावट भी कम मालूम होगी। इसी प्रकार पढने में एक दक्ष पाठक न केवल ज्यादा तेज़ी से पढेगा वल्कि ज्यादा समझेगा और ज्यादा याद भी रक्खेगा। और लेखक कवि वैज्ञानिक या दूसरे लोग, जो उच्चकोटि का मानसिक काम करते है वे अपने काम को कम समय और थोडे परिश्रम में ही करने का योग्यता नहीं रखते बल्कि उसे नई सूझ बूझ और नये विचारो द्वारा उत्कृष्ट भी बना देते हैं, फिर भी कम थकते हैं। इसी तरह हर प्रकार के काम मे यद्यपि शुद्धता और चाल परस्पर विरोधी और दोनों ही अल्प व्ययता के विरुद्ध. जान पडते हैं पर वास्तव में यह तीनों गुण पूर्णत एक दूसरे के सहायक हैं। मानसिक दक्षता में इन तीनों ही का सामजस्य रहता है और आधुनिक मनोविज्ञान का उद्देश्य ऐसे नियमों का बताना है जिन्हे पालन करने से यह तीनों प्राप्त हो सकें और साथ ही साथ कार्य मे नई बातो का उत्पादन भी हो सके।

६ उपसहार

क्या बूढे, क्या जवान क्या पुरुष क्या औरत सभी का यह परम कर्तव्य है कि अपनी मानसिक दक्षता को यथा सम्भव बढाने के लिये भर सक प्रयत्न करें। यह प्रयत्न जैसा कि हम आगे चल कर देखेंगे, कठिन नहा बल्कि अत्यन्त रोचक और रोमाचकारी है। जीवन में सुख, सफलता सम्मान और समृद्धि प्राप्त करने के

लिये यह राज मार्ग है। मानसिक दक्षता के लिये प्रयास करने से मन की शक्तियों का परिवर्द्धन तो होता ही है, उसके साथ २ शरीर के भी स्वास्थ्य और बल को बनाये रखने में सहायता मिलती है। व्यक्ति और समाज दोनों ही के कल्याण और उत्थान के हेतु सब को ऐसा करना चाहिये।

यह तो सभी जानते हैं कि एक ओर तो सभ्यता के उमड़ते हुए प्रवाह में हम पर कितने बड़े दबाव पड़ते हैं और दूसरी ओर यह कि हम न तो अपने प्राकृतिक बल के भंडार को बढ़ा सकते हैं न दिन में घन्टों की संख्या ही को। अतएव यह तो और भी आवश्यक है कि हम हर क्षण का पूरा-पूरा लाभ उठायें, उद्योग तथा उपाय को अधिक से अधिक फल प्राप्ति के लिये सुव्यवस्थित करें। मनोवैज्ञानिक मानता है कि हम अपने सामर्थ्य के बहुत बड़े अंश को बिना वजह की रुकावटों द्वारा नष्ट होने देते हैं, ठीक उसी तरह जैसे एक मोटरकार की कुछ शक्ति उसके चौखूंटे, अग्रभाग, लम्ब रूप हवा रोकने वाला शीशा, बेडौल रोशनी की बत्तियां और किनारे के भाग तथा सीधी लकीरों की बनावट के कारण इन सब चीजों को हवा के विरुद्ध ढकेलने में व्यर्थ जाती है। जैसे मोटर कार के धारावाही निर्माण द्वारा कम से कम शक्ति के व्यय से अधिक से अधिक गति प्राप्त कराई गई है, ऐसे ही मनोवैज्ञानिक ढंग से मस्तिष्क को शिक्षित करने से हम अपना काम करने की शक्ति को बहुत अधिक फलदायिनी बना सकते हैं और ऐसा करना भी चाहिये।

दूसरा अध्याय

—:-o-:—

मन की यंत्र-रचना

अगर आप अपने मन को ठीक ढंग से काम में लाकर उससे पूरा पूरा लाभ उठाना चाहते हैं तो आपके लिये यह आवश्यक है कि मन के यन्त्र विज्ञान का अध्ययन करें, उसके कल पुर्जों से परिचय प्राप्त करें और उनकी क्रियाओं तथा उनसे काम लेने की विधियों को अच्छी तरह समझें। मानसिक क्रिया के मुख्य तत्व क्या हैं? वे किस प्रकार काम करते हैं और उनका एक दूसरे से क्या सम्बन्ध है? क्या वे तत्व किसी हद तक हमारे काबू के अन्दर हैं और अगर ऐसा है तो उन पर किस प्रकार से शासन किया जा सकता है? इन्हीं प्रश्नों पर यहाँ विचार किया जायेगा।

१. मोटरकार की उपमा

क्या कभी आपने चलती हुई मोटरकार को देखकर यह विचार किया कि इस बलशाली और द्रुतगामी सवारी के चलने के प्रधान अंग क्या हैं? लचकदार गद्दियाँ, बैठने और टांग फैलाने के लिये खुली हुई जगह, गाड़ी के रंग और रूप इत्यादि की ओर तो आपका ध्यान अवश्य ही आकृष्ट हुआ होगा। पर यह सब चीजें मोटरकार के चलने के आवश्यक या प्रधान अंग नहीं कही जा सकतीं। ये सब निस्सन्देह गाड़ी को सुन्दर और सुखद बनाने में सहायक हैं, पर गाड़ी के मुख्य गुण अथवा उसकी चाल पर इन चीज़ों का कोई विशेष असर नहीं पड़ता। ध्यान पूर्वक विचार कर देखने से ज्ञात होगा कि मोटरकार के संचालन के तीन मुख्य तत्व हैं!

(१) उसका इंजिन (२) टंकी में पेट्रोल और (३) संचालक। इंजिन मोटरकार का अत्यन्त ही आवश्यक भाग है। जितना ही शक्तिशाली और बढ़िया यह इंजिन होगा उतनी ही अच्छी गाड़ी होगी। एक चार सिलिंडर और १० घोड़ों के बल वाली गाड़ी, एक आठ सिलिंडर और ३० घोड़ों के बल वाली गाड़ी का मुकाबला कदापि नहीं कर सकती। मगर मोटरकार संचालन का गुर केवल इंजिन तक ही समाप्त नहीं होता। शक्तिशाली से शक्तिशाली इंजिन भी आप से आप नहीं चल सकता। उसके संचालन के लिये पेट्रोल, अथवा उसके अभाव में मिट्टी का तेल या कोयले की गैस उसको मिलना आवश्यक है। इतने पर भी, जैसा कि आप फौरन ही समझ लेंगे, केवल बलवान इंजिन और पेट्रोल से ही मोटरकार का चलना सम्भव नहीं। उसके लिये एक सुयोग्य और निपुण संचालक की भी आवश्यकता है, जो उसको निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर, रुकावटों के बीच से बचाता हुआ, सुरक्षित निकाल ले जा सके। संचालक की ही सहायता से उस शक्तिमान इंजिन और सामर्थ्य के भंडार पेट्रोल से लाभ उठाया जा सकता है। अगर इंजिन को इच्छा और आवश्यकतानुसार काम में न लाया जा सके तो उसके केवल रखे रहने से किसी को लाभ ही क्या होगा ?

२. मानसिक योग्यता के तीन तत्व

ठीक यही हालत मन के यन्त्र की भी है। मोटर इंजिन के समान ही मन के यन्त्र के भी काम करने के तीन मुख्य तत्व दिखाई पड़ते हैं। एक तो मस्तिष्क की प्राकृतिक या जन्म से प्राप्त शक्ति, दूसरे उस शक्ति से काम करने की लगन या भावना जनित उत्साह, और तीसरे मन को निर्दिष्ट दिशा या कार्य में लगाने और बराबर लगाये रखने का निश्चय, जिसका नाम हम इच्छाशक्ति या

सुकल्प रक्खेंगे। यद्यपि मन की क्रियाओं को हमने तीन खंडों में विभाजित किया है तथापि इससे यह न समझना चाहिये कि मन तीन हैं या उसमें अलग अलग तीन खाने हैं। वास्तव में मन एक पदार्थ है जो भिन्न भिन्न ढंग से आविर्भूत होता है।

३. मन की वास्तविक शक्ति

मानसिक क्रियाओं में मन की स्वाभाविक या प्राकृतिक शक्ति का वही स्थान है जो मोटर कार में उसके इंजिन का है। जैसे मोटर गाडियों की शक्ति में भिन्नता होती है उसी प्रकार मनुष्यों की प्रकृति या जन्म से मिली हुई शक्ति की पूँजी में भी बड़ा अन्तर होता है। बल्कि कहना तो यह चाहिये कि बिरले ही ऐसे दो व्यक्ति मिलेंगे जिनकी जन्म प्राप्त मानसिक शक्तियाँ हर प्रकार से समान हों। मन की प्राकृतिक शक्तियों में समझने की शक्ति 'बुद्धि, (intelligence) याद रखने की शक्ति मेधा' और नये विचारों को पैदा करने की शक्ति कल्पनाशक्ति' ही प्रधान हैं। किसी व्यक्ति के पास ये शक्तियाँ बराबर मात्रा में नहीं रहतीं और यदि भिन्न भिन्न व्यक्तियों की तुलना करें तो उनकी इन शक्तियों की मात्रा में भी भिन्नता दिखाई पड़ेगी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि दूसरी सब बातें समान हों तो यह व्यक्ति जिसके मन की वास्तविक शक्ति, जिसका मस्तिष्क अच्छा है, दुनिया में ज्यादा सफलता प्राप्त कर सकेगा बनिस्बत एक दूसरे व्यक्ति के जिसका दिमाग कुछ कमजोर है या उतना अच्छा नहीं है। पर क्या मानसिक उद्योग का सर्वस्व केवल ये प्राकृतिक शक्तियाँ ही हैं ? क्या किसी मनुष्य का सफल या असफल होना केवल इन स्वाभाविक या जन्म प्राप्त शक्तियों पर ही निर्भर है ? क्या जीवन में सफलता इन शक्तियों की मात्रा के अनुसार ही होती है ? कदापि नहीं। अनुभव इसके बिलकुल विप-

रीत बताता है। कछुए और खरगोश की पुरानी कहानी की बात मन्द बुद्धि और कुशाग्र बुद्धि पर भी अक्सर लागू होती दिखाई देती है। दृढ़ संकल्प द्वारा कितने कम बुद्धि वाले दुनिया में बड़ी सफलता और यश प्राप्त कर लेते हैं और कितने मनुष्य जिन्हें प्रकृति ने पर्याप्त मात्रा में बुद्धि दी है उससे लाभ नहीं उठा पाते और जीवन की दौड़ में पीछे ही रह जाते हैं। यह उसी तरह है जैसे कोई बलवती मोटरगाडी पेट्रोल या अच्छे ड्राइवर के अभाव में या किसी कल पुर्जे के बिगड़ जाने से, रुकी पड़ी रहे। और यहीं हमें एक क्रियात्मक मन के शेष दो तत्वों भावना और इच्छा शक्ति, की महत्ता का आभास होता है क्योंकि उनके बिना कोई दिमाग, चाहे वह स्वयं कितना ही तास्तवर क्यों न हो, उपयोगी या प्रभावशाली नहीं बन सकता।

४. भावना की व्याख्या

मानसिक क्रिया का दूसरा तत्व भावना है। पहले यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि भावना या अन्त क्षोभ (Emotion) का अर्थ क्या है। हम इन दोनों शब्दों को यहां एक ही माने में प्रयोग करेंगे। मनोविज्ञान ने सिद्ध किया है कि मनुष्यों और जानवरों में भी कुछ स्वाभाविक मनोवृत्तियां होती हैं जैसे सुख की कामना, भय, घृणा, भगड़ालूपन, अनुसरण संमता तथा समह इत्यादि की प्रवृत्ति। इनमें से हर एक मनोवृत्ति परिस्थितियों द्वारा उत्तेजित होकर मनुष्य में एक भावना या अन्त क्षोभ पैदा कर सकती है, जिससे मनुष्य के शरीर में स्फूर्ति या बल का संचार होता है। शिकारी कुत्तों को देखकर एक हिरन या खरगोश में जो भय उत्पन्न होता है वह उसकी टांगों को आत्मरक्षा के हेतु भागने के लिये अपूर्व शक्ति प्रदान करता है। क्रोध में जिस शक्ति का संचार होता है वह शत्रु पर आक्रमण करने में काम आती है।

जब हम सितारों का अध्ययन करते हैं तो हमें आकाश और उसमें दीखने वाले असंख्य सितारों के बृहत् होने का आभास होता है जिसे हम आश्चर्य की भावना कहेंगे। इसी आश्चर्य या कौतूहल की भावना से प्रेरित होकर ही मनुष्यों ने भांति २ के आविष्कार किये हैं। इसी प्रकार हम समय २ पर क्रोध, भय, सुख इत्यादि की भावना का अनुभव करते हैं।

५. तीन प्रधान मनोवृत्तियाँ

मनोवृत्तियों के ब्योरेवार वर्णन की यहाँ आवश्यकता नहीं। केवल तीन ही प्रकार की भावनायें यहां उल्लेखनीय हैं। प्रथम सुख, या आराम की चाह, दूसरे किसी चीज़ को पसन्द करना या उससे घृणा करना, तीसरे विजयाकांक्षा या यश तथा कीर्ति पाने की इच्छा रखना।

सुख की कामना से मनुष्य अतीत काल से कितना कड़ा परिश्रम, कितनी कठिनाइयों और कष्टों का सामना करता आया है यह सभी जानते हैं। सुख ही की इच्छा से कितने विद्यार्थी रात रात भर पढ़ते रहते हैं और दूसरी तरफ़ कितने लोग चोरी तथा अन्य नीच कर्मों में व्यस्त हो जाते हैं। मानव जाति के इतिहास में सुख कामना का कितना बड़ा हाथ रहा है यह सभी लोगों को स्पष्ट रूप से विदित है। इस सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं।

आप किसी चीज़ या काम को पसन्द करते हैं या उससे घृणा करते हैं। केवल इतने ही से मानसिक दृष्टिकोण में और इससे आपकी शक्तियों के प्रभाव में भी महान् अन्तर हो जाता है। जिस काम का आपको शौक नहीं है, जिसमें केवल आपका आधा मन लगता है, उसे आप कदापि उतनी सफलता से नहीं कर सकते जितना एक दूसरे काम को जिसमे आपको रुचि है

और जिसे आप उत्साह से करते हैं। आपकी पूरी शक्तियां उसी काम में लगेंगी जिसे आप अपने हृदय से पसन्द करते हैं। जिस विषय में एक विद्यार्थी की अधिक रुचि होगी उसमें वह अधिक योग्यता प्राप्त कर सकेगा।

विजयकांक्षा, अपने साथियों पर विजय, उनमें नाम और उनका सम्मान प्राप्त करने की इच्छा मनुष्यों से कड़ा परिश्रम करने को उसकाने वाली प्रेरणाओं में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। मानव जाति की उन्नति का बहुत बड़े अंश में श्रेय इसी को है। और यदि यह न होती तो इसके बिना दुनियाँ का इतिहास कुछ और ही रूप में होता। जो विद्यार्थी रात रात भर टिम टिमाती हुई लालटेन के मन्द प्रकाश में किताब पर आंखें गड़ा कर पढ़ता रहता है उससे मेहनत कराने वाली प्रेरणाओं में यदि एक ओर सुख की इच्छा है तो दूसरी ओर पुरस्कार की लालसा, अपने सहपाठियों का सम्मान और अपने अध्यापकों से शाबाशी प्राप्त करने की कामना। मनुष्यों को पशुओं से विशिष्ट करने वाली व प्राकृतिक प्रवृति विजयाकांक्षा या समाज में मान प्राप्तिकी इच्छा है।

६. इच्छा-शक्ति या संकल्प

अब हमने देख लिया कि भावना ही से वह शक्ति उत्पन्न होती है जो मन के यन्त्र का संचालन करती है। मन के क्रियात्मक उपयोग में तीसरा मुख्य तत्व इच्छा-शक्ति या संकल्प है। इसी के द्वारा मनुष्य मन को एक लक्ष्य की ओर केन्द्रित करता है या एक दिशा में लगाता है। इसी के द्वारा कई दिखाई देते हुये रास्तों में से मन एक को चुनता या निर्धारित करता है। इसी के द्वारा वह अपनी स्फूर्ति तथा शक्ति को कार्य रूप में परिणत करता है। उद्योग इसका स्वरूप है और क्रिया इसका फल। मन के घोड़े के लिये यह एक सवार का काम करता है। जब कठिनाइयों से हताश

होने या उत्साह की आग मन्द हो जाने के कारण मनुष्य की गति रुकने भी लगती है उस समय यह, दृढ़ संकल्प द्वारा, उद्योग के घोड़े को एड़ लगाकर फिर दौड़ चलने के लिये उत्तेजित करता है। बहुत से व्यक्ति जिन्हें अच्छा मस्तिष्क मिला है और जो दुनियां में कुछ कर दिखाने के बड़े इच्छुक हैं, इसी शक्ति के अभाव या दुर्बलता के कारण मन के लड्डू ही खाते रह जाते हैं और कर कुछ नहीं पाते। इच्छा और इच्छा-शक्ति में यही अन्तर है। एक तो सुख, सफलता तथा यश प्राप्त करने की अनिश्चित् कामना है और दूसरी उस कामना को वास्तविक बनाने के लिये दृढ़ संकल्प और उद्योग है।

सारांश यह कि मन के तीन मुख्य तत्वों में विशुद्ध मानसिक बल का धर्म है सोचना, समझना, स्मरण करना और नये विचारों का उत्पादन करना। भावना या अन्तः क्षोभ, शौक, लगन तथा उत्साह मनमें आवेश या स्फूर्ति पैदा करते हैं। इच्छाशक्ति का मुख्य स्वरूप है उद्योग और उसका मुख्य धर्म है मानसिक या शारीरिक शक्ति अथवा सामर्थ्य को कार्य रूप में परिणत करना।

७. तीनों तत्वों की पारस्परिक क्रिया

हमने दिमाग से काम लेने की उपमा एक मोटरकार के इंजिन के संचालन से दी है। अगर आपने ध्यान पूर्वक विचार किया होगा तो सम्भवतः इन दोनों में एक भेद की ओर आपकी दृष्टि आकर्षित हुई होगी। वह यह कि मोटर के चलने के तीन मुख्य अंग, इंजिन, पेट्रोल और संचालक एक दूसरे से बिल्कुल पृथक और बाहर की चीजें हैं। लेकिन मानसिक क्षेत्र इसके बिल्कुल विपरीत है। उसमें भावना, बुद्धि और संकल्प एक दूसरे से बिल्कुल पृथक होने के बजाय एक ही मन के तीन पार्श्व या पहलू हैं, जो आपस में मिले जुले हैं, एक दूसरे पर क्रिया और प्रति

क्रिया करके काफी प्रभाव डालते हैं और बड़ी हद तक या तो एक दूसरे की दुर्बलता और अभाव को पूरा कर देते हैं या उस दुर्बलता के कारण स्वयं भी निकम्मे बन जाते हैं। इस बात को और स्पष्ट करने के लिये नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं।

आप एक नई पुस्तक पढ़ने बैठते हैं। यदि पुस्तक आपको पसन्द है तो आप शौक से पढ़ते हैं, आपका ध्यान उस पर खूब जमता है, आप उसे समझते जाते हैं और पढ़ी हुई वस्तु याद भी होती जाती है। यह सब भावना जनित उत्साह का ही फल है इसके विपरीत, यदि आपकी रुचि उस किताब में नहीं है, तो आप क आँखें भले ही उस पर लगी रहें, आपका ध्यान बहक कर कहीं और पहुँचेगा और आपकी बुद्धि चाहे तीव्र भी हो पर विषय को न तो समझ सकेगी और न याद ही कर सकेगी। ऐसी अवस्था में आप क्या करते हैं? शौक या भावना की कमी को पूरा करने के लिये अपनी संकल्प या इच्छा शक्ति को काम में लाते हैं। इसके द्वारा अपने भटकते हुये मन को बार बार अपने सामने के विषय पर खींच कर लाते हैं। अगर आपकी इच्छा-शक्ति कमज़ोर हुई, या आपने उसको पूरी तरह से प्रयोग न किया, तो कदाचित् आपको उस पुस्तक को बन्द करके रख ही देना पड़ेगा। पर यदि आप अपनी इच्छा शक्ति द्वारा भावना के अभाव पर विजय पाकर उस पुस्तक के पढ़ने में लगे रहें तो आप देखेंगे कि कुछ समय बाद आपके मन में उसकी ओर से रुचि भी पैदा हो जायगी। क्रियात्मक मन के तीनों तत्व, बुद्धि, भावना और इच्छा शक्ति, इतना मिल जुल कर काम करते हैं कि एक किताब के पढ़ने की क्रिया का विश्लेषण करके यह कहना असम्भव है कि उसे पढ़ने की सफलता का कितना अंश किस विशेष तत्व के कारण है।

एक व्यक्ति है जिसे प्रकृति ने जी खोलकर मानसिक बल प्रदान किया है। प्रखर बुद्धि के साथ साथ उसे लगन या उत्साह भी खूब मिला है। मेधावी (intelligent) वह इतना है कि जब कोई प्रश्न उसके सम्मुख आता है तो जहां हम और आप उस प्रश्न मे केवल दो ही पहलू देख पाते हैं वह तुरत ऐसे दस पहलू देख लेता है और उन पर बड़ी तत्परता के साथ विचार करने लग जाता है। उस प्रश्न पर किसी भी निर्णय के पक्ष या विपक्ष में उसे कितनी ही बातें दीखती हैं, वह उनको बड़ी इमान्दारी से तौलता रहता है, इसी तरह समय बीतता जाता है, पर वह किसी दृढ़ निश्चय पर नहीं पहुँच पाता और न अपने निर्णय को कार्य रूप मे ही परिणत कर पाता है। कारण यह कि उसकी संकल्प शक्ति की दुर्बलता, उसकी बुद्धि और उत्साह की प्रतिभा को बिल्कुल प्रभा हीन कर देती है।

एक और उदाहरण लीजिये। एक विद्यार्थी पढ़ने मे अभिरुचि न रहने के कारण अपना समय व्यर्थ की गप शप या आमोद प्रमोद मे नष्ट कर देता है। उसकी बुद्धि तेज़ होते हुये भी उसे कोई फायदा नहीं पहुँचाती, ठीक उसी प्रकार जैसे कि खान में पड़ा हुआ खनिज पदार्थ तब तक कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता जब तक कि वह खोदकर बाहर न निकाला जाय। एक दूसरे विद्यार्थी की ओर देखिये। उसे नैसर्गिक बुद्धि और पढ़ने का शौक दोनों प्राप्त हैं। पढ़ने की धुन मे वह कितनी ही पुस्तकें पढ़ डालता है। अगर कभी इतिहास तो कभी मनोरंजक विज्ञान, कभी भूगोल तो कभी दर्शन, जिस भी विषय की पुस्तक की ओर ध्यान आकर्षित हुआ उसी को उठाया और पढ़ना आरम्भ कर दिया, पढ़ने में न कोई नियम न कोई योजना और न कोई लक्ष्य। वे पेंदे के लोटे की भांति जिधर ही हुआ लुढ़क गये। यह क्या है ? केवल इच्छाशक्ति की दुर्बलता या उसका दुरुपयोग।

८. भावना का महत्व

इस तरह की और कितनी ही मिसालें दी जा सकती हैं। पर अब इसकी आवश्यकता नहीं। उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो गया होगा कि मन के तीनों तत्व मिलकर एक दूसरे पर क्रिया प्रतिक्रिया करते हुये और एक दूसरे पर प्रभाव डालते हुये काम करते हैं, उनमें घना पारस्परिक सम्बन्ध है। यों तो मानसिक क्रियाओं के तीनों ही तत्व अत्यन्त महत्व पूर्ण हैं, मगर भावना का स्थान सब से ऊंचा है। आइये अब इस बात पर विचार करें कि भावना को मन की क्रियाओं में प्रधान क्यों कहते हैं। इसके कई कारण हैं, प्रथम यह कि इच्छा या प्रेम का रूप धारण करके भावनायें ही मानसिक शक्तियों को पूर्णतया और एकरस करके किसी काम में लगाती हैं। किसी पुस्तक में यदि आपको अधिक रुचि है तभी आप उसे मन लगाकर पढ़ेंगे, तभी आपका ध्यान उस पर जमेगा और तभी आप उसे सफलता पूर्वक याद भी कर सकेंगे। कल्पना शक्ति भी रुचि या शौक से प्रेरित होकर ही अपना काम करती है।

भावना या अन्तःक्षोभ, यदि एक ओर मन की शक्तियों को मिलाकर उन्हें एक दिशा में लगाता है, तो दूसरी ओर वह उस गर्म भाप का काम करता है जो हमारे मन के इंजिन का संचालन करती है।

भावावेग की भाप न केवल मानसिक शक्तियों का संचालन करती है, बल्कि शारीरिक शक्तियों का भी। यह सभी जानते हैं कि भय या क्रोध जानवरों या मनुष्यों के शरीर में बल का संचार कर देता है जो आत्मरक्षा या दूसरे पर आक्रमण करने में सहायक होता है। शौक, या रुचि जनित उत्साह से ही मनुष्य कठिनाइयों या संकटों के होते हुये भी परिश्रम से नहीं थकता

और बड़े बड़े काम कर डालता है। जहां शौक कम हुआ या उत्साह की अग्नि मन्द पड़ी बस काम भी ढीला पड़ा।

भावना का तीसरा बड़ा काम यह है कि यह मनुष्य के मनमें बैठकर उसके विचारों को रंग देती है। एक मनुष्य ने कोई सुझाव पेश किया। अगर उस व्यक्ति की ओर से आपके भाव प्रेम या दया के हैं, अथवा आप उस व्यक्ति को पसन्द करते हैं, तो आप उसके सुझाव की भी प्रशंसा कर देंगे, अथवा आपके विचार उस सुझाव की ओर से भी अच्छे बन जायेंगे। इसके विरुद्ध, यदि आप उस व्यक्ति से अप्रसन्न है या घृणा करते हैं अथवा डरते हैं, तो सम्भावना तो यही है कि आपके विचार भी उसके सुझाव की काट करने के लिये भांति २ की युक्तियां निकालेंगे। यहां यह कदापि न समझ लेना चाहिये कि आपको इस बात का ज्ञान होगा कि आप जान बूझकर अपने भावों से अपने विचारों को प्रभावित होने दे रहे हैं। ऐसे मनुष्य संसार में विरले ही होंगे जो अपने विचारों को अपने भावों से बिल्कुल पृथक रख सकें। हां, विज्ञान के क्षेत्र में ऐसा अवश्य है कि विचारों, प्रयोगों या सिद्धान्तों को भावना या अन्तः क्षोभ द्वारा प्रभावित नहीं होने दिया जाता।

भावना का यह गहरा, विचित्र और जटिल जीवन विचार के जीवन की अपेक्षा कहीं पुराना और गहन है। मनुष्य को एक सूक्ष्म मस्तिष्क मिलना और उसके द्वारा विचारों का उत्पन्न होना तो अपेक्षाकृत हाल की घटना है। उससे कहीं पहले जीव जन्तुओं की सारी क्रियायें उनकी भावना की प्रेरणाओं पर निर्भर रहा करती थीं। मन की शिक्षा में भावना की शिक्षा का स्थान इसी लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

भावना जनित कार्यशक्ति का स्थान सर्वप्रथम है। दूसरे शब्द जो इसके लिये कभी कभी प्रयुक्त किये जाते हैं वे आन्तरिक प्रेरणा, जोश और उत्साह हैं। आपको अपनी या किसी दूसरे

व्यक्ति की मानसिक योग्यता मापने में सबसे पहले यह निर्णय करना पडेगा कि भावावेग की गहराई और तेजी कितनी है जैसा कि एक उद्देश्य या महत्वाकाक्षा, अथवा किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये आन्तरिक प्रेरणा, से विदित होगा। यह प्रबल इच्छा कारोबार में उन्नति करने की, सुन्दर चित्र बनाने की, दुखियों का कष्ट निवारण करने की, या केवल अपने कार्य को और भी सुचारु रूप से करने की हो सकती है। खास बात यह है कि मानसिक योग्यता मुख्यत. भाव जन्य है। और दूसरी शक्तिया जिन्हें हम शुद्ध मानसिक कहते हैं, वे मन मन के कलसमूह की तरह हैं। आन्तरिक उत्साह ही वह भाव है जो उस यन्त्र समूह को सचालित करता है। परन्तु इस बात का कैसे पता चले कि हमारे पास जोश, उत्साह, या आन्तरिक प्रेरणा है या नहीं ? थोडे से आत्म निरीक्षण द्वारा। उदाहरण के लिये क्या आपको छोटी अवस्था से विचार या कार्य की किसी विशेष धारा की ओर एक निश्चित झुकाव रहा है ? क्या आप अपने वर्तमान पेशे को अख्तियार करने के लिये इच्छुक थे ? दुनिया में ऐसी कौन सी बात है जिसे करने या होने के लिये आप हर चीज की अपेक्षा अधिक उत्सुक हैं ? इन प्रश्नों के उत्तर असख्य प्रकार के हो सकते हैं। लेकिन अगर आप निश्चित रूप से यह सकते हैं कि आप विचार या क्रियात्मक उद्योग के अमुक क्षेत्र में गहरी और चिरस्थायी दिलचस्पी लेते हैं तो निस्सन्देह. आप और दिशाओं की अपेक्षा उस दिशा में अपनी योग्यता को अधिक बढा सकेंगे।

९. उपसंहार

इस अध्याय का सारांश यह है कि किसी मनुष्य की समग्र मानसिक कार्यक्षमता उसकी सारी शक्तियों के एक साथ काम करने का संयुक्त फल है। मनुष्य इतना जटिल प्राणी है कि किसी

एक शक्ति को उसे बनाने या बिगाड़ने की सामर्थ्य नहीं। हां, अगर किसी शक्ति में कुछ हद तक ऐसी सामर्थ्य है तो वह शक्ति उसकी इच्छा या उत्साह की प्रबलता है, अथवा उस दिलचस्पी की तेजी जो वह अपने काम में लेता है। एकाग्रता, मेधा, तर्क शक्ति, मौलिकता, इन्द्रियों की श्रेष्ठता, ये सब इसके केवल सहायक मात्र ही हैं। उत्साह अन्य सब शक्तियों के अभाव को बहुत कुछ पूरा कर सकता है, मगर उत्साह की कमी को दूसरी कोई शक्ति पूरा नहीं कर सकती। यदि किसी व्यक्ति को अपनी नैसर्गिक बुद्धि की पूँजी कुछ अपर्याप्त जान पड़ती हो तो भी उसे कदापि निराश न होना चाहिये। यह निश्चय जानिये कि अगर वह अपनी बुद्धि को सुव्यवस्थित ढंग से और नियम पूर्वक काम में लावे और उत्साह तथा लगन और दृढ़ संकल्प से अपने काम पर डटा रहे, तो वह अपने लक्ष्य की ओर अवश्य ही अग्रसर हो सकेगा, और उसका भविष्य निस्सन्देह सफल और उज्ज्वल बन सकेगा।

तीसरा अध्याय

मानसिक दक्षता का रहस्य

—:-ॐ-:—

१. सीखना

अगर एक शब्द में कहा जाय तो मानसिक दक्षता का रहस्य है सीखना। जिस किसी भी विद्या, कला या निपुणता की आवश्यकता हो उसे तत्परता से सीखिये—यही मानसिक कार्य क्षमता का गुर है। सीखिये! यह तो बड़ा पुराना और परिचित शब्द है। शायद आप कहेंगे कि आप इस पुस्तक को इस विचार से नहीं पढ़ रहे हैं कि शिक्षा और उसके महत्व पर एक व्याख्यान सुनें। आप आपत्ति कर सकते हैं कि सीखना तो बहुत ही साधारण बात है न कि मन के विकास की कोई नई युक्ति।

परन्तु मनोविज्ञान के पण्डितों का ऐसा विचार नहीं। उन्होंने सीखने की क्रिया का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन किया है उनकी दृष्टि में तो यह एक अत्यन्त विचित्र और रोमांचकारी वस्तु है। इसके सम्बन्ध में बहुत कुछ तो अभी तक मालूम भी नहीं। पर वे लोग इतना अवश्य जानते हैं कि होशियारी से चलाया हुआ और दृढ़ संकल्प से किया हुआ सीखना अद्भुत चमत्कार प्राप्त करा सकता है।

२. सफलता का मूल तत्त्व

मनोविज्ञानी बड़ी दिलचस्पी और कुतूहल के साथ एक औसत आदमी के जीवन को एक अत्यन्त सफल जीवन से तुलना करते हैं। हाल के कुछ वर्षों में वह बड़े आग्रह से यह प्रश्न पूछते रहे हैं कि वह कौन सी चीज़ है जो मनुष्य को सफल बनाती है और उसका पता लगाने के लिये वह बड़ी मेहनत और बारीकी से सफलता के तत्वों का विश्लेषण करते रहे हैं। इस प्रश्न का उत्तर यह जान पड़ता है कि सफल सीखने वाला ही सफल मनुष्य होता है। चाहे प्रारम्भ में वह कितना ही कच्चा या अयोग्य हो, पर यह अपने को अनुशासित और सुव्यवस्थित कर लेता है, वह अपने को गढ़ लेता है और अपनी शक्तियों को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप बना लेता है।

उदाहरण के लिये यह बात अच्छी तरह प्रमाणित हो चुकी है कि यदि एक मनुष्य का चुनाव किसी ऐसे पद के लिये करना हो जहां से आगे तरक्की का अवसर हो, तो उस उम्मेदवार से कहीं ज्यादा आशा की जा सकती है जिसने अपने को अच्छा सीखने वाला सिद्ध कर दिया है बनिस्बत एक दूसरे व्यक्ति के जो चुनाव के समय उससे जानकारी में श्रेष्ठ है पर जिसकी आदतें बिलकुल जमी हुई हैं और जिसमे नये नये कामों के प्रति साहस तथा उत्साह का अभाव है

इसी तरह किसी संस्था में नई भरती करने के लिये जो लोग चुनाव करते हैं उनका ध्यान इस ओर नहीं रहता कि एक नवयुवक के पास कितना ज्ञान उन विशेष क्रियाओं का है जिन पर कि संस्था का काम अवलम्बित है, बल्कि उनका झुकाव उन नवयुवकों की ओर रहता है जिन्होंने अच्छी सामान्य शिक्षा प्राप्त की है और तीव्र प्रतियोगिता में उत्तमता से परीक्षायें पास की हैं। अनु

सब से यही सिद्ध होता है कि ऐसे लोग अधिकतर सीखने की योग्यता और तत्परता रखते हैं और स्वयं काम करने वाले होते हैं।

दुनिया में किसी भी क्षेत्र में जो अनुभवी मनुष्य बड़ी जिम्मेदारियों के काम करते हैं उन्हें जब अपने कार्य को चलाने के लिये सबसे उपयुक्त व्यक्तियों की आवश्यकता होती है तो वे उम्मेदवारों में सीखने की प्रमाणित योग्यता ही को सबसे आशाजनक अकेला लक्षण समझते हैं। जिसने अब तक अपने को एक उत्सुक और सफल सीखने वाला सिद्ध कर दिया है, उसी से यह आशा की जा सकती है कि वह आगे चलकर भी नई बातें सीखकर नये प्रश्नों, नये कामों और नई परिस्थितियों का मुकाबला सफलता से कर सकेगा। यही सिद्धान्त मुकाबले की उन परीक्षाओं का आधार है जिनका परिचालन पब्लिक सर्विस कमीशन' सबसे ऊँची सार्वजनिक नौकरियों में भरती करने के लिये करता है।

न केवल प्रारम्भिक जीवनों का बल्कि पूरित जीवनों का भी प्रमाण इसी दिशा में संकेत करता है। जिस किसी ने भी बड़ी सफलता प्राप्त की है वह पहले से ही बड़ा मनुष्य न था वरन उसने अपने को बड़ा बनाया। उसने अपने में परिवर्तन किया और अपने को विकसित किया। वह तेज और योग्य सीखने वाला था।

जब हम महापुरुषों की जीवनियों पर दृष्टि डालते हैं और उनके अन्त को देखकर प्रारम्भ को समझने का प्रयत्न करते हैं तो और सब सत्यों से अधिक वे इस सत्य को प्रमाणित करते जान पड़ते हैं कि बड़े लोग बड़े सीखने वाले हुए हैं। वे बड़े आदमी इसी कारण बने कि वे बड़े सीखने वाले थे, वे अपनी सीमाओं से असन्तुष्ट थे, उन्होंने समस्याओं को लड़ाई के लिए ललकार या चुनौती समझा न कि एक हौआ, क्योंकि उन्होंने अपनी कम

जोरियों पर आक्रमण किया और उनपर विजय प्राप्त की। एक बड़े बुद्धिमान मनोविज्ञानाचार्य का, जिन्होंने वर्षों सफलता के अध्ययन में लगाये, कहना है कि यदि एक मनुष्य में काम करने की इच्छा और काम करने की शक्ति हो और तेज़ बुद्धि हो तो मैं परिस्थितियों के किसी भी ऐसे संयोग की कल्पना नहीं कर सकता जो उसको श्रेष्ठता तथा ख्याति प्राप्त करने से रोक सके।

कितनी ही योग्यतायें हैं जिन्हें आप हासिल करना चाहते होंगे—जैसे गणित, विज्ञान या अंग्रेजी भाषा में दक्षता प्राप्त करना, पत्र पत्रिकाओं के लिए लेख लिखना, लोगों के सामने भाषण देना शतरंज या 'ब्रिज' खेलना। पर आप भरसक प्रयत्न करने पर भी ऐसी मनोवांछित योग्यता प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं और आपको कदाचित् ऐसा जान पड़ता है कि आप इन सब सिद्धियों के लिए बनाये ही नहीं गये।

जब मनोविज्ञानाचार्य आपको ऐसी उत्साहहीनता के बीच छटपटाते देखता है तो उसे दुःख और आश्चर्य होता है और वह अपने से कह उठता है कि इस व्यक्ति को क्या हो गया है? इसकी शिक्षा किस प्रकार की हुई है? इसे कोई यह विश्वास क्यों नहीं दिला देता कि वह सीख सकता है औरसीखने की विधि उसे क्यों नही बता देता?

ये योग्यतायें एक सन्तोषजनक और सफल मात्रा में प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक नहीं कि आप और सब कुछ त्याग दें और प्रति दिन सोलह घण्टे परिश्रम करें। अगर सीखने का काम उचित ढंग से किया जाय तो थोड़ी सी मेहनत और थोड़े से ही समय में फल मिल सकता है। यह पिसाई का नहीं बल्कि बड़े मनोरञ्जन का काम है। आप अपने को अपने साधनों पर अधिकार प्राप्त करते, अधिक तेजी से चलते और शक्ति के उतने ही

व्यय पर अधिक दूर तक सफर करते हुए पाते हैं। इससे अधिक मोह लेने वाली बात और क्या हो सकती है? मनोविज्ञान की शिक्षा आपके लिए यह है कि अपनी मानसिक कार्य क्षमता को बढ़ाइये अथवा अपनी शक्तियों से पूरा पूरा लाभ उठाइये। मनोविज्ञान आपको सिखा सकता है कि यह कैसे किया जाय।

आप और हममें कदाचित् महान सफलता प्राप्त करने की योग्यता न हो। पर हमने जो ऊपर लिखा है वह समस्त सफलता का साँचा है। इससे हर प्रकार सफलता प्राप्त की जा सकती है। हममें से कितने हैं जो अपने को पूरी तरह से उपयोग नहीं करते। हममें से कितने उत्साहहीन रहते हैं और यह विश्वास करते हैं कि केवल एक शक्ति या गुण से कुछ नहीं हो सकता और अपनी उस शक्ति को भी अकारथ जाने देते हैं। परन्तु जब तक हम अपनी शक्तियों को काम में न लगायें हमें यह मालूम ही कैसे पड़ सकता है कि हमारे पास कौन सी शक्तियाँ हैं। कम से कम हम कुछ सफलता अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। इसलिये हर विचार से यह सलाह ठीक है कि आप अपने सीखने की योग्यता का प्रयोग कीजिये और उसे बढ़ाइये।

३. शिक्षा द्वारा उन्नति की सम्भावना

परन्तु क्या ऐसा करना सम्भव भी है? क्या मनुष्य हमेशा सीख सकता है? क्या यह सच नहीं कि सफलता और असफलता जन्म-प्रदत्त योग्यता की अधिकता या इसकी कमी पर निर्भर रहती है और इस सम्बन्ध में हम कुछ भी नहीं कर सकते?

क्या सीखने में समय और उद्योग का लगाना बुद्धिमानी है?

ये प्रश्न इतने उचित और महत्त्वपूर्ण हैं कि इनका उत्तर बड़ी सावधानी से देना चाहिये। यहाँ इस बात पर जोर देना होगा कि सीखने के बारे में हमारे जो विचार हैं वे अटकलपच्चू नहीं हैं।

मनोविज्ञान के पण्डितों ने बड़े परिश्रम से सहस्रों प्रयोग किये और तब कहीं वे अपने विचारों को स्थिर कर पाये। इन बातों को अधिक से अधिक निश्चित रूप से प्रकट करने के लिये हम यहाँ पर कुछ तथ्य ऐसे दिये देते हैं जो सीखने के सम्बन्ध में किये गये वैज्ञानिक अध्ययन द्वारा भलीभाँति प्रमाणित हो चुके हैं।

(१) यह सच है कि लोगों की जन्म प्राप्त योग्यताओं में असमानता रहती है। इससे तो शायद ही किसी को इन्कार हो सके। एक मनुष्य के पास दूसरे की अपेक्षा अधिक प्राकृतिक मानसिक बल हो सकता है और यदि वह उसको सुचारु रूप से प्रयोग में लाये तो वह दूसरे की अपेक्षा आगे बढ़ जा सकता है। एक दस हार्स पावर की मोटर गाड़ी कदापि उतनी अच्छी तरह नहीं चल सकती—अगर परिस्थितियाँ एक सी हों—जितना कि एक अस्सी हार्स पावर की गाड़ी। परन्तु ऐसी अवस्था में क्या होगा जब कि छोटी गाड़ी तो भली भाँति सफाई करके और तेल देकर उत्तम अवस्था में रक्खी जाय और बड़ी गाड़ी न हो ? केवल इस बात से कि कुछ लोगों के पास आपसे अधिक मानसिक सम्पत्ति है आपको अपनी कोशिश में ढिलाई कदापि न करनी चाहिये। बल्कि ऐसी अवस्था में तो अपको यह उचित है कि आप अपनी योग्यता और शक्ति के प्रत्येक कण से पूरा,पूरा लाभ उठायें।

(२) सीखने के विषय पर जो हज़ारों प्रयोग किये गये हैं उनमें बहुत थोड़ों में ही ऐसा हुआ कि सीखने से कोई उन्नति देखने में न आई। अधिकतर में तो काफ़ी तरक्की हुई। अगर कोई मनुष्य सीखने की कोशिश करता है तो वह कामयाब भी हो जाता है।

सीखने के उन कुल कार्यों की सूची देने का—जहाँ पर कि उन्नति की सम्भावना प्रमाणित हो चुकी है—अर्थ यह होगा कि प्रायः जितने भी प्रयोग किये गये हैं उन सभी का वर्णन किया

जाय, जो एक असम्भव कार्य होगा। कुल प्रमाण जो मनोविज्ञान ने जमा किये हैं इस विषय में शंका की कोई गुञ्जायश नहीं छोड़ते। इसलिए यदि कोई आपसे यह कहे या आपको स्वयं ही ऐसा सन्देह हो कि अमुक योग्यता सीखी नहीं जा सकती—चाहे वह खुशखत लिखाई या सही हिज्जे करना या किसी विदेशी भाषा में दक्षता प्राप्त करना या दूसरे मनुष्यों पर शासन करना या उनसे काम करवाना हो—तो आपको स्मरण रखना चाहिये कि विज्ञान ने जिन बातों का पता लगाया है वे सभी इसकी विपरीत दिशा में संकेत करती हैं।

(३) यद्यपि कोई मनुष्य एक कामको बहुत समय से कर रहा हो और उसको अच्छी तरह करने लगा हो तो भी वह उसमें तरक्की कर सकता है। सन् १९०६ में दुनिया में टाइपराइटिंग की सबसे तेज गति ८२ शब्द प्रति मिनट थी और वह स्त्री जिसने उसको प्राप्त किया था कहती थी कि इससे आगे कोई न बढ़ सकेगा। मगर उसी स्त्री ने स्वयं अपनी गति को पहले ८७ और फिर ९५ शब्द प्रति मिनट कर दिया। और कुछ वर्ष हुये यह गति १४७ पर पहुँची। टाइप लगानेवाले, जो इस काम को वर्षों से कर रहे हैं और जिन्होंने अरसा हुआ तरक्की करने को कौन कहे तरक्की की सम्भावना में विश्वास करना भी बन्द कर दिया, उनको जब विशेष शिक्षा दी गई तो उन्होंने थोड़े ही महीनों में अपने काम करने की गति में अद्भुत उन्नति कर दिखाई। सीखने के विषय में की गई खोजों में सबसे विचित्र बात है स्थायी उन्नति की सम्भावना। सीखने की क्रिया के प्रमुख अन्वेषकों में से एक का कहना है कि जीवन के साधारण कामों में से अधिकांश में—जैसे नामों और चेहरों का याद रखना, हाथ से लिखना, जबानी गणित के सवाल निकालना—हम पच्चीस से चालीस प्रतिशत तक आवश्यकता से कम दक्ष हैं।

आपको अपने मे ऐसी अयोग्यता सहन करने की कोई जरूरत नहीं और न कोई जरूरत यह विश्वास करने की है कि आप अपनी योग्यता की सीमा तक पहुँच गये हैं।

(४) आप सीखने की विधि को भी सीख सकते हैं। निस्सन्देह आप उस मानसिक सम्पत्ति को नहीं बढ़ा सकते जो प्रकृति ने आपको प्रदान की है। यदि आपमे एक शक्ति है तो आप उसे पाँच नहीं बना सकते। परन्तु जो कुछ आपके पास है उसे आप इस्तेमाल कर सकते हैं, जहाँ ढिलाई हो उसे ठीक कर सकते हैं, गति शक्ति को व्यर्थ जाने देने से रोक सकते हैं, जिस दिशा मे जाना चाहें जा सकते हैं। सीखना एक कला है, जिसमे सुबोध और विचारपूर्ण प्रयास द्वारा निपुणता प्राप्त की जा सकती है। यह निपुणता वास्तव में प्राप्त करने योग्य है।

मानसिक दक्षता का रहस्य है सीखना, पर क्या सफल और तेज सीखने की कला का भी कोई गुर है ? क्या मनोविज्ञान इस सम्बन्ध में हमारी कोई सहायता कर सकता है ?

४. दुहराना सीखने का कारण नहीं

आज कल के मनोविज्ञान की खोजो के विचित्र नतीजों के फल स्वरूप यह विश्वास दृढ होता जा रहा है कि केवल दुहराना शिक्षा या सीखने का कारण नहीं। अगर कोई आदमी कोई नई विद्या या कला सीखना चाहता है या किसी जानी हुई विद्या अथवा कला में उन्नति करना चाहता है तो वह केवल बहुत से अभ्यास पर ही निर्भर नहीं रह सकता। किसी चीज़ पर अधिकार पाने का सबसे अचूक और जल्दी का तरीका यह नहीं है कि उसको बार बार किया जाय या दुहराया जाय। सच तो यह है कि अगर कोई व्यक्ति इतना ही करता है तो कदाचित् वह वांछित दक्षता कभी न प्राप्त कर सके।

यह आपने अक्सर सुना होगा कि अभ्यास प्रवीण बनाता है। सुनने में यह कथन कितना युक्तिपूर्ण और सच मालूम होता है और कितनी आसानी से हम इसे स्वीकार भी कर लेते हैं। अगर अपने हाथ की लिखावट को और खुशखत बनाना चाहते हैं तो बहुत सा लिखिये, अगर आप मौखिक अंकगणित या मोटरकार चलाने या टाइप करने में निपुणता प्राप्त करना चाहते हैं तो इन कामों को निरन्तर करते चले जाइये। अगर आप सुयोग्य वक्ता बनना चाहते हैं तो भाषण पर भाषण दिये जाइये। इससे अधिक बुद्धिमानी की सलाह भला और क्या हो सकती है?

किन्तु यदि आप ज़रा विचार पूर्वक देखें और अभ्यास तथा दुहराने के फलों की जाँच करें, जैसा कि मनोवैज्ञानिक करते हैं, तो कुछ अनोखी कठिनाइयाँ सामने आने लगती हैं। उदाहरणार्थ यह स्पष्ट ही है कि एक व्यक्ति किसी क्रिया को हजार बार दुहरा सकता है पर सम्भव है कि वह फिर भी कोई उन्नति न कर पावे। बहुत सा चल लेने पर भी सम्भव है कि आप अधिक अच्छे चलने वाले न बन पावें, यद्यपि आपके चलने की निपुणता निस्सन्देह बढ़ाई जा सकती है। आप एक मोटरकार को हजारों मील चलाते हैं फिर भी कुछ त्रुटियाँ आप में रह ही जाती हैं। इसी प्रकार ज्यादा लिखने से हाथ की लिखावट सुधरती नहीं बल्कि और भी खराब हो जाती है।

इसमें सन्देह नहीं कि किसी कामको बार-बार करके कोई आदमी उसे करने की दक्षतामें सुधारकी आशा नहीं रख सकता। यह बात देखनेमें गलत जान पड़ती है पर वास्तवमें है बिल्कुल सत्य। कितने ही प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि हम लोग वह चीज सीखते हैं जिसे नहीं दुहराते बल्कि ज्यादा ठीक तो यह कहना होगा कि उस चीज को नहीं सीखते जिसे बार-बार दुहराते हैं। यही बात दैनिक जीवन के अनुभव से भी प्रकट होती है।

सीखने की किसी क्रियाकी जाँच कीजिये तो देखेंगे कि आपके असफल प्रयत्न सफल प्रयत्नोंकी अपेक्षा गिनती में कहीं अधिक हैं, तो फिर आपने सफल अथवा सही विधि कैसे सीख ली बजाय गलत तरीके के? बच्चा जब अपने पैरों पर खडा होकर चलना सीखने की कोशिश करता है तो वह बारम्बार गिर पडता है मगर क्या वह इन प्रयत्नोंसे गिर पडनेमें निपुणता प्राप्त कर लेता है? नहीं! वह गिरना नहीं सीखता बल्कि गिरनेका उलटा। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हम केवल वही बात नहीं सीख लेते जिसे दुहराते हैं अथवा दुहराना या अनुशीलन सीखनेका कारण नहीं है। सच तो यह है कि यह विचार ही भ्रमपूर्ण है कि दुहरानेसे कोई चीज सीखी जा सकती है, क्योंकि जब हम किसी नई चीजको सीखना आरम्भ करते हैं—जब हम उस कामको बिलकुल ही नहीं कर सकते तो ऐसी दशामें हम दुहरायेंगे क्या?

एक और भी बात है कि जब आप किसी कला या निपुणताको सीख लेते हैं, तो क्या इसका अर्थ यह है कि आप केवल उन्हीं बातोंको सफलतापूर्वक कर सकते हैं जिन्हें आपने सीखते समय बार-बार दुहराया था। जब आप यह कहते है कि आप मोटरकार चलाना जानते हैं तो आपका मतलब यह कदापि नहीं होता कि आप एक विशेष गाडीको उसी रफ्तारसे और उन्हीं सडकों पर चला सकते हैं जहाँ कि आपने उस मोटरको चलाना सीखा था। जब आप यह कहते हैं कि आपने अङ्कगणितमें दक्षता प्राप्त कर ली है तो इसका यह तात्पर्य हरगिज नहीं होता कि आप उन्हीं प्रश्नों को हल कर सकते हैं, जिन्हें पहले आप बार-बार लगा चुके हैं। ऐसी निपुणतायें सीखने का गुर केवल दुहराना या अभ्यास करना नहीं।

५. इच्छा शक्ति ही सीखने का कारण है

हमने यह तो ऊपर देख लिया कि क्या चीज सीखने का

कारण नहीं है। आइये अब ध्यान उस बात की ओर लगायें जो कि वास्तवमें सीखने का कारण है। यहाँ हमे यह देखना है कि भली-भाँति सीखनेके लिये क्या करना चाहिये। मनोविज्ञानने इस विषयमें बहुतसे प्रमाण इकट्ठे किये हैं जिनमे यह पता चलता है कि सीखने वाले की इच्छाशक्ति (will) अथवा संकल्प ही इस बात का निर्णय करता है कि वह सीखता है या नहीं और यदि सीखता है तो कितनी अच्छी तरहसे सीखता है और क्या सीखता है। मनोवैज्ञानिक प्रयोगोंके कुछ मनोरंजक परिणाम नीचे दिये जाते हैं।

(१) दो मनोविज्ञानाचार्योंने कुछ निरर्थक शब्दों की सूचियोंके समूहों को रटना शुरू किया। जब उन्होंने शब्दों को शीघ्रातिशीघ्र याद करने पर मन को लगाया तब याद करने के लिये उनमेंसे एक को औसतन नौ बार और दूसरे को तेरह बार दुहराना पड़ा। पर जब वे केवल उन शब्दों को बिना किसी विशेष उद्देश्य के पढ़ते गये तब एक को औसतन ८९ और दूसरे को १०० बार पढ़ना पड़ा। इतना बड़ा अन्तर केवल सीखने की इच्छा-शक्ति की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति से हो गया।

(२) कालेज के कुछ लड़कोंके सामने श्यामपट पर अँगरेजीके कुछ शब्द लिखे गये और उनसे कहा गया कि उनको कागज पर नकल कर लें। बाद में बिना किसी चेतावनी के उनसे कहा गया कि वे अपने लिखे को ढक कर उन्हीं शब्दों को अपनी याद से लिख डालें। कुछ दिनों के बाद यही प्रयोग नये शब्दों के साथ दुहराया गया पर इस बार लड़कों से पहले ही बता दिया गया कि उन्हें बाद में शब्दों को अपनी याद से लिखना पड़ेगा। दोनों प्रयोगों में केवल इतना ही अन्तर था। मगर दूसरी परीक्षा में विद्यार्थियों को ३० प्रतिशत अधिक शब्द याद निकले। केवल

उद्देश्य के मौजूद होने के कारण याद करने की सारी क्रिया ज्यादा गुणकारी बन गई।

(३) दो समुदायों को निरर्थक शब्दांशो के याद करने का काम दिया गया। एक समुदाय को आज्ञा दी गई कि उन्हें याद करने के बाद तुरन्त ही उन निरर्थक शब्दांशो को सुनाना पड़ेगा। दूसरे समुदाय को यह बताया गया कि उन्हें उस सामग्री को दो सप्ताह के बाद स्मृति से सुनाना होगा। याद करने के बाद तुरन्त दोनो समुदायों की परीक्षा ली गई तो मुश्किल से कोई फर्क मिला। मगर दो हफ्ता बाद फिर जब उन दोनों की जाँच की गई तो दूसरे समुदाय को ७० प्रतिशत से भी ऊपर शब्दांश अधिक याद निकले दोनों ने एक समान आरम्भ किया था। लेकिन उद्देश्य में अन्तर होने के कारण उनकी मानसिक क्रियायें विभिन्न रूपो में व्यवस्थित हो गईं और उन्होंने समय बीतने पर पृथक-पृथक फलों को पैदा किया।

ऊपर स्मृति सम्बन्धी तीन बड़े चित्ताकर्षक प्रयोगों का वर्णन किया गया है जिनसे सीखने की सफलता पर सीखने के सकल्प का बड़ा प्रभाव स्पष्ट हो जाता है। बहुत से और प्रयोग किये गये हैं जिनका दूसरे प्रकार के सीखने से सम्बन्ध है तथा उनका नतीजा भी ऐसा ही निकला। तार सीखने के सम्बन्ध में कुछ ऐसे लोगों पर प्रयोग किया गया जो बीस-बीस वर्ष से तार का काम कर रहे थे, मगर छोटे ही तार घरो में रखे गये थे क्योंकि वे तार की मुख्य लाइनों की कम से कम गति को कभी प्राप्त ही न कर सके थे। इन सबको यह विश्वास था कि वे अपने काम में कभी तरक्की न कर सकेंगे क्योंकि उनके भाग्य में इतना ही लिखा था। मगर ज्योंही इनको मनोविज्ञानियों के सुपुर्द करके प्रयोगशाला के अन्दर जबर्दस्त उत्तेजन और प्रोत्साहन के नीचे रखा गया उन सबने उन्नति करना आरम्भ कर दिया।

हाल ही में एक मनोविज्ञानाचार्य ने दो समुदायों को अँग्रेजी के छोटे ए (a) अक्षर को बार-बार शीघ्रता से और ठीक-ठीक लिखने का अभ्यास करने के काम पर लगाया। दोनों समुदायों ने उस कार्य को ७५ बार किया मगर उनमें से एक को, थोड़े-थोड़े समय पर यह बता कर कि काम कितनी अच्छाई से हो रहा है, विशेष रूप से उत्तेजित किया गया। दूसरा समुदाय लिखाई को बार-बार दुहराता रहा पर बगैर अपनी उन्नति को जाने। दोनों में से उत्तेजित किये हुये समुदाम का काम बहुत अच्छा रहा।

पहेलियों और प्रश्नों को हल करना सीखने की क्रियायों के जो बहुत से अध्ययन किये हैं वे सब इसी नतीजे पर पहुँचाते हैं कि सफल, प्रभाव शाली और तीव्र प्रगति में सीखने वाले की उन प्रश्नों पर आक्रमण करने की सक्रिय भावना बड़ी सहायक होती है।

देखने में आया है कि काफी उम्र वालों ने भी, न कि बच्चों ने *जिन्हें आगे बहुत-सी तरक्की करनी बाकी है*, अपने पढ़ने की गति को छः ही हफ्तों में दुगने तक बढ़ा लिया और ऐसा करने की सबसे महत्वपूर्ण शर्त थी केवल एक विचारपूर्ण उद्देश्य का होना या उस फल को प्राप्त करने के लिये एक तीव्र और लक्षित आकांक्षा का रखना।

कोई भी व्यक्ति जागृत और विचारपूर्ण संकल्प द्वारा अपनी कार्यक्षमता में बड़ी वृद्धि कर सकता है। एक अनजान मनुष्य से आपका परिचय कराया जाता है और आपको उसका नाम बतलाया जाता है। अगर आप उसे याद कर लेना चाहते हैं। और उसके चेहरे से नाम का सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं जिससे फिर कभी मिलने पर चेहरा देखकर नाम याद आ जाय तो ऐसा करने के लिये ध्यानपूर्वक और सचेत प्रयत्न कीजिये। आपको एक नया काम मिला है और उसे सफलतापूर्वक करने के लिए एक ऐसी विद्या या निपुणता सीखने की आवश्यकता है जिसे

आप इस समय नहीं जानते। बडे एकाग्र मन से उसे प्राप्त करने का उद्योग कीजिये क्योंकि ऐसा करना सफलता का आधार बनेगा।

सीखने के प्रति एक आक्रमणात्मक संकल्प का अभाव ही शायद अपूर्ण और असफल सीखने का सबसे बडा कारण है। इसी वजह से हम बहुत से कामों को बार-बार करते रहने पर भी पहले की अपेक्षा अच्छे ढङ्ग से नहीं कर पाते। हमारा इशारा उन चीजों की तरफ है जैसे हाथ की लिखावट, शब्दों के हिज्जे नामों और चेहरों को याद रखना, इत्यादि, जिन्हें लोग हजारों बार करके भी सफलता से नहीं कर पाते। अगर आप किसी क्रिया को बिना किसी विचार या इरादे के कर डालते हैं तो उसका असर चिकने घडे पर पानी की बूँद का सा होता है और आपकी कोई उन्नति नहीं होती। पर ज्यों ही आप यह मान लेते हैं कि वह क्रिया सीखने के वास्ते एक चुनौती है और उसको पहले से अधिक सुचारु रूप से करने का बीडा उठा लेते हैं त्यों ही आपके करने के ढङ्ग में सुधार होने लगता है। तरक्की तभी हो सक्ती है जब सीखने के लिये दृढ़ सकल्प हो। अगर कोई व्यक्ति किसी काम को सिर्फ बार-बार करता रहता है पर उसे पहले की अपेक्षा अच्छे ढङ्ग से करने की कोई सक्रिय कामना नहीं रखता, तो वह सीख नहीं सक्ता। आपको चाहिये कि हरेक काम को सीखने के लिये एक चुनौती समझ कर करें चाहे उसका सम्बन्ध आपके कारोबार से हो, अथवा खेल-कूद से या सामाजिक व्यापार से हो।

६. इच्छा और इच्छा शक्ति

अब यह देखना चाहिए कि सीखने के लिए इच्छा-शक्ति (will) और दृढ़ सकल्प (will to learn) का ठीक-ठीक अर्थ क्या है। पहली बात जो हमें अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये वह यह है क सीखने की इच्छा और सीखने की इच्छा-शक्ति

या सीखने के लिए दृढ़ संकल्प में बड़ा अन्तर है। पहली तो सुधार या उन्नति करने के लिए एक प्रकार की साधारण अभिलाषा है और दूसरी उस अभिलाषा के लिए साहसपूर्ण और सक्रिय प्रयत्न है। सीखनेकी इच्छा बिखरी हुई और सामान्य होती है। सीखने की इच्छा-शक्ति केन्द्रीय और निश्चित वस्तु है। सीखने की इच्छा का अर्थ यह होता है कि हम एक क्रिया को बार-बार दुहराते जाते हैं और यह आशा करते जाते हैं कि उससे कुछ नफा होगा। सीखने की इच्छा-शक्ति का अर्थ यह है कि हम छान-बीन और विश्लेषण करते हैं और इस बात का ठीक-ठीक पता लगाने की चेष्टा करते हैं कि क्या गड़बड़ी या कमी रह गई है और उसको कैसे सुधारा जा सकता है।

हम इसका एक उदाहरण देते हैं। एक आदमी को और अच्छे स्वास्थ्य और बलकी इच्छा है। उसकी इच्छा तभी इच्छा-शक्ति में परिणत होती है जब वह उन बातों का पता लगा लेता है जिनके द्वारा वह अधिक स्वस्थ्य बन सकता है और फिर उन बातों को कर डालता है। इसी तरह सीखने की इच्छा-शक्ति (संकल्प) का तात्पर्य है, पहले तो उन बातों के लिये बुद्धिमानी और तत्परता से खोज जिनके द्वारा सुधार हो सकता है और फिर उन बातों पर दृढ़ता से मन और प्रयत्न को केन्द्रित करना।

इच्छा और इच्छा-शक्तिमें अन्तर अवश्य है पर यह न समझना चाहिये कि बिना इच्छा-शक्ति या प्रयासके इच्छा बिल्कुल ही महत्त्वहीन है। इच्छा जिसे रुचि या शौक भी कह सकते हैं मनुष्यके जीवनमें बड़े काम और महत्व की चीज है। इच्छा से ही उन्माद के रूप में उस बल का संचार होता है जिसके द्वारा मनुष्य परिश्रम करता है। जहाँ रुचि धीमी हुई, उन्माद की अग्नि मन्द पड़ी, बस काम भी हल्का हुआ। इसके अतिरिक्त इच्छा ही मनुष्य को मानसिक शक्तियों को एकता प्रदान करती है और

उनको एक स्वर में मिला कर उद्योगशील बनाती है। और जैसा कि हम और जगह देखेंगे, इच्छा या रुचि ही अवधान, स्मरण और कल्पना का मूलाधार है।

देखने से पता चलता है कि दुनिया में ज्यादातर आदमियों को सीखने या उन्नति करने की कोई कामना ही नहीं रहती और अगर रहती भी है तो बिल्कुल अस्थिर रूप से, जल में तरंगों की तरह। उन्हें जीवन में कुछ कुछ सुख और सफलता प्राप्त है और वे उसीसे बिल्कुल सन्तुष्ट हैं। ऐसे लोगों की, समय बीतने पर, कोई विशेष उन्नति नहीं हो सकती चाहे वह अपने काम को कितनी ही बार दुहराते जायें। वे कभी पहले से अच्छे व्यापारी या अपने काम में अधिक कुशल नहीं बनते क्योंकि वे अपने को जैसा पाते हैं उसीसे सन्तुष्ट रहते हैं। हाँ, कुछ थोड़े से लोग अवश्य ऐसे होते हैं जिन्हें कुछ निश्चित अभिलाषा इस बात की होती है कि भिन्न-भिन्न दिशाओं में अपनी योग्यताओं को बढ़ावें। वे अपने से असन्तुष्ट रहते हैं और उस सम्बन्ध में कुछ करना चाहते हैं। उनके हृदय में महत्वाकांक्षा का कुछ कम्पन रहता है और अपनी कार्यक्षमता बढ़ाने की अभिलाषा। इस आकांक्षा की पूर्ति के लिये वे कभी-कभी कुछ प्रयत्न भी कर डालते हैं जैसे एक आध किताब अपने विषय पर पढ़ लेना। ऐसे व्यक्तियों की दशा निस्सन्देह आशाजनक है मगर इससे अच्छी नहीं। केवल इच्छा के अतिरिक्त कुछ और चीजों की आवश्यकता है। कोई विशेष सफलता तभी मिल सकती है जब कि प्रशंसनीय, पर साधारण और अनिश्चित इच्छा को बुद्धियुक्त और उद्देश्य पूर्ण इच्छा-शक्ति में परिणत कर लिया जाय।

७. इच्छा-शक्ति का संगठन

अब यह देखना चाहिये कि अगर हमें कोई नयी विद्या या

नया हुनर सीखना है तो उस उद्देश्य से अपनी इच्छा-शक्ति को किस प्रकार सुव्यवस्थित किया जाय। किसी भी नयी क्रिया में निपुणता प्राप्त करने लिए उसे करने का प्रयत्न तो करना ही होगा। इसलिये जो कुछ भी करना हो उसे तुरंत आरम्भ कर दीजिये। कहानी लिखिये, खड़े होकर व्याख्यान दे डालिये चाहे वह आधे ही मिनट के लिये क्यों न हो। आगामी बार जिस व्यक्ति से आपका परिचय कराया जाय उसका नाम अपनी स्मृति में जमा लेने का उद्योग कीजिये। दस लकीरें इतनी खुशखत लिख डालिये जितनी आप लिख सकें। जो कुछ भी हुनर आप सीखना चाहते हैं उसके करने में लग जाइये।

लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि आप उस काम को बार-बार दुहराना शुरु कर दीजिये। खाली दुहराना आपका उद्देश्य नहीं है। और न उससे आपकी प्रगतिपर अधिक प्रभाव ही पड़ सकता है। महत्व पूर्ण बात तो यह है कि आप हर प्रयत्न का विचार पूर्वक विश्लेपण करें जिससे इस बात का पता चले कि उस काम में सिद्धहस्त होने में आपने कितनी सफलता प्राप्त कर ली है और आप में अभी क्या-क्या दोष बाकी हैं और उन्हें किस तरह से दूर किया जा सकता है। इसी प्रकार एक वैज्ञानिक या अन्वेषक जो अपनी प्रयोगशालामें किसी नये यंत्र या नये नियम को खोज रहा है, धीरे-धीरे हर प्रयोग के बाद अपनी खोज के क्षेत्र को उत्तरोत्तर छोटा करता जाता है। सीखने में भी यही दृष्टिकोण रखना चाहिये। सीखने का हरेक काम प्रयोग और अन्वेषण की ही किया है। हर प्रयत्न के बाद आपको अपनी उन कठिनाइयों और दोषोंका पता लगाना चाहिये जो अब तक बाकी रह गये हों और उसके बाद के प्रयत्नों में उन दोषों और कठिनाइयों को दूर करने की तरकीब ढूंढ़ निकालने की कोशिश करनी चाहिए। हमें धीरे-धीरे इस बात का पता लगा लेनाचाहिये कि कौनसी बात या

बातें हैं जिनकी वजह से हम नाम भूल जाते हैं या शब्दों के गलत हिज्जे करते हैं या लोगों के सामने खड़े होकर व्याख्यान नहीं दे पाते। हमें अपने लक्ष्यको उत्तरोत्तर अधिक निश्चित और सीमित करते जाना चाहिए यहाँ तक कि हम कह सकें कि बस अगर हम इस दोषको और दूर कर लें तो वांछित हुनर हमारे काबू में आ जाय। सीखने की इच्छा शक्तिको सुव्यवस्थित करने का यही मतलब है कि अपने हर प्रयत्नके परिणामपर विचार कर और अपनी कठिनाइयों का पता लगाकर उनको धीरे-धीरे दूरकर दिया जाय।

चौथा अध्याय

सीखने की कला

—:-＊-:—

१. कुछ उपयोगी बातें

सीखने की जिस क्रिया का हम ने पिछले अध्याय में जिक्र किया है उसे आज़मायश और भूल (trial and error) कहते हैं जानवरों और मनुष्यों की शिक्षा इसी प्रकार होती है सीखने वाले के प्रारम्भिक प्रयत्न किसी वैज्ञानिक के प्रयोगों के समान होते हैं, जिनके द्वारा वह मार्ग की कठिनाईयों और अपनी दुर्बलताओं तथा त्रुटियों का पता लगा लेता है और फिर उन्हें दूर करने का उद्योग करता है। इन प्रयत्नों से वह कम से कम इतना जान लेता है कि किन बातों से उस काम में सफलता नहीं मिलती और फिर उन्हें छोड़ देता है।

चूँकि सीखना मानसिक दक्षता का आधार है, मनोवैज्ञानिकों ने बड़ी मेहनत से इस विषय का अध्ययन किया है और इस बात का पता लगाने की चेष्टा की है कि किन उपायों या युक्तियों से सीखने की क्रिया को प्रोत्साहित किया जा सकता है अर्थात् सीखने की यदि कोई उत्तम रीतियाँ हैं तो कौन सी हैं ?

२. शुरू में जल्दीबाज़ी न कीजिए

इन खोजों के फलस्वरूप मनोवैज्ञानिकों का पहिला सुझाव यह है कि प्रारम्भिक प्रयत्नों को बड़ी सुगमता से, धीरे धीरे, शान्तिपू-

चैक और बिला घबराहट के करना चाहिए। किसी बात को सीखने की शुरु की मंजिलों में जल्दबाजी या तेजी करना बिल्कुल अनुचित है भूलों का होना स्वाभाविक है पर उन से डरना या परेशान न होना चाहिए। उस समय शिक्षार्थी का लक्ष्य यह नहीं होता कि प्रवीणता से काम को कर सके, बल्कि केवल यह महसूस करना कि उस काम के करते समय कैसा लगता है। मनोविज्ञान के अनुसंधानों से यह पता चला है कि जिन लोगों ने शुरु ही में पूरी रफ्तार से काम करने का प्रयत्न किया वह शायद ही कभी उस काम में सिद्धता प्राप्त कर पाये हों, पर जिन लोगों ने शुरु में धीरे-धीरे, निश्चिन्त भाव से प्रयत्न किया और तीव्र गति से कार्य सम्पादन करने की चेष्टा नहीं की उन सबों ने अन्त में सफलता प्राप्त कर ली।

हर प्रकार के सीखने में यही नियम लागू होता है कि शुरु मे उतावलापन कदापि न करना चाहिए। गलतियाँ अनिवार्य हैं पर उन से किसी को हतोत्साह न होना चाहिये, क्योंकि उनकी प्रयोगात्मक प्रकृति को समझ लेने से उन का यथार्थ मूल्य स्पष्ट हो जाता है। पिछली त्रुटियों से यह पता चल जाता है कि कौन सी क्रियाएं न करनी चाहिये, इस से आगे का मार्ग प्रकाशित हो जाता है और सीखने के संकल्प के संगठन मे बड़ी सहायता मिलती है। अगर आप गणित या अन्य किसी शास्त्र के कठिन प्रश्नों को हल करना सीखना चाहते हैं तो जल्दी से अभ्यास की एक बड़ी सी खुराक निगल जाने कि चेष्टा न कीजिए। शुरु में थोड़े से सरल प्रश्नों को ले लीजिए और अपने दिमाग को उन से खेलने दीजिये। अति परिश्रम, ढेर सा अभ्यास, चिन्तित मन से बार बार दुहराना, तुरन्त फल प्राप्त करने की उत्कट कामना, यह सब पूर्ण सफलता के शत्रु हैं। अगर यह सीखने की क्रिया के शुरु में आ जाते हैं तो उन्नति को बिल्कुल रोक देते हैं। सीखने के

लिए अपने को समय और अवसर दीजिए। अभ्यास नहीं, प्रयोग कीजिए।

३. प्रयत्न की विधियों को बदलते रहिये

दूसरी सलाह यह है कि अपने प्रयत्न की विधियों को बदलते रहिए। जिस रीति से सीखने में उन्नति न दिखाई दे उसी पर अड़ा रहना कोई बुद्धिमानी नहीं, उस रीति को बदल कर दूसरी रीतियों को आज़माना चाहिए क्योंकि सीखने का उद्देश्य ही यह रहता है कि ऐसी रीतियों का पता लगाया जाय जो शिक्षार्थी के लिये गुणकारी सिद्ध हों। सरल अंक गणित सिखाने में भी उद्देश्य यह नहीं रहता कि विद्यार्थी को ढेर के ढेर प्रश्न लगवा दिए जायँ, बल्कि यह कि उस को थोड़े से सवाल दिये जायँ ताकि वह उन्हें हल करने की विभिन्न विधियों से प्रयोग कर के यह निश्चय कर सके कि कौन सी विधि ठीक उतरती है। जो कुछ भी सीखना हो उस में सभी वैकल्पिक विधियों को आज़माकर सब से अच्छी विधि का पता लगाना चाहिए। अगर आप अपनी व्याख्यान देने की दक्षता में उन्नति करना चाहते हैं तो दो व्याख्यानों को कभी भी एक ढंग से तैयार न कीजिए। अगर तीन व्याख्यानों को आप तीन तरह से तैयार करते हैं तो सीखने के आप को तीन अवसर मिल जाते हैं, अगर एक बार आप व्याख्यान के आरम्भ और अन्त के भागों को लिख लेते हैं और उन्हें तथा शेष भाग की रूप रेखा को रट डालते हैं, तो दूसरी बार सारे व्याख्यान को लिख कर बिना रटे हुये ही अपनी हस्तलिपि को जला डालिए और तीसरी बार अपने भाषण को मन ही मन सावधानी से सोच लीजिए और कई बार दुहरा लीजिए पर क़ागज पर कुछ भी न लिखिए। सम्भव है इन प्रयत्नों में से एकाध बिल्कुल ही असफल हो जायँ, पर महत्व की बात यह है कि इन सभी से आप के आत्म शिक्षण को सहायता

मिलेगी। अगर किसी विषय या हुनर का पंडित भी सिखाने की कोई रीति बताता है तो अपने प्रयत्नों को केवल उसी तक सीमित न रखिये, बल्कि दूसरी वैकल्पिक रीतियों को भी आजमा कर देखिये, क्योंकि आप का उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ रीति के पता लगाने का नहीं है बल्कि ऐसी रीति जो आप के लिए सर्वोत्तम हो।

४. सीखने का आधार सोचना है

सीखने के संकल्प के संगठन के सम्बन्ध में तीसरा सुझाव यह है कि करने की अपेक्षा सोचिये अधिक जो कुछ भी आप करने जा रहे हैं उसे करने से पहले मन ही मन उसका अच्छी तरह से विश्लेषण कर लीजिये, और दो चार बार काम को करने का प्रयत्न कर चुकने के उपरान्त रुक जाइये और फिर सोचिये कि कितनी सफलता आपने प्राप्त कर ली है, और किन कठिनाइयों पर विजय पाना बाकी है और उन्हें किस प्रकार दूर किया जा सकता है। किसी विद्या या हुनर में अगर आप प्रवीण बनना चाहते हैं, जिससे कि आप उसे हर परिस्थिति मे प्रयोग कर सकें तो उन सामान्य नियमों को सदा खोजते रहिये जो उसमें लागू होते हैं। जो कुछ अनुभव आपको प्राप्त हो उसके भीतर छिपे हुये सिद्धान्त को ढूंढ निकालिए। जेसा हम पहले बता चुके हैं, शिक्षा इस बात पर अवलम्बित नहीं कि अतुल मात्रा मे अभ्यास किया जाय या सीखने के प्रयत्न को निरंतर दुहराया जाय। बल्कि सीखने की प्रगति तो इस बात पर निर्भर है कि अभ्यास से, अथवा हर बार के दुहराने से, आप कितना सीखते हैं। ऐसे थोड़े से प्रयत्न और अनुभव, जिनका आप बारीकी से विश्लेषण करते हैं और जिनसे आप अपनी सफलता तथा असफलता दोनों ही के कारणों को जानने की कोशिश करते हैं, आपकी उन्नति में दस या सौ गुने

विला सोचे समझे किये गये प्रयत्नों की अपेक्षा कहीं अधिक सहायक होते हैं।

५. क्रियाओं को मन ही मन करना

किसी हुनर या विद्या के सीखने में बड़ी सहायता इस बात से मिल सकती है कि शिक्षार्थी मन ही मन यह सोचे कि वह उस काम से सम्बन्ध रखने वाली विभिन्न क्रियाओं को किस भांति करेगा और फिर उन क्रियाओं को हाथ पैर द्वारा यथार्थ में करने के बजाय, विचारों द्वारा मन के भीतर ही करे। जैसे मोटर गाड़ी चलाना सीखने में वह मन ही मन गियरों, (Gears) ब्रेक और थ्रोटल (Throttle) के स्थानों का स्मरण कर लेता है, (Ignition) के स्विच को बन्द करता है, विभिन्न लीवर्स को समायोजन, (Adjust) "एडजस्ट" करता है, गियरों को बदलता है, गाड़ी को कोनों पर मोड़ता है, रोकता है, पीछे लौटाता है, इत्यादि। यही नहीं वह संकटों में तत्काल काम करने वाली योग्यता भी मन ही मन संकटों की नकल करके प्राप्त कर लेता है। अगर उसके मोटर के सामने अकस्मात् एक बच्चा ऐसी जगह पर दौड़ता हुआ आ जाय जहां सड़क के किनारे पर एक गहरी नाली है, तो वह किस प्रकार बच्चे को बचायेगा ? अगर वह गाड़ी में अकेले हो या उसके साथ उसके कुटुम्ब के लोग भी हों तो क्या दोनों अवस्थाओं में वह एक सी ही कारखाई करेगा ? अगर बजाय गहरी नाली में गिराने के उसको एक दूसरी गाड़ी या स्कूल बस या सड़क पर चलने वालों के एक झुंड से टक्कर लगाने का सवाल हो तो वह क्या करेगा ? संकट के समय जो कोई मनुष्य उचित कारखाई बिजली के समान तेजी और सफाई से कर डालता है तो हम उसके साहस और दक्षता पर आश्चर्य करते हैं, पर उसने इन गुणों को कैसे प्राप्त किया ? सीख कर, पहले से मन ही मन उनके लिए तैयारी करके।

इसी प्रकार ताश खेलना सीखने में मनुष्य अपने हाथ की कल्पित बाज़ी को लेकर उससे मन ही मन खेलता है और विभिन्न चालों के फलों की कल्पना करता है। मकान बनाने में वह पहले मन में उसका एक नकशा बना लेता है, और फिर विभिन्न दृष्टि कोणों से उसके गुणों और दोषों की कल्पना करता है। इन सब क्रियाओं में वह यथार्थ की बजाय मन ही मन कार्य सम्पादन का प्रयत्न करता है, अपनी त्रुटियों का पता लगाता है, और अपनी सफलताओं का निरीक्षण करता है। ऐसा करने से शक्ति और समय की बड़ी बचत होती है और शिक्षा में बड़ी सहायता मिलती है।

६. अभ्यास का वितरण

पांचवीं सलाह यह है कि अगर आप कोई हुनर सीख रहे हैं, *जैसे टाइप करना या मोटर चलाना या कोई खेल खेलना या पढ़ाई* की कोई चीज़ कण्ठस्थ करना, तो थोड़ा थोड़ा सा अभ्यास बहुत दिनों तक कीजिए। इस प्रकार आप अधिक उन्नति कर सकेंगे। एक बैठक में देर तक अभ्यास करना कड़ा परिश्रम अवश्य है पर लाभदायक नहीं, क्योंकि इससे प्रगति में सहायता नहीं मिलती बल्कि बाधा ही पड़ती है। यह देखा गया है कि उपयुक्त समय पर थोड़ा सा विश्राम कर लेने से मजदूरों की कार्य क्षमता कई गुना बढ़ जाती है। इसी प्रकार थोड़ी थोड़ी देर बाद उचित समय तक आराम करके कोई मनुष्य भी अपनी कार्य क्षमता में वृद्धि कर सकता है। रुमालों को तह करने वाले कर्मचारी जो हर पांच मिनट काम करने के बाद एक मिनट सुस्ता लेते हैं उन लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक काम पूरा कर डालते हैं जो लगातार काम में लगे रहते हैं। दिमागी काम करने वाला जो हर आध घन्टे काम कर लेने के बाद थोड़ा सा टहल लेता है या अपनी कुरसी ही पर आराम से बैठ कर और इधर उधर निगाह डाल कर तीन चार मिनट सुस्ता लेता है, वह

कहीं अधिक काम कर लेता है बनिस्बत उस अवस्था के जब वह आधा दिन लगातार काम करता रहे।

हाँ, इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि विश्राम का समय बहुत लम्बा न हो, क्योंकि ऐसा करने से समय नष्ट होता है। पर विश्राम के कालों को बहुत छोटा भी न रखना चाहिए, नहीं तो पूरा आराम न मिलेगा, और न कार्य क्षमता अपनी चरम सीमा तक पहुँच सकेगी। हर व्यक्ति को प्रयोग करके यह पता लगा लेना चाहिए कि उसके लिए दिन भर में काम और विश्राम का कौन सा अनुपात सबसे गुणकारी है।

आरम्भ काल की त्रुटियों के समान अवकाश के समय को भी व्यर्थ न समझना चाहिए, क्योंकि मनुष्य की बहुत सी शिक्षा या शिक्षा की पुष्टि उसके बिल्कुल अनजान में उस समय होती है जब कि वह अभ्यास नहीं कर रहा होता है। इस प्रकार की अज्ञात शिक्षा को प्रोत्साहित करने का एक बड़ा अच्छा तरीका यह है कि अभ्यास के कालों के बीच में हुनर या विद्या के सम्बन्ध में सोचा जाय, ऐसा करने से शिक्षार्थी के मन में बड़ी आसानी से नये विचार उठ सकते हैं और उसे नई युक्तियां सूझ सकती हैं।

इसके अतिरिक्त यह भी याद रहना चाहिये कि सीखने की क्रिया एक इमारत बनाने के सदृश नहीं है जहां ईंट पर ईंट चुनने के साथ, उन्नति होती दिखाई देती है। यह तो एक यन्त्र आविष्कार करने के समान है, जहाँ कार्य की प्रगति सदा दृष्टिगोचर नहीं होती, जहां पर सैकड़ों प्रयत्न देखने में, न कि वास्तव में, विफल हो सकते हैं और फिर उन्हीं के कारण सफलता का मार्ग अकस्मात प्रकाशित हो सकता है। सच तो यह है कि शिक्षा का एक बहुत बड़ा भाग अज्ञात रूप से ही होता है।

७. व्यर्थ क्रियाओं को लुप्त करना

छटी बात जो ध्यान में रखनी चाहिये वह यह है कि किसी भी प्रकार की दक्षता मे उन्नति करने का अर्थ अधिकांशतः यही होता है कि न केवल त्रुटियों को ठीक कर लिया जाय वल्कि व्यर्थ की क्रियाओं को भी दूर कर दिया जाय या निकाल दिया जाय नौसिखिया बहुत सी व्यर्थ की हरकतें (Movements) और क्रियाएँ करता है जिन से काम भोंडा होता है, उसमें देर लगता है और शक्ति का ह्रास होता है। ज्यों ज्यों उसका निपुणता बढ़ता जाता है यह बेकार को क्रियाएँ कम होती जाती हैं। जब विद्यार्थी लिखना सीखना शुरु करता है तो लिखते समय न केवल उसका उँगलियाँ बल्कि सारा हाथ और बाँह हिलते हैं, उसका आँखें घूमता हैं, सारा शरीर तन जाता है और वह कलम को इतने जोर से पकड़ता है मानों वह उसके हाथ में से उडकर भाग जाने की कोशिश कर रहा हो। कुछ समय बाद वह लिखते समय अपने शरीर को शांत और स्थिर रख सकता है और इसके आगे उसकी उन्नति तभी होती है जब वह अपने कलम और बाह का अनुपयोगी हरकतों को दूर कर देता है। केवल अभ्यास से उसका लिखावट में इतना सुधार नहीं होता जितना विचार द्वारा उपयोगी और सरल हरकतों का ढूढ़ निकालने से।

शीघ्र-लिपि (शार्टहैंड) का उपयोगिता इस बात से नहीं कि उससे कागज का बचत होता है, क्योंकि वास्तव में उससे कागज की बचत होती भी नहीं बल्कि उसके द्वारा अनेकों स्पन्दनों (Movements) का एक शब्द घट कर एक या दो स्पन्दनों का रह जाता है जिससे शक्ति और समय दोनों की बड़ी बचत होती है।

फूहड सोचने वाला बहुत चक्करदार रास्तों से घूमता फिरता अपने मनोवाञ्छित विचार या निर्णय पर पहुँच पाता है, जब कि एक निपुण विचारक करीब करीब सीधी रेखा के से मार्ग का अवलम्बन करके अपने इच्छित फल को प्राप्त कर लेता है।

आपने अपने दैनिक जीवन के कारोबार और विचार में से किस हद तक व्यर्थ की बातों को निकाल दिया है ? सवेरे दफ्तर जाने की जल्दी में आप कितना समय इस कारण खो देते हैं कि आप अपने कपडे लत्तों और सिंगार की सामग्री को ऐसी जगहों पर नहीं रखते जहाँ से वह कम से कम हरकतें करके उठाई जा सकें ? दिन भर में आप व्यर्थ के कितने स्पन्दन इसलिये करते हैं कि आपने अपने कागज, कलम, शब्द-कोष इत्यादि अपनी पहुँच के बाहर या गलत जगहों पर, या अनियमित ढग से, रख छोडे हैं ?

निपुणता तथा कार्य क्षमता बढाने के लिए यह परमावश्यक है कि आपको जो काम करना हो उसे सरल से सरल ढग से और कम से कम हरकतें और परिश्रम करके करना सीखें। अपनी कार्य प्रणाली में शक्ति की मितव्ययता के उद्देश्य से, सदा सुधार करने का प्रयत्न करते रहिए इस से आपकी कार्य क्षमता में बडी वृद्धि होगी।

८. पूरे हुनर को एक साथ सीखना

सीखने के सम्बन्ध में सातवीं सलाह यह है कि जहा तक हो सके किसी कला या हुनर को खडो में नहीं बल्कि पूरा का पूरा ही सीखने का प्रयत्न करना चाहिए। अगर कोई कविता याद करनी हो तो उसे एक एक छन्द करके नहीं बल्कि कुल की कुल पढ कर याद करना चाहिए। अगर कोई भाषा सीखना हो तो उसकी सर्वश्रेष्ठ विधि यह है कि जहाँ वह भाषा बोली जाती है वहाँ जाकर कुछ महीने रहें उसी भाषा में बातचीत और अपना सब कारोबार करना

प्रारम्भ कर दे, न कि यह कि पहले कुछ शब्द सीखे, फिर व्याकरण, फिर वाक्य बनाना इत्यादि यही नियम और प्रकार के सीखने मे भी लागू होता है। हाँ यह जरूर है कि अगर वह हुनर जो आप सीख रहे हैं बिल्कुल नया, अजीब और आपके पूर्व अनुभव से बिल्कुल विभिन्न है, तो उसे एक एक खंड करके ही सीखना उचित होगा। इसका एक उदाहरण, तार सीखना है जिसमें शब्दों से पहले अक्षरों को सीख लेना आवश्यक है। टाइप राइटिंग एक बीच का कला है क्योंकि शब्दो और वाक्यों को आरम्भ करने से पहले यह जरूरी है कि अक्षरो और चिन्हों के स्थानों को भली भांति याद कर लिया जाय और अक्षरों का अलग अलग खूब अभ्यास कर लिया जाय। पर यहाँ पर अक्षरों वाली मंजिल, तार की अपेक्षा बहुत आसान और छोटी होती है और शब्दों तथा वाक्यो का प्रयत्न बहुत ही शीघ्र आरम्भ कर देना चाहिये। और अधिकांश प्रकार के सीखने में तो अक्षरों शब्दों और वाक्यों की ३ अलग अलग मंजिलें दिखाई देती ही नहीं और न उनके आधार पर आपके आत्म शिक्षण का संचालन ही होना चाहिये।

जब कुल हुनर या काम के सीखने में कुछ प्रगति हो जाय तो उसके टुकड़े करके उन पर अलग अलग अभ्यास करना चाहिये। जैसे किसी भाषा के सीखने में जब बहुत सरल प्रकरणों को सामान्य रूप से पढ़ और समझ लेने का अभ्यास हो जाय तो थोड़ा सा अलग प्रयास व्याकरण और शब्द भंडार के हेतु भी करना चाहिये।

९. कठिनाइयों में अभ्यास

आठवीं सलाह यह है कि जब प्रवीणता अपनी अन्तिम अवस्था के निकट पहुँचने लगे तो अभ्यास की प्रणाली और

वितरण में परिवर्तन कर देना चाहिये। प्रवीण व्यक्ति वही है जो हर प्रकार की परिस्थितियों में दक्षता से काम कर सके। इस लिये शिक्षा की आखिरी मंजिलों में शिक्षार्थी को चाहिये कि कठिनाइयों में काम करने का अभ्यास करें। कभी कभी देर तक कड़ा परिश्रम करे, न केवल देर तक और दूर तक बल्कि तीव्रगति से चलने का प्रयत्न करे, ऐसी परिस्थितियों में अपने को डाल कर काम करें जहाँ शोरगुल तथा चित्त भटकाने वाली अन्य बाधाएँ हों। यदि किसी काव्य को याद कर रहा हो तो उसे बीच से जुबानी सुनाने लगे जब उसे सुना रहा हो तो किसी दूसरे आदमी से कह दे कि वह कोई दूसरी चीज़ चिल्ला चिल्लाकर पढ़ने लगे जिससे शिक्षार्थी का ध्यान बट जाय। शिक्षा का आरम्भ बहुत सरल कामों से होना चाहिये, पर उसके अन्त में कठिन से कठिन परिस्थितियों में निपुणता को स्थिर रखने का प्रयत्न करना चाहिये। अगर किसी चीज के सीखने में कोई लाभ है तो निस्सन्देह ही उस चीज को अच्छी तरह से सीखना चाहिये और आपके लिये वही विद्या या हुनर उपयोगी सिद्ध हो सकता है जिसे आप हरेक परिस्थिति में दक्षता से प्रयोग कर सकें।

१०. डाट फटकार की बजाय प्रशंसा और प्रोत्साहन

सीखने की किसी भी क्रिया में अपना उत्साह कभी भंग न होने दीजिये, और न किसी दूसरे से ही अपने को निरुत्साहित होने दीजिये। यदि आप किसी दूसरे व्यक्ति को सिखा रहे हों तो उसे कदापि उत्साह हीन न कीजिये। यह बिल्कुल निश्चित रूप से सिद्ध हो चुका है कि यदि लोगों को उनकी सफलताएं बताई जाँय और उनके लिये उनकी तारीफ की जाय तो वे कहीं अधिक तेजी से तरक्की करते हैं, बनिस्बत उस हालत के जबकि उनका ध्यान उनकी त्रुटियों और दुर्बलताओं की ओर आकर्षित किया जाय और उनके

लिये उन्हें बुरा भला कहा जाय। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक सत्य है। सीखने की क्रिया के बारे में हमें जिन बातों का ठीक ठीक पता है उन्हीं में से यह एक है। उत्साह हीन करना, डाटना, फटकारना निन्दा करना या सजा देना ये सब बड़े हानिकर हैं। प्रशंसा और प्रोत्साहन से मनुष्य की मानसिक शक्तियाँ, उसकी इच्छा शक्ति, उसका चरित्र और उसका व्यक्तित्व विकसित और प्रफुल्लित होते हैं। इसके विपरीत, दोषारोपण, हर भूलचूक के लिये बुरा भला कहना या निन्दा करना डाट डपट कर निरुत्साहित करना, यह सब शिक्षार्थी की उन्नति के शत्रु हैं। इनसे उसकी मानसिक शक्तियाँ और व्यक्तित्व संकुचित और दुर्बल हो जाते हैं। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हमारे देश के घरों और विद्यालयों में शाबाशी, तारीफ और प्रोत्साहन का मूल्य बिल्कुल नहीं समझा जाता और उनकी बजाय डराने, धमकाने निन्दा करने की ही भरमार रहती है। इस बात को अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि सिखाने या सीखने में हमारा प्रयोजन यह रहता है कि एक सुबोध, दृढ़ और अन्वेषक इच्छा शक्ति पैदा की जाय न कि अपने या दूसरों को यह महसूस कराना कि वे नितान्त बुद्धू हैं।

११. प्रतियोगिता और आत्म-प्रतियोगिता

सीखने की हर क्रिया में समय समय पर अपने आपकी दूसरों से तुलना करते रहिये। प्रतियोगिता से सहायता मिलती है बशर्ते कि इसमें घृणा, डाह और ईर्ष्या का कोई अंश न हो। देखिये कि और लोग उसी काम को कितनी अच्छी तरह से कर रहे हैं। ऐसा करने से आपको अपनी सफलता के माप का भान होगा। उससे आपको यह पता चलेगा कि सुधार की कितनी गुंजायश है और सुधार करने की कुछ युक्तियाँ भी मालूम हो जायँगी।

न केवल दूसरों से वरन् अपने आपमें भी प्रतियोगिता करने में शिक्षार्थी को बड़ा उत्तेजन मिल सकता है शिक्षा और व्यवसाय दोनों ही के क्षेत्रों में आत्म प्रतियोगिता की उपयोगिता प्रमाणित हो चुकी है। इसमें व्यक्ति अपने ही पिछले दिन या पिछले सप्ताह के कार्य फल से आगे बढ़ जाने का प्रयत्न करता है। दो बच्चों या दो कर्मचारियों के बीच प्रतियोगिता की अपेक्षा आत्म-प्रतियोगिता कई विचारों से अधिक गुणकारी है, क्योंकि इससे चाहे तेज चाहे मन्द बुद्धि कर्मचारी या शिक्षार्थी हो सभी को उपयुक्त उकसाव मिल जाता है और दूसरों से प्रतियोगिता करने से जो निराशा या उत्साहहीनता का भाव पैदा हो सकता है, उसका कोई डर आत्म-प्रतियोगिता में नहीं रहता। सीखने में सफलता प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि एक लक्ष्य स्थापित कर लिया जाय। लक्ष्य ही इच्छा शक्ति को निर्दिष्ट और वास्तविक बनाता है प्रतियोगिता अथवा आत्म प्रतियोगिता में मनुष्य के सामने एक लक्ष्य सदा बना रहता है जो उसे और उन्नति करने के लिये प्रेरित करता रहता है। एक सन्निकट उद्देश्य के सामने होने से मनुष्य की समस्त शक्तियाँ जाग्रत और क्रियाशील हो जाती हैं। एक सुदूर ध्येय इतना प्रभावशाली नहीं होता।

१२. अपनी परीक्षा करते रहिये

थोड़े थोड़े समय बाद अपनी परीक्षा करते रहिये। अगर कोई किताब पढ़ रहे हैं, जिस पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं, तो सब बात भाग्य ही पर न छोड़ दीजिए बल्कि बीस पचीस प्रश्न सोच लीजिये और फिर उनके उत्तर लिख डालिए। अगर आप टाइप राइटर पर अपनी गति बढ़ाना चाहते हों तो थोड़े थोड़े दिनों के बाद अपने किसी मित्र से कहिए कि घड़ी द्वारा आपकी गति का पता लगा दे कितने ही प्रयोगों से यह बात सिद्ध हो चुकी है

कि सीखने की इच्छा-शक्ति के सुव्यवस्थित करने और उन्नति प्राप्त करने में अपने उद्योग के फलों की जानकारी एक अत्यन्त ही मूल्यवान साधन है। इससे जो तरक्की हो चुकी है उसका और आगे की तरक्की के मार्ग का पता चलता है। फलों की जानकारी से विद्यार्थी को हर समय एक सन्निकट और निश्चित उद्देश्य मिलता रहता है। मनोवैज्ञानिकों ने कुछ प्रयोग ऐसे किए जिनमें शिक्षार्थी को उसके कार्य के फल नहीं बताये गए पर उससे केवल इतना ही कहा गया कि जितना भी हो सके करें। दूसरे प्रयोगों में शिक्षार्थियों ने अपने उद्योग के फल देखे और साथ ही साथ उस चिन्ह को भी देखा जो शिक्षक बतौर उनके ध्येय के बनाता जाता था अगर वे उस चिन्ह तक पहुँच जाते तो अपनी पिछली सफलता से आगे बढ़ जाते। प्रयोगों से यह नतीजा निकला कि बाद वाली अवस्था में काम करने वाले २० से लेकर ४० प्रतिशत तक अधिक काम कर सके, और इतना अधिक काम कर लेने पर भी उन्हें थोड़ा सा ही अधिक श्रम जान पड़ा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि दृष्टि के सामने एक ध्येय होने से और कार्य फलों का तुरन्त पता चल जाने से शिक्षा की क्रिया को बड़ा उत्तेजन मिलता है।

पाँचवाँ अध्याय

उद्देश्य, उत्साह और रुचि

१. उद्देश्य की आवश्यकता

हर मनुष्य को एक निश्चित उद्देश्य, एक सचेत आकांक्षा की आवश्यकता रहती है। हर जहाज को एक दिशासूचक यन्त्र और हर देशाटन करने वाले को एक नकशा रखना पड़ता है। इनके बिना शायद दोनों ही इधर उधर भटकें और बहुत सा समय खो देने के बाद फिर अपनी रवानगी की जगह पर ही आ पहुँचे। जहाँ भी प्रगति का सवाल है वहाँ एक लक्ष्य का होना अनिवार्य है।

ऐसी मनोकामना जिसे कृतार्थ करने के लिये एक योजना बना ली जाय, जीवन को एक दिशा मे लगाती है और दिमागी ताकतों को बेकार खर्च करने की जगह उम्दगी और किफ़ायत से इस्तेमाल करने में मदद देती है। इसकी प्रेरणा के कारण हम ऐसी कठिनाई के मौकों पर भी प्रयत्न में डटे रहते हैं जब कि हम किसी उद्देश्य या योजना के न होने की दशा में निस्सन्देह हो कन्धा डाल कर बैठ जाते। समय समय पर मील के पत्थरों को पीछे छूटते हुए देखने से पथिक को अपनी प्रगति का अनुमान हो जाता है जिससे उसका उत्साह बढ़ जाता है। उनको बिना देखे हुए कभी कभी उसे ऐसा जान पड़ता है कि वह काफी तेजी से आगे नहीं बढ़ रहा है। एक कहावत है—जो नाविक अपनी यात्रा के अन्तिम बन्दरगाह को नहीं जानता उसके अनुकूल हवा कभी नहीं बहती।

जब आप को यही पता नहीं कि आप क्या चाहते हैं तो आप उसके लिए प्रयत्न ही क्या करेंगे और उस अज्ञात वस्तु को भला प्राप्त कैसे कर सकते हैं ?

२. मनोभावों का प्रभाव

एक बड़े महत्व की जानने योग्य बात यह है कि दृश्य संसार में प्रकट होने से पहले हर चीज़ अदृश्य अथवा मानसिक संसार में प्रकट होती है। यदि हम किसी पदार्थ को अपनी मानसिक सृष्टि में अच्छी तरह निर्माण कर लेते हैं तो प्रत्यक्ष जगत में भी हम उसे अच्छी तरह बना सकेंगे। दृश्य संसार में कोई चीज़ तभी बन सकती है जब पहले उसकी सृष्टि मानसिक संसार में कर ली जाय। कल्पना जगत में उत्पन्न होने के उपरान्त, बल्कि उसके कारण और उसकी सहायता से ही, नये पदार्थों का प्रादुर्भाव बाह्य जगत में होता है। मन में एक निश्चित ध्येय निर्दिष्ट कर लेने से उसकी प्राप्ति में एक और प्रकार से भी बड़ी सहायता मिलती है। ज्यों ही आप अपने मन में एक स्पष्ट उद्देश्य निर्धारित कर लेते हैं और उसकी पूर्ति के लिए हृदय से कामना और आशा करने लगते हैं, त्यों ही आप अपने इष्ट के साथ एक परोक्ष पर प्रबल सम्बन्ध जोड़ लेते हैं। आपके मनोभाव, आपके आशापूर्ण विचार, आपकी महत्वाकांक्षायें, एक चुम्बक का काम करती हैं और अपने समान पदार्थों को आकर्षित करती हैं—वे आपके उद्देश्य की सिद्धि और सफलता को अपनी ओर खींच लाती हैं। मनुष्य का भाग्य उसके मानस ही में छिपा रहता है।

आप जो भी उद्देश्य निर्दिष्ट करें उस पर अपनी कामना, अपने विचार, अपने मनोभाव और अपने उद्योग को केन्द्रित कीजिए जिससे वह एक सबल चुम्बक की तरह उन तमाम पदार्थों का ध्रुवीकरण कर दे जिनसे आपका व्यवहार रहता है।

३. विचारों का ध्रुवीकरण

(Polarisation of thought)

विद्यार्थियों के उस प्रयोग से प्रायः सभी परिचित होंगे जिसमें एक परखनली को लोहे के बुरादे से भरकर चुम्बक बनाते हैं। नली के मुख को काग से बन्द करके उसे मेज के ऊपर लिटा देते हैं। जब उसके ऊपर एक चुम्बक को धीरे धीरे फेरते हैं, तो लोहे के कण सब उठकर एक दिशा में हो जाते हैं जिससे वह सब के सब एक साथ काम करने वाले छोटे छोटे चुम्बक बन जाते हैं। तब प्रयोग करने से पता चलता है कि कुल परखनली स्वयं एक चुम्बक बन गई है। पहले सब टुकड़े तितर-बितर पड़े थे; उस अवस्था में यदि वे सब चुम्बक होते भी तो भिन्न दिशाओं में होने के कारण, एक दूसरे के प्रभाव को मिटा डालते; पर बाद में जब सब एक दिशा में स्थित हो जाते हैं तब वे एक प्रबल चुम्बक का काम करने लगते हैं और उनके समीप यदि कोई नरम लोहे का टुकड़ा लाया जाता है तो उस पर भी प्रभाव डालकर उसे चुम्बक बना देते हैं। ठीक इसी प्रकार यदि हमारे विचार मस्तिष्क में यत्र तत्र बिखरे पड़े हों और उनका झुकाव अलग अलग दिशाओं में हो, तो वे एक दूसरे के प्रभाव को नष्ट कर देंगे।

इसलिए यदि आप अपने जीवन में, अपनी ईश्वर प्रदत्त शक्तियों से, पूरा पूरा फायदा उठाना चाहते हों तो मानवीय उद्योग के किसी रोचक क्षेत्र को चुन लें, उसमें सिद्धि और सफलता प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा का एक स्थायी भाव अपने मन में स्थापित कर लें और उसीके अनुकूल अपने समस्त जीवन का—अपने कर्म, विचार और भावना का—ध्रुवीकरण कर लें। यह देशसेवा, विज्ञान ईश्वर भक्ति, दर्शन या किसी और विषय सम्बन्धी हो सकता है; या यह भाव एक कलाकार, वैज्ञानिक, इंजीनियर, कवि,

दार्शनिक या सार्वजनिक कार्यकर्त्ता का हो सकता है—यह चुनाव करना बिल्कुल आप ही पर निर्भर है। पर आपको कोई न कोई प्रिय उद्देश्य अवश्य ही चुन लेना चाहिये और उसी के अनुरूप अपने समस्त जीवन का ध्रुवीकरण करना चाहिए।

इसका यह अर्थ नहीं कि आपके विचार या कार्य की तेजी कम हो जायगी या उसका स्वतंत्र प्रवाह धीमा पड जायगा। इसका यह भी मतलब नहीं कि आप किसी बन या गुफा में जाकर एकान्त वास करने लगेंगे और मानवीय सहानुभूति एवम् अनुराग का परित्याग कर देंगे। और न इसका यह अर्थ है कि आप जीवन के प्रति उदासीन हो जायें और गर्मियों मे मरुस्थल की सूखी सरिता की भांति आपकी धमनियों में उष्ण रक्त का संचार बन्द हो जाय। हाँ इसका यह अर्थ अवश्य है कि आपका सारा जीवन एक उद्देश्य से उद्भासित हो जाता है आपकी सोती हुई शक्तियाँ जाग जाती हैं, और जो शक्तियाँ पहले बिखरी हुई पडी थीं वह एकत्र होकर परस्पर सहयोग से काम करने लगती हैं। इसका अर्थ है परिवर्द्धित विचार और उद्योग, पहले से अधिक विस्तृत सहानुभूति, क्योंकि तब आप सदा इस खोज में रहेंगे कि हर चीज और हर अनुभव को अपने महान् उद्देश्य के लिए प्रयोग करें।

बडे आश्चर्य की बात है कि कितने लोग ऐसे हैं जो कोई निश्चित उद्देश्य या आकांक्षा नहीं रखते, बल्कि अपनी जिन्दगी के दिन बिना किसी योजना के व्यतीत करते रहते हैं। अपने चारो ओर हम ऐसे युवक और युवतियों को देखते हैं जो निरुद्देश्य होकर, बिना पतवार या बन्दरगाह के, जीवन के समुद्र पर इधर-उधर बहते रहते हैं और अपने समय को व्यर्थ खोते रहते हैं, क्योंकि जो कुछ भी वे करते हैं उसमें न कोई गम्भीर प्रयोजन रहता है न

कोई नियम। वे तो केवल ज्वार भाटे के संग इधर उधर बहते रहते हैं। यदि उनमें से किसी से पूछा जाय कि तुम्हारा क्या करने का इरादा है, तुम्हारी क्या महत्त्वाकांक्षा है, तो यही उत्तर मिलेगा कि हमें ठीक ठीक पता नहीं, हम तो केवल इस अवसर की प्रतीक्षा में हैं कि कोई काम शुरू करें।

४. उद्देश्य के तीन तत्व

इंजीनियरिङ्ग जगत में जो स्थान यांत्रिक शक्ति का है वही स्थान मानसिक विचार और कार्य के क्षेत्र में उस संवेग जनित उफनाव का है जो एक प्रबल उद्देश्य, अभिरुचि या महत्वाकाँक्षा से उत्पन्न होता है। जिस प्रकार भाप जलशक्ति या विद्युत शक्ति रेलगाड़ियाँ खींचती हैं और ऐसे ही अनेक उपयोगी कार्य करती है, उसी प्रकार निश्चित उद्देश्यों की ओर लगाई हुई महत्त्वकाँक्षा ही मनुष्य के सब प्रयास की मूल शक्ति है। इस उपमाको हम एक कदम और भी आगे बढ़ा सकते हैं। यांत्रिक शक्ति को अभिव्यक्त करने वाले तीन मुख्य तत्व हैं—उसका परिमाण, वह समय जितनी देर तक व्यवहार में लाई जाती है और वह दिशा जिस ओर वह लगाई गई है। इसी प्रकार उद्देश्य या रुचि के भी तीन मुख्य अंश हैं उसकी तीव्रता, अवधि, और दिशा या लक्ष्य। यदि यह तीनों अंश एक दूसरे के अनुकूल न हों तो उद्देश्य निष्फल हो जाएगा। अगर एक उद्देश्य या अभिलाषा की तेजी दुर्बल या मन्द है तो उसका होना न होना बराबर है—ऐसा मनुष्य तो आशाविहीन, सुस्त और निरुत्साह होगा। इसी तरह यदि एक उद्देश्य में हमारा अनुराग प्रबल किन्तु क्षणिक या अस्थायी हो तो भी हम उससे विशेष लाभ नहीं उठा सकते, क्योंकि उत्तेजना के वायुमंडल में उठने वाले, अल्पकालीन उन्माद के बलवान झोकों से भी भला कितनी उन्नति हो सकती है? एक आवेग-

शील अस्थिर मनवाला व्यक्ति बहुत ही सरल या साधारण कार्यों को तो शायद सफलता से कर सके, पर जरा भी कठिनाई वाले काम को पूरा करने की उससे शायद ही कोई आशा की जा सकती है, क्योंकि साधारणतः अध्यवसाय सफलताकी एक आवश्यक शर्त है। उद्देश्योंको बार बार बदलते रहने से भी शक्ति का ह्रास होता है। क्योंकि ऐसा करनेसे किसी उद्देश्यमें भी सफलता या दक्षता प्राप्त नहीं हो सकती।

उद्देश्य का तीसरा अंश अथवा लक्ष्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। एक ऐसा मनुष्य भी जिसकी रुचि सबल और स्थायी पर सर्वतोन्मुखी है कुछ नहीं कर सकता। सफलताके लिए तो रुचिका विशेषोन्मुख होना और किसी विशिष्ट दिशामें लक्षित होना आवश्यक है। बहुत से उद्देश्य रखने से शक्ति का उतना ही ह्रास होता है जितना उद्देश्य को बार बार बदलते रहने से। उन्नति तो तभी हो सकती है जब रुचि से उद्भूत शक्तियोंको हम सावधानी से चुने हुए, थोड़े से लक्ष्यों पर केन्द्रित करें और उन्हीं पर उस समय तक जमाये रक्खें जब तक सफलता न मिल जाय।

अपनी शक्तियों का अधिकसे अधिक उपयोग करनेके लिए यह आवश्यक है कि हम अपने जीवनका एक उद्देश्य निर्धारित करलें, परन्तु यह उद्देश्य सामान्य नहीं वरन विशिष्ट होना चाहिए। हर काम में सफल होने की अभिलाषा को, यद्यपि ऐसी अभिलाषा अत्यन्त ही सराहनीय है, उद्देश्य नहीं कह सकते, बल्कि उद्देश्य कहते हैं किसी विशेष इष्ट को प्राप्त करने के इरादे को। इच्छामात्र को उद्देश्य न समझना चाहिए। उद्देश्य में एक विशेष लक्ष्य का होना आवश्यक है।

एक उद्देश्य का अर्थ है कि आप एक विशेष अभिलाषा या उमंग से प्रेरित हैं। आपका उद्देश्य कुछ भी हो सकता है—एक

उपयोगी आविष्कार करना, उत्कृष्ट कविता लिखना, नामी कलाकार बनना या अपने कारोबार में ही ऊँचा पद प्राप्त करना इत्यादि। यह आवश्यक नहीं कि आपका उद्देश्य बहुत ऊँचा हो या सर्व साधारण की पहुँच के बाहर हो—पर उद्देश्य स्पष्ट और निश्चित होना चाहिए।

५. अवकाश के समय का सदुपयोग कीजिये

दुनिया में अधिकांश मनुष्यों को जीविकोपार्जन के लिए कुछ न कुछ काम धन्धा करना पड़ता है। पर ऐसे भाग्यशाली व्यक्ति शायद थोड़े ही होंगे जो अपना कारोबार स्वतंत्रतापूर्वक अपनी रुचि के अनुसार निर्धारित कर सकें। अधिकांश लोगों को परिस्थितियों से विवश होकर रोजी कमाने के लिए ऐसा काम करना पड़ता है जिसमें उनकी रुचि नहीं है। इसमें उनकी शक्तियाँ पूर्ण रूप से प्रयत्नशील नहीं होतीं और न कोई उन्नति ही कर पाता है। दूसरे लोग हैं जिनका धन्धा स्वयं रुचि कर है या उद्योग करते रहने से और समय बीत जाने से रुचिकर हो गया है, ऐसे लोगों की कुछ शक्तियाँ उनके काम में पूर्णतः क्रियाशील हो जाती हैं। फिर भी इस मुख्य व्यवसाय का काम ऐसे ढर्रे पर पड़ जाती है कि उसमें व्यक्ति की बहुत थोड़ी सी ही शक्तियाँ प्रयोग में आती हैं, उनका अधिकांश भाग निकम्मा व सुपुप्त पड़ा रहता है। अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिए, ईश्वर की दी हुई शक्तियों को अधिक से अधिक उपयोग में लाने के लिए और उनको विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि हर मनुष्य अपने लिए अपनी स्वेच्छा से एक रोचक उद्देश्य चुन ले और उसकी प्राप्ति के लिए अवकाश की घड़ियों का उपयोग तत्परता से करें। अगर आप गौर से सोचेंगे तो देखेंगे कि फुरसत का समय ही आपके जीवन का सब से मूल्यवान भाग है—यही वह भाग

है जो आपके वश में है, जिसे आप अपना कह सकते हैं, इसे आप धन, विद्वत्ता, लोक सेवा अथवा कीर्ति में, जैसी आपकी कामना, हो परिवर्तित कर सकते हैं। महापुरुषों की जीवनियाँ इस बात के उज्ज्वल उदाहरण हैं। गैलीलियो डाक्टरी करता था, पर हम उसे डाक्टर की हैसियत से नहीं बल्कि उन आविष्कारों के लिए याद करते हैं जो उसने बचे हुए क्षणों का उपयोग करके किए थे। माइकल फेरेडे किताबों की जिल्द बाँधा करता था। साथ ही अपने बचत के समय को वैज्ञानिक प्रयोग करने में लगाया करता था। ग्लैड्स्टन सरीखा प्रतिभाशाली मनुष्य अपनी जेब में एक छोटी सी पुस्तक हमेशा लेकर निकलता था कि कहीं कोई क्षण व्यर्थ न चला जाय।

हर एक नवयुवक को अपने फुरसत के समय को किसी अच्छे काम मे लगाना चाहिए। ऐसा करने से न केवल उनका जीवन अधिक सुखी और आनन्दमय हो जायगा बल्कि उनकी शक्तियाँ भी काम में लाये जाने के कारण उत्तरोत्तर बढती जायँगी। भिन्न भिन्न मनुष्य अपने लिए भिन्न भिन्न उद्देश्य चुनेंगे। इसमें समता या सादृश्य का होना न तो आवश्यक है और न हितकर। यहाँ पर हम आपके उद्देश्य को निर्धारित नहीं कर रहे हैं, हम तो केवल यह सलाह दे रहे हैं कि अपनी परिस्थिति, अवकाश, नैसर्गिक बुद्धि और तबियत के झुकाव का सावधानी से विचार कर अपने लिए एक उद्देश्य— अपने अवकाश के समय के लिए एक प्रिय काम—चुन लें और उसमें प्रवीणता, उस पर पूर्ण अधिकार, प्राप्त करने के लिए भरसक प्रयत्न करें। ऐसा करने से व्यक्ति और समाज दोनों का कल्याण है।

६. उद्देश्य पूर्ति के लिए योजना आवश्यक है

केवल कल्पना और धुन पर ही कार्य करना कभी अच्छा नहीं होता। जो कुछ करना हो उसका मसविदा तैयार कर लेना चाहिए।

फिर उसी के अनुसार अपने क़दमों को साहस और स्थिरता से बढ़ाते जाना चाहिए।

उद्देश्य और योजना के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम यहाँ पर एक उदाहरण देते हैं। एक युवक विश्वविद्यालय में शिक्षा समाप्त कर एक अच्छे रोजगार में लग गया जिससे उसके दिन सुखपूर्वक कटने लगे। वह अपने काम को बड़ी तत्परता से करता है और उस ओर से उसे पूरा सन्तोष है। वह अपने समय का सदुपयोग करता है। अपने व्यवसाय और आवश्यक मनोरंजन और स्वास्थ रक्षा के कामों से जो समय बचता है उसे आत्म-विकास के हेतु सत्संग, स्वाध्याय तथा इसी प्रकार के दूसरे अच्छे कामों में व्यतीत करता है। समाज का वह उपयोगी सदस्य है और थोड़ी बहुत व्यक्तिगत उन्नति भी वह अवश्य ही कर लेगा—पर उसके आगे और कुछ नहीं, क्योंकि उसने अपना कोई उद्देश्य निर्धारित नहीं किया। दुनिया में अधिकांश मनुष्य इसी वर्ग के होते हैं जिनकी ज़िन्दगी के साल बीत जाते हैं पर वे यह नहीं जानते कि विधाता ने उन्हें क्यों पैदा किया और उनके जीवन का कोई उद्देश्य है भी कि नहीं।

एक दूसरा युवक है जो और बातों में पहले ही के समान है पर अपने लिए एक उद्देश्य निर्धारित कर लेता है—ज्ञान का उपार्जन। फ़ुर्सत की हर घड़ी में वह स्वाध्याय करता रहता है। पुस्तकालय जाकर नई नई किताबें ढूँढ़ता है। जो किताब चित्ताकर्षक हुई उसे ले आता है और पढ़ने लगता है यदि तबियत लगी तो अन्त तक पढ़ डाला, नहीं तो उसे छोड़ कर कोई दूसरी पुस्तक पढ़नी शुरु कर दी। विविध विषयों पर उत्तम उत्तम ग्रंथ पढ़ते रहने से निस्सन्देह उसकी जानकारी के भण्डार में वृद्धि और उसकी मानसिक शक्तियों में उन्नति की आशा हो सकती है। वह

उस पहले युवक की अपेक्षा अवश्य ही अधिक प्रगतिशील है जो कला, व्यवसाय, इंजीनियरिंग, विज्ञान, साहित्य ब्रिज तथा दुनिया की अधिकांश अच्छी अच्छी बातें, सभी में थोड़ी बहुत दिलचस्पी रखता है। लेकिन यह दूसरा युवक भी अपनी शक्तियों का पूरा पूरा उपयोग नहीं कर रहा है क्योंकि यद्यपि उसने ज्ञानोपार्जन और पुस्तकावलोकन को जीवनोद्देश्य निश्चित किया है, पर उसका लक्ष्य सामान्य है, न कि विशिष्ट, क्योंकि उसने विद्या के किसी खास विषय को तो अपनाया नहीं बल्कि एक विषय से दूसरे विषय पर और एक पुस्तक से दूसरी पुस्तक पर भटकता रहता है।

एक तीसरा युवक है। उसे भी अपने समय के सदुपयोग अपनी शक्तियों के विकास और समाज सेवा की कामना है। वह भी अपने लिये एक उद्देश्य नियत कर लेता है, और चूँकि वह *अपने ज्ञान भण्डार को बढ़ाने के लिये उत्सुक है, वह भी यही* उद्देश्य चुन लेता है। पर अपने उद्देश्य को ठीक ठीक निश्चित करने के लिये वह उसे एक विशेष विषय तक सीमित कर लेता है। वह यह तै करता है कि अगले पाँच वर्षों में वह भारतवर्ष का इतिहास या अर्थशास्त्र या मनोविज्ञान या शेक्सपियर की तमाम पुस्तकों का गहरा अध्ययन करके उसमें निपुणता और विशिष्टता प्राप्त करेगा। इतना ही नहीं बल्कि वह अपने उद्देश्य को और भी छोटे छोटे खण्डों में विभाजित कर लेता है। अगले तीन महीनों के लिये अध्ययन का एक प्रोग्राम या योजना तैयार कर लेता है और उसी के अनुसार अपने अध्ययन को नियंत्रित करता है। धीरे धीरे वह अपने चुने हुए विषय का छोटा मोटा विशेषज्ञ बन जाता है. उसकी सोई हुई शक्तियाँ जाग उठती हैं, उसके मनकी उर्वरता बढ़ती हैं और वह मानवीय ज्ञान की सीमाओं के प्रसार करने की योग्यता भी प्राप्त कर लेता है।

७. उद्देश्य चुनने के नियम

कोई दूसरा व्यक्ति आपके लिये एक उद्देश्य निर्धारित करने में असमर्थ है पर इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य बातें अवश्य बताई जा सकती हैं जिनकी कसौटी पर आप अपने उद्देश्य को जाँच सकते हैं। पहली बात यह कि आप ऐसा ही उद्देश्य चुनें जिसमें आपको अनुराग हो। अपनी रुचि के विरुद्ध आप अधिक समय तक युद्ध नहीं कर सकते—ऐसा करना समय और बल को व्यर्थ खोना है। जिस काम में आपकी रुचि नहीं उसे आप पूर्णता से नहीं कर सकते और न उसमें सफलता ही प्राप्त कर सकते हैं। दूसरी बात जो उद्देश्य का चुनाव करते समय ध्यान में रखनी चाहिये वह यह है कि उद्देश्य ऐसा हो जिसमें आप अपनी प्राकृतिक शक्तियों को अधिक से अधिक परिमाण में इस्तेमाल कर सकें—जिससे उनका विकास और वृद्धि हो। अगर एक व्यक्ति का मानसिक शक्तियों का विशेष झुकाव कला की ओर है तो उन्हें विज्ञान या इतिहास में लगाना उचित नहीं। अगर किसी का दिमाग गणित के योग्य नहीं तो उसे जबर्दस्ती गणित में लगाने से कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता। तीसरी कसौटी जिस पर अपने उद्देश्य की जाँच करनी चाहिये वह यह है कि आपका उद्देश्य ऐसा हो जिससे मानव जाति और संसार का कल्याण हो। जिस उद्देश्य से दूसरों को जरा भी हानि पहुँचती हो, जिसमें औरों की हानि करके अपना भला होता हो वह सर्वथा त्याज्य और निन्दनीय है। जिस उद्देश्य के बारे में आपको ज़रा भी सन्देह है, जिसके न्याययुक्त और अच्छे होने में ज़रा भी शक है, उसे एकदम छोड़ देना चाहिये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिस उद्देश्य में दुराचार का एक भी कीटाणु होगा वह अवश्य ही आपको उन्नति की ओर ले जाने की जगह पतन की ओर ले जायगा।

उद्देश्य का चुनाव करते समय अपने हृदय से केवल इतना ही न पूछिये कि कौन सा काम करके आप प्रसिद्ध पा सकेंगे या धन कमा सकेंगे। परन्तु उसी उद्देश्य को चुनिये जिसमें आप अपनी मनुष्यता की सब शक्तियों को लगा सकते हों और अपने को और ऊँचा उठा सकते हों। समृद्धि और कीर्ति की लालसा बुरी नहीं-इससे दुनिया में बड़े बड़े काम होते हैं—पर मनुष्यत्व धन और कीर्ति से अच्छा है। अपने लिये उद्देश्य ऐसा ही चुनना चाहिये जो दिलपसन्द हो, जिसके प्राप्त करने के प्रयत्न से आपको आनंद मिले और आपकी सोती हुई शक्तियाँ जाग्रत हों, जो आपके चरित्र और मनुष्यत्व का विकास कर सकें और संसार के लिये हितकर हो।

मनुष्य की महत्वाकांक्षा के लिये उचित लक्ष्य वही उद्देश्य हो सकता है जिससे दुनिया के सम्बन्ध में मनुष्य का ज्ञान विस्तृत हो, जो अपने पड़ोसियों को और भलीभाँति समझने में या उनके स्वास्थ्य, सुख, समृद्धि, आनंद आदि को बढ़ाने के उद्योग में सहायक हो।

८. महत्वाकांक्षा या उत्साह उद्देश्य का प्राण है

जैसा हम ऊपर लिख चुके हैं, उद्देश्य का एक महत्त्वपूर्ण अंश उसकी तीव्रता या प्रबलता है। महत्त्वाकांक्षा उत्साह और रुचि इसी के दूसरे नाम हैं। मनोविज्ञान के अनुसार महत्त्वाकांक्षा मनुष्य में शक्ति की खान है। मनुष्य बचपन से अपने निस्सहाय और दुर्बल होने का अनुभव करता रहता है जिसकी वजह से उसमें स्वभावतः यह कामना उत्पन्न हो जाती है कि अपनी हीनता के के भाव को श्रेष्टता से ढककर अपनी मित्र मण्डली, अपने समाज और संसार में ख्याति प्राप्त करे। श्रेष्ठता, नामवरी और वाहवाही प्राप्त करने की यह अभिलाषा मानव संस्कृत

में बड़े महत्त्व का स्थान रखती है। यही मनुष्य में शक्ति का भण्डार है। यह बड़े बड़े कठिन काम करवाती है। यही उसे कष्ट और बाधाओं को झेल कर भी आगे कदम बढ़ाये जाने के लिये प्रोत्साहित करती है।

ऊँचे हौसले के बिना उत्थान नहीं हो सकता। सफलता पाने से पहले महत्त्वाकांक्षा होना परमावश्यक है। ज्यों-ज्यों सभ्यता की उन्नति होती जाती है, महत्त्वाकांक्षा भी ऊँची होती जाती है और जितनी ऊँची महत्त्वाकांक्षा होगी उतनी ही श्रेष्ट जनता होगी।

अपनी सफलता से केवल वही मनुष्य सन्तुष्ट हो सकता है जिसकी वृद्धि, जिसका विकास बन्द हो गया है। बढ़ता हुआ मनुष्य सदा सम्पूर्णता का अभाव महसूस करता है। उसे अपनी हर चीज़ अधूरी जान पड़ती है क्योंकि वह बढ़ रहा है। फैलता हुआ मनुष्य अपनी सिद्धि से सदा असन्तुष्ट रहता है और आगे उन्नति करने के लिये सदा प्रयत्न करता रहता है।

ऊँचा हौसला रखने की आदत जीवन में एक बड़ी उत्थान करने वाली शक्ति होती है। यह कुल मानसिक शक्तियों का प्रसार करती है और नई शक्तियों और सम्भावनाओं का प्रादुर्भाव करती है। यह अन्तश्चेतनाकी उन शक्तियों को जगाती है जो साधारण अवस्था में सदा सोई हुई रहती हैं और जिन तक हम अन्य और किसी साधन से कदापि नहीं पहुँच सकते।

केवल उद्देश्य का चुन लेना ही काफी नहीं। उसके प्रति हृदय में अटूट प्रेम या उत्साह का होना भी परमावश्यक है। उत्साह कार्य का प्राण होता है। उत्साह हीनता से कोई काम नहीं किया जा सकता। उत्साह न रहने से समस्त मानसिक शक्तियाँ कार्य में भाग नहीं लेतीं। मन कहीं काम करता है तो हाथ कहीं जाते हैं। थोड़ी देर तक इस तरह स्वयं ही शरीर के भागों में युद्ध होता

रहता है। घंटे भर का काम कई घंटों में होता है, और वह भी बुरी तरह से। उत्साह वह अग्नि है जो हमारे कार्यों को चलाने के लिये भाप तैयार करती है।

पानी खौलाने के लिये दो सौ बारह दर्जे की गर्मी चाहिये। दो सौ दर्जे की गर्मी से काम नहीं चलता। दो सौ दस दर्जे की गर्मी से भी भाप नहीं बनती। जब पानी खौलने लगता है तभी उसमें से इतनी भाप निकलती है कि उससे एंजिन या रेल चलाई जा सके। गुनगुने पानी से किसी प्रकार की गाड़ी नहीं चलाई जा सकती। परिश्रम व्यर्थ रहता है।

सफलता के लिये निरुत्साह और उदासीनता वैसे ही हैं जैसे एंजिन की गति के लिये गुनगुना पानी। बहुत से मनुष्य अपने जीवन रूपी गाड़ी को गुनगुने पानी से, अथवा ऐसे पानी से जिसके खौलने में कुछ कसर है, चलाने का प्रयत्न करते हैं और फिर भी वे आश्चर्य करते हैं कि उनकी गाड़ी क्यों नहीं चलती। वे अपने इंजनों को दो सौ या दो सौ दस दर्जे का गर्मी से चलाने का प्रयत्न कर रहे हैं और फिर उनकी समझ में यह नहीं आता कि वे आगे क्यों नहीं बढ़ते।

उत्साह से प्रफुल्लित व्यक्ति एक झूठी बात भी इस तरह से कहता है कि लोगों को उसकी बात पर विश्वास होने लगता है। परन्तु सच्ची बात को रोनी सूरत लिए प्रकट करने वाला अपने परिश्रम को व्यर्थ जाते हुए देखता है। जो वक्ता अपनी बातों को पूरे जोश और उत्साह के साथ जनता के सामने रखता है वही विजयी होता है। उसके वचनों को सुन कर रोम रोम खड़ा हो जाता है। उसके हृदय से निकली हुई आवाज़ से सुनने वालों का दिल हिल जाता है।

अपने उत्साह को कभी मन्द न होने दीजिये। इस बातका बड़ी सावधानीसे ध्यान रखिये कि उसमें शिथिलता न आने पावे।

उत्साह युवावस्था का प्रधान लक्षण है और यदि आप अपने उत्साह को कायम रख सकते हैं, तो आप के शरीर के वृद्ध हो जाने पर भी आपकी मानसिक शक्तियोंकी युवावस्था बनी रहेगी। जब तक उत्साह है तब तक जीवनसे आपका सम्बन्ध है। जब उत्साह मन्द होने लगता है तब जीवन से आपका नाता भी ढीला पड़ने लगता है। अपने उत्साहकी सावधानीसे रक्षा करना हर विचारशील पुरुषका कर्त्तव्य है।

अगर आप चाहते हैं कि आपकी कुल मानसिक शक्तियाँ परस्पर सहयोग से काम करें और आप उनसे पूरा-पूरा लाभ उठावें, अगर आपकी इच्छा है कि उन शक्तियों का विकास हो, अगर आप चाहते हैं कि थोड़े से थोड़े बलके व्यय से अधिकसे अधिक फल मिले, तो आप को अपने मनके साथ अपने हृदय को, अपने विचारों के साथ अपनी भावनाओं को सहायक रूपमें मिलाना पड़ेगा। आपको जो भी दिमागी काम करना हो उसे पूरा दिल लगा कर कीजिये क्योंकि दिमाग के एंजिनका संचालन शौक या उत्साहकी गर्मी भापके बिना नहीं हो सकता।

मानसिक क्रियाओं में सबसे महत्त्व का स्थान भावना या उमंग का है। यही वह संचालिनी शक्ति है जो बुद्धि को उत्तेजित करती है और इच्छा शक्तिको कार्यकी ओर प्रेरित करती है। जीवनके हर ढाँचेका मूलाधार निपुणता, सिद्धि, विजय प्राप्त करने की तीव्र इच्छा ही है। वह कौन सा भाव है जो जीवनके उद्देश्य की जान है ? वह चित्तवृत्ति प्रेम या रुचि है। प्रगतिशील पुरुषों को इसी रुचि की ही आन्तरिक प्रेरणा आगे बढ़ने को उकसाती रहती है। किसी काममें रुचि होने का मतलब है उससे प्रेम होना।

९. रुचि या शौक़ के लाभ

१—मनकी समस्त शक्तियोंको एक ओर लगाना।
२—अवधान शक्तिको बढ़ाना।
३—स्मरण शक्तिको सहायता पहुँचाना।
४—मनको उर्वर शक्तिकी वृद्धि करना।
५—व्यवसाय या इच्छा-शक्तिको दृढ़ करना।

१०. रुचि और मानसिक संश्लेषण

रुचि और उद्देश्य मनको कार्यको एकता प्रदान करते हैं, उनके द्वारा मनकी समस्त शक्तियोंका ध्रुवीकरण हो जाता है। बिना उद्देश्यके मनका कोई केन्द्र नहीं होता और वह इधर उधर भटकता रहता है। ज्यों ही एक उद्देश्य मिल जाता है मनुष्यकी स्मरण-शक्ति, कल्पना, न्याय बुद्धि, व्यवसाय-उसके मनकी कुल क्रियायें एक साथ मिलकर उस लक्ष्यको दिश में उद्योग करने लगती हैं।

अगर कोई उद्देश्य न हो तो मनुष्य जीवनके धार प्रवाहके साथ ही बहता रहे, जीवनका कोइ केन्द्र न हो न कोई कामका ढाँचा हो, न कोई नियम। इसका परिणाम यही होगा कि हमारी योग्यतायें शिथिल पड़ जायगी और एक दिन ऐसा आयेगा जब हमें पता चलेगा कि अब हम वह नहीं रहे जो कभी पहले थे। इसके विपरीत, जो अपने सामने सदा काम करनेका हौसला, कोई नई बात सीखनेका शौक, आगे बढ़नेकी आकांक्षा या किसी और प्रकारका उद्देश्य रखता है, उसकी शक्तियाँ सदा सजीव रहती हैं बल्कि उत्तरोत्तर उनका विकास होता जाता है।

११. रुचि और एकाग्रता

किसी उद्देश्य को पूर्ति के लिए उद्योग करने से मन को एकाग्र करने की आदत पड़ती है। देखा गया है कि निरुद्देश्य होने से दा

ज्यादातर लोगों के ध्यान के भटकने की आदत हो जाती है। ऐसे मन भटकने का इलाज भी यही है कि जीवन को किसी निश्चित उद्देश्यकी सेवामें लगा दिया जाय।

निरुद्देश होने से मनुष्य का मन इधर उधर भटकता रहता है। बहुतसे उद्देश्य रखनेसे शक्ति छिन्न भिन्न होकर नष्ट हो जाती है।

रुचि और अवधानमें घनिष्ट सम्बन्ध है। किसी वस्तुमें जितनी अधिक आपकी रुचि होगी, वह जितनी चित्ताकर्षक होगी उतना ही गहरा ध्यान उसमें लग सकेगा। और क्योंकि ध्यान अधिक या कम लगने से ही कार्य-फलके बड़े या छोटे होने का अन्तर पड़ जाता है; इसलिए रुचिका मूल्य स्पष्ट हो जाता है। रुचि से लक्ष्य और लक्ष्य से एकाग्रता की उत्पत्ति होती है।

१२. रुचि और स्मृति

किसी उद्देशके लिए उद्यम करनेसे स्मरण-शक्ति बढ़ती है। अगर एक आदमीको किसी मजमूनमें दिलचस्पी है तो वह उसका अध्ययन बड़े चावसे करता है, उसमें निपुणता प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है और समझने तथा याद करनेकी कठिनाइयाँ शीघ्रता से मिटने लगती हैं। इसके विपरीत, यदि उसको उस विषय में अनुराग न हो तो वह अपनी पुस्तकों को अस्थिर मनसे पढ़ेगा, उसका अवधान दुर्बल होगा और इस कारणसे स्मृतिभी धुँधली, मन्द और अविश्वसनीय हो होगी।

जहाँ तुम्हारा हृदय होगा वहीं तुम्हारी स्मृति भी होगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस अध्ययन, धन्धे या उद्योगकी बारीक बातें जिसमें हमें शौक होता है उन बारीक बातों की अपेक्षा कहीं सहजमें याद हो जाती हैं जिनकी ओर हमारा या तो उदासीनता या [illegible] भाव होता है।

डाक्टर जान्सनका कहना है कि स्मृतिकी जननी अवधान है और अवधानकी माता रुचि है। स्मृति प्राप्त करनेके लिए उसकी मा और नानी दोनों को पाने की कोशिश करनी चाहिए।

१३. रुचि और नये विचारों की उत्पत्ति

रुचिसे विचारों के उपजाऊपन की वृद्धि होती है। खोज करने से पता चलता है कि महापुरुषों की मौलिकताओं, उनके अनुसन्धानों और आविष्कारों का कारण प्रायः यही आवेग, भावना या अन्तःक्षोभ होता है जो सहज में ही रुचि या शौक की दशा से बढ़ कर कार्य क्रम के रूप में परिणत हो जाता है।

ध्यान, मनन और मानसिक उद्योग मन को अनुसन्धान के लिए तैयार करते हैं। पर इन सब की संचालिनी शक्ति रुचि या शौक से ही उत्पन्न होती है। एक प्रबल उद्देश्य या आकांक्षा की उत्तेजना ही मन की शक्तियों का ध्रुवीकरण करके समस्त मन को एक चुम्बक बना देती है जिससे वह नये नये मनोवांछित विचारों को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है या विचार समूह में से चुन लेता है। यही उत्तेजन है जो अन्तश्चेतना को जाग्रत करता है जिससे वह नये नये विचारों का प्रादुर्भाव करके उन्हें बाह्य चेतना में प्रकाशित कर देती है। नये विचार पैदा होने के लिये रुचि की शक्तियों का पूरे जोर से काम करना आवश्यक है। अगर आपकी रुचि की शक्तियाँ जोर के साथ काम करती रहें तो आपके विचार संख्या और गुणों में बढ़ते जायगे।

जब रुचि की अग्नि मन्द पड़ जाती है तब अवधान और मन की अन्य शक्तियाँ शिथिल पड़ जाती हैं और नये विचारों का बनना भी कम हो जाता है, इसका इलाज आसान है। मन के उत्तेजन को तीव्र करो और नये विचार फिर बनने लगेंगे।

१४. रुचि और इच्छाशक्ति

शौक या अनुराग हमारी इच्छा-शक्ति को बढ़ाता है। जिस काम में आपकी रुचि है, जिसे आप पूरे हृदय से करना चाहते हैं उसके करने में आपको किसी कठिनाई का अनुभव नहीं होगा और न आपको अपनी इच्छा-शक्ति का व्यय करना पड़ेगा। आपका उत्साह सब कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर लेगा—उसके कारण, चाहे आपको रात-दिन कड़ा परिश्रम ही क्यों न करना पड़े, पर आप काम पर डटे रहेंगे।

यद्यपि यह तथ्य हमारे मानसिक जीवन के सरल सत्यों में से है परन्तु बहुत कम लोग इसके महत्त्व को समझते हैं। वे लोग जो अपने को सुस्त, दुर्बल, उदासीन या अकर्मण्य पाते हैं, वह ज्यादातर इसी वजह से कि उनमें शौक या रुचि का अभाव रहता है अथवा उनके पास न कोई उद्देश्य होता है, न एकाग्रता, न इच्छा-शक्ति।

रुचि या उत्साह की भावना से ही इच्छा-शक्ति का प्रथम प्रादुर्भाव होता है और वही उसका पोषण भी होता है, जिससे समय बीतने पर इच्छा-शक्ति का प्रयोग करना हमारे स्वभाव का अंग बन जाता है।

यह न समझना चाहिये कि एक प्रिय उद्देश्य या महत्वाकांक्षा का प्रभाव केवल मानसिक शक्तियों पर ही पड़ता है। उससे तो मनुष्य का चरित्र, उसका समस्त जीवन प्रकाशित हो उठता है। जिस प्रकार प्रेम आलसी और निकम्मे मनुष्यों को भी सुधार देता है, उसी तरह एक चित्ताकर्षक उद्देश्य जीवन में महान परिवर्तन कर देता है और चरित्र की दुर्बलताओं को इस तरह दूर कर देता है मानो किसी दैवी शक्ति ने जीवन में प्रवेश कर लिया हो। एक दृढ़ उद्देश्य चुन लेने में ऐसा चमत्कार है कि यह मन के अन्दर

कुरूपता और अव्यवस्था को हटा कर उनके स्थान में सौन्दर्य और सुव्यवस्था को स्थापित कर देता है और अकर्मण्य मनुष्य भी कर्मठ बन जाता है।

१५. किसी विषय में श्रेष्ठता प्राप्त कीजिये

एक प्रभावशाली व्यक्ति के लिये विविध प्रकार की सामान्य योग्यता के अतिरिक्त कुछ क्षेत्रों मे आपेक्षिक श्रेष्ठता और एक क्षेत्र में सुस्पष्ट तथा प्रधान श्रेष्ठता की आवश्यकता होती है। प्रधान श्रेष्ठता कारोबार या उद्योग, धन्धे या विद्या या कला सम्बन्धी क्षेत्र में होनी चाहिये। और दूसरी श्रेष्ठतायें खेल कूद, मनोरंजन या सामाजिक कार्यों के क्षेत्र मे होनी चाहिये। आजकल जो बहुत से उदाहरण आत्मग्लानि (Inferiority) के मिलते हैं, अधिकांशतः उनका मूल कारण यही है कि उन लोगों ने सफलता की कोई निश्चित् आदतें नहीं डालीं।

हमारी शिक्षा प्रणाली भी विशेष श्रेष्ठताओं को प्रोत्साहित नहीं करती, वह तो विद्यार्थियों की विशेष योग्यताओं या झुकावों को पोषित करने के स्थान पर उन्हें चपटा कर देती है। शिक्षा के बंधे हुये पाठ्क्रम पढ़ाने के जमे हुये ढर्रे और कड़ी कवायद के कारण शिक्षा प्रणाली एक साचे का काम करती है और उसमें ढले हुये विद्यार्थी न्यूनाधिक एक सामान गुण और योग्यता वाले होते हैं। विद्यार्थियों को सामान्य रूप से जीवन के लिये तैयार करने में वह उनमें जीवन के विशेष क्षेत्रों पर प्रभुत्व की आदतें पैदा करने की ओर जरा भी ध्यान नहीं देती।

न केवल कालेजों और विश्वविद्यालयों में वरन स्कूलों में भी कुछ चुनी हुई दिशाओं में श्रेष्ठता या अधिक उद्योग का नियम बनाया जा सकता है। एक बालक बढ़िया लिखावट सीखे, दूसरा भूगोल मे श्रेष्ठता प्राप्त करे, तीसरा गणित में, चौथा वाक्पटुता में

असाधारण योग्यता प्राप्त करे। और इसी भांति दूसरे नवयुवक भी अपनी अपनी पसन्द के एक एक विषय में विशेष निपुणता प्राप्त करें। जहाँ तक हो सके विशेष जोर उन्हीं विषयों पर देना चाहिये जिनमें बालकों की विशेष रूचि हो, पर खास बात तो यह है कि विद्यार्थी पर कितना दबाव उसके मनोनीत क्षेत्र में यहां अतिरिक्त और अनुशासित परिश्रम करने के लिये डाला जाता है। साधारणतः जिसे प्रगतिशील शिक्षा कहते हैं उसमें यह बात शामिल नहीं। किसी भी क्षेत्र में विशिष्टता और श्रेष्ठता प्राप्त करने की आदत डालना भावी जीवन में सफलता के लिये तैयारी है।

पर शिक्षा प्रणाली में सुधार की बात तो अलग रही। हमारे पाठक चाहे देश की शिक्षा पद्धति में भले ही परिवर्तन न कर सकें पर अपनी आत्म शिक्षा में तो अवश्य ही सुधार कर सकते हैं। हर विचारवान नर-नारी का कर्तव्य है कि अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार एक विषय या कार्यक्षेत्र को चुन ले और उसमें उत्कृष्टता प्राप्त करने का प्रयत्न करें। आप का उद्देश्य चाहे फोटोग्राफी हो, चाहे चित्रकारी या किताब लिखना, या किसी विषय का अध्ययन करना या और ही कुछ हो, आप का लक्ष्य यही होना चाहिये कि अपने विशेष क्षेत्र में पारंगत बन जायें ताकि उसमें जितनी जानकारी या दक्षता आप की हो उतनी आप की मित्र मंडली, मुहल्ले या नगर में किसी दूसरे में न हो। ऐसी श्रेष्ठता और विशिष्टता प्राप्त करने से आप की मानसिक शक्तियों तथा व्यक्तित्व का विकास होगा और आपको सुख, सफलता और सम्मान का लाभ होगा।

एक योग्यता जो एक ही दिशा में लगायी हुई है उन दस योग्यताओं से कहीं अधिक काम कर सकेगी जो बहुत दिशाओं में बिखरी हुई हैं। एक राईफल के अन्दर गोली के पीछे एक तोले भर बारूद वह काम कर दिखाती है जो मन भर खुली हुई बारूद भी

नहीं कर सकती। बन्दूक की नली वह उद्देश्य है जो बारूद को एक लक्ष्य प्रदान करती है और जिसके बिना बारूद निकम्मा ही रहेगा। इसी तरह एक साधारण बुद्धि वाला मनुष्य जो अपनी शक्तियों को एक लक्ष्य की ओर लगा देता है उस तीक्ष्ण बुद्धि वाले मनुष्य से कहीं अधिक सफलता प्राप्त कर लेता है जो अपनी शक्तियों को किसी विशेष लक्ष्य की ओर नहीं लगाता।

१६. उपसंहार

व्यावहारिक मनोवैज्ञानिकों और दक्षता के विशेषज्ञों ने हजारों व्यक्तियों का विश्लेषण कर इस बात का पता लगाया कि हर दस व्यक्तियोंमें से नो के जीवन में कोई निश्चित् उद्देश्य या लक्ष्य नहीं होता और हर एक मनुष्य जिसने कोई बड़ा काम किया या आर्थिक सफलता प्राप्त की, वह पहले से यह जानता था कि वह क्या चाहता है और उसने उसे पाने के लिये बहुत सोच समझ कर एक योजना बना ली थी।

यह एक अटल सत्य है कि किसी चीज को पाने से पहले यह जानना आवश्यक है कि आप क्या चाहते हैं। अपना उद्देश्य निर्धारित कर लेने के बाद उसकी प्राप्ति के लिये योजना बना लेनी चाहिये। हर जीवन में एक बड़ी योजना होनी चाहिये, और उसे छोटी छोटी योजनाओं मे विभाजित कर लेना चाहिये। किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिये योजनाओं को बना लेना उतना ही आवश्यक है जितना जीवन के लिये वायु। योजना बना कर काम करने वाला ही जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है। योजनाओं मे जादू का सा असर होता है, और योजना बना कर उन पर कार्य करना ही वह चुम्बक है जो सफलता को आकृष्ट करता है और जीवन में बड़े २ आश्चर्यजनक इनाम दिलाता है।

छठा अध्याय

अन्तश्चेतना और आत्म-सूचना

१. अन्तश्चेतना का अस्तित्व

हम लोग उस मन से भली भांति परिचित हैं जो सोचता समझता, और कल्पना करता है, जो नये सम्बन्धों की खोज करता है, जो प्रश्नों के हल करने का प्रयत्न करता है, जिसके द्वारा हम सुख दुख का अनुभव करते हैं और इच्छा और संकल्प करते हैं। मन के इस अंग को चेतन मन या सचेत मन कहा जाता है। इन क्रियाओं के अतिरिक्त मन की और भी क्रियायें हैं जो इतनी ही या और भी अधिक, महत्व पूर्ण हैं, चाहे देखने में वे इतनी उद्योग शील या स्पष्ट न जान पड़ती हों।

जीवन में आज तक आप ने बहुत सी बातें सुनी, दृश्य देखे और विद्यायें पढ़ी होंगी। पर उन सभी चीजों का प्रत्यक्ष ज्ञान इस समय आप को नहीं है, या यों कहिये कि वे सब अनुभव उस समय आप के सचेत मन के सामने उपस्थित नहीं हैं। सम्भव है उनमें से कुछ को जानते हुये भी आप प्रकट न कर सकते हों और बहुत सी बातों को तो सम्भवत भूल ही गये हों, परन्तु आप चाहें तो उनमें से बहुतों को इच्छानुसार थोड़ी सी कोशिश करके अपनी चेतना के सामने बुला सकते हैं। इस समय जब आप यह पुस्तक पढ़ रहे हैं आप का गणित साहित्य इतिहास इत्यादि का ज्ञान कहाँ दुबका बैठा है? यदि यह सब चीजें प्रत्यक्ष रूप से आप की चेतना में विद्यमान नहीं हैं किन्तु आवश्यकता पड़ने पर चेतना में बुलाई जा सकती हैं, तो स्वाभावत यह प्रश्न उठता है कि ये सब मन के अन्दर कहाँ छिपी बैठी रहती

हैं ? और समय पड़ने पर कहाँ से निकाल कर चेतना में बुलाई जा सकती है ?

रात में सोते से एक निर्दिष्ट समय पर जागने के लिये प्रायः लोग इस युक्ति का प्रयोग करते हैं कि सोते समय मन में यह धारणा कर लेते हैं कि "हमें रात में अमुक समय पर उठना है"। ठीक उसी समय पर आप से आप उनकी आँख खुल जाती है और वे जाग उठते हैं। घोर निद्रा में सोते हुए उनका मन उन्हें कैसे जगा देता है ? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिये हमारे लिये यह मानना अनिवार्य हो जाता है कि हमारे मन के सचेत अंग के अतिरिक्त, जो कि जागृत अवस्था में हर समय कुछ न कुछ काम में लगा रहता है, एक और अंग है, जो यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से कोई काम करता दिखाई नहीं पड़ता, पर जो हमारा सीखा हुआ ज्ञान विज्ञान और पिछले अनुभव आदि अपने पास जमा रखता है। चेतना प्रवाह की उपमा नदी की धारा से दी जाती है। धारा के ऊपरी अथवा सतह वाले भाग को, जिसमें विचार और भावना की तरंगें उठती रहती हैं और जिससे जागृत अवस्था में हम देखने सुनने पढ़ने, ध्यान जमाने, और सोचने आदि का काम लेते हैं चेतन मन कहा जाता है। इस के विपरीत, चेतना प्रवाह के निचले भाग को जो दृष्टि से ओझल रहता है, जहाँ शान्ति का राज्य है और देखने में कोई काम काज होता नहीं जान पड़ता, अन्तश्चेतना, अज्ञात चेतना, अथवा उपचेतना के नाम से पुकारते हैं। कहीं कहीं सचेत मन के लिये 'बुद्धि' और अचेत मन के लिये 'चित्त' शब्द का भी प्रयोग किया गया है।

२—अन्तश्चेतना क्या काम करती है ?

मानसिक क्रियायें बाह्य चेतना क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहतीं उनका जो भाग अन्तश्चेतना में होता रहता है उसका

विस्तार और महत्व उस भाग से कहीं अधिक होता है जो चेतन मन के भीतर होता है। यह कहने में कोई अत्युक्ति न होगी कि हमारे मानसिक जीवन का कम से कम ९० प्रति शत भाग अज्ञात चेतना के अन्दर होता है और चेतन मन में केवल १० प्रतिशत।

ठंडे देशों में जो बर्फ शिलायें समुद्र में तैरा करती हैं उनका अधिकांश भाग पानी की सतह के नीचे और केवल थोड़ा सा पानी का सतह के ऊपर रहता है। इसी प्रकार हमारे मन का अधिकांश भाग हमारे चेतना क्षेत्र की सतह के नीचे रहता है।

अन्तश्चेतना का एक महत्व पूर्ण कार्य यह है कि वह स्मृति का निवास स्थान है, या यों कहा जाय कि यह एक प्रकार का स्मृति कोष है जिसमें हमारा इन्द्रिय गोचर ज्ञान, अनुभव आदि सम्रहीत होते रहते हैं। निपुणता, और दक्षता भी, जिसे आवश्यकता पड़ने पर मनुष्य अपनी इच्छानुसार प्रदर्शित कर सकता है, साधारणतः अन्तश्चेतना ही में संचित रहती है।

तो क्या अन्तश्चेतना केवल मन का भंडार घर है जहाँ पुराने अनुभव संस्कार, विद्या आदि सब जमा हो जाते हैं जो आवश्यकता पड़ने पर वहाँ से निकाल कर काम में लाये जा सकते हैं ? क्या अज्ञात चेतना बिल्कुल अकर्मण्य है ? नहीं, वह ऐसी नहीं है। अन्तश्चेतना केवल एक भंडारगृह ही नहीं बल्कि एक टकसाल भी है। जो सामग्री सामग्री अन्तश्चेतना के अन्दर जाती है वह वहाँ पूर्व संचित सामग्री से मिल कर परिवर्तित हो जाती है और बाहर निकलने पर नये रूप धारण कर सचेत मन में आती है। अन्तश्चेतना में कच्चा माल अन्दर जाता है तो तैयार किया हुआ पक्का नया माल बाहर निकलता है। हाँ इतना जरूर है कि जब हमारा सचेत मन काम करता है तो हमें इस बात का पता रहता है कि वह काम कर रहा है, पर अन्तश्चेतना के काम करने का पता प्रत्यक्ष रूप से किसी को नहीं चलता।

चित्त के कारखाने में चुपचाप कार्य होता है वहाँ न शोरगुल है, न धक्का धक्कड न थकावट।

जब मनुष्य गहरी नींद में बिल्कुल अचेत हो सोता है, उसका सचेत मन काम करना बन्द कर देता है पर उस समय अचेत मन और भी जोर से काम करने लगता है जिसमें से कुछ भाग तो बिलकुल ऊटपटांग ही होता है जो स्वप्नों के रूप में प्रकट होता है। पर बहुत सा लाभदायक भी होता है। प्रायः देखा गया है कि मनुष्यों ने निद्रावस्था में ऐसे प्रश्न हल कर डाले हैं, जिन्हें वे जाग्रत अवस्था में बडी कोशिश करने पर भी नहला कर पाये थे। ऐसी घटनाएँ गणितज्ञों में अक्सर देखने में आती हैं। अंगरेजी कवि कोलरिज ने अपना प्रसिद्ध काव्य कुबल इखा सोने की अवस्था में ही रचा था जाग उठने पर उसने उसे केवल लिख डाला। सच तो यह है कि कभी कभी निद्रावस्था में मन नये नये विचारों को पैदा करने और गुत्थियों को सुलझाने में ऐसी योग्यता का प्रमाण देता है जिसे वह पूरी चेतना के समय में नहं दिखा पाता। यद्यपि अन्तश्चेतना से निद्रावस्था में काम लेने का गुर हमें अभी तक बहुत थोडा ही मालूम हो सका है फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि निद्रावस्था में हर मनुष्य के मन में उसकी शिक्षा और योग्यता के अनुसार एक ऐसी शक्ति रहती है जिससे वह चेतन मन की जमा की हुई सामग्री का अत्यन्त ही सूक्ष्म और रचनात्मक ढंग से उपयोग में सकता ला है।

मस्तिष्क का मोटा काम तो सचेत मन द्वारा होता है और बारीक काम अचेत मन द्वारा। सचेत मन बाह्य जगत से विचार सामग्री जमा करता है अचेत मन उस सामग्री को संचित कर लेता है और स्थिति अनुकूल होने पर उसी सामग्री से नवीन और सुन्दर वस्तुएँ तैयार कर देता है। यह तथ्यों को छाटता है उनको एक दूसरे से तुलना करता है, उनको क्रम से रखता है और उन्हें

श्रेणियों में विभाजित करता है। हमारे अचेत मन का मुख्य काम विश्लेषण और संश्लेषण है। यह हमारी शक्तियों की चक्रवृद्धि ब्याज की तरह बढ़ाता है और भिन्न २ क्रियाओं को मानो एक स्वर में मिला कर काम में लगाता है। अन्तश्चेतना की मुख्य क्रियायें स्मृति या स्मरण और कल्पना या अनुसन्धान हैं।

यदि हम मनोविश्लेषण और सम्मोहन क्रियाओं का अध्ययन करें तो इस बात के और भी प्रमाण मिलेंगे कि मन का एक निचला अन्तर्तम अथवा परोक्ष भाग होता है जो चुप चाप सदा काम करता रहता है। पर यहां मनो-विश्लेषण और सम्मोहन क्रिया के विषयों की और चर्चा करने का हमारा कोई विचार नहीं और न इसकी यहाँ कोई आवश्यकता ही है। जो कुछ हमने ऊपर बताया है उसी से पाठकों को अन्तश्चेतना के अस्तित्व और महत्व के बारे में भलीभांति विश्वास हो गया होगा।

ऊपर लिखी हुई बातों से पाठकों को यह न समझ लेना चाहिये कि मन के भीतर सचेत और अचेत दो अलग २ खाने हैं, या इनके पृथक २ स्थान हैं, जिनका बँटवारा किसी स्थूल पदार्थ के द्वारा किया गया है। हमारा मन केवल एक वस्तु है और चेतना तथा अन्तश्चेतना इसके दो प्रधान अंग हैं जो एक साथ मिल कर काम करते हैं न कि अलग अलग। मन के सचेत और अचेत अंगों में घना सम्बन्ध है और वे एक दूसरे पर गहरा प्रभाव डालते रहते हैं।

३. अन्तश्चेतना पर प्रभाव डालना

मनोविज्ञानाचार्य अभी तक अन्तश्चेतना के कर्म, गुण आदि के सम्बन्ध में बहुत थोड़ा ही ज्ञान प्राप्त कर पाये हैं। अभी यह निश्चित रूप से पता नहीं कि अचेत मन किन २ अवस्थाओं में और किस प्रकार अपना काम करता है अथवा किन किन उपायों

मे उसकी उपयोगिता बढ़ायी जा सकती है। इसलिये अभी तक अन्तश्चेतना अधिकतर तो मनुष्य के वश बाहर के की ही वस्तु समझी जाती है। पर यद्यपि हमे अचेत मन पर सीधे २ अनुशासन करने या उस पर प्रभाव डालने की युक्ति अभी तक ठीक २ नहीं मालूम है, फिर भी अन्तश्चेतना के विषय में हमे मनोविज्ञान मे कुछ अत्यन्त ही उपयोगी बातो का परिचय मिलता है जिनका निचोड़ नीचे दिया जाता है:—

(१) अन्तश्चेतना अपने मूल धन के लिये उस विचार सामग्री पर निर्भर रहती है जो सचेत मन अपने प्रयास से संग्रहीत करता है।

(२) मनुष्य अपने सचेत मनको जैसा बनाता है वैसा ही उसका अचेत मन भी आप से आप बन जाता है।

(३) सचेत मन और अचेत मन परस्पर एक दूसरे पर प्रभाव डालते है और इस क्रिया प्रति-क्रिया से हमारे समस्त मन का या तो उत्थान हो सकता है या पतन।

(४) चेतन मनके समान ही अन्तश्चेतना का संचालन भी उसी भावना शक्ति से होता है जो इच्छा, अभिरुचि, या उत्साह के रूप में प्रकट होती है।

(५) अन्तर्मन पर विशेष कर निद्रावस्था में सीधे-सीधे भी प्रभाव डाला जा सकता है।

(६) अन्तश्चेतना का अधिकतर क्रियात्मक काम उस समय होता है जब कि सचेत मन या तो आराम करता होता है या किसी विभिन्न प्रकार के कार्य में लगा होता है।

४. अचेत और सचेत मनका परस्पर सम्बन्ध

यह तो अचेत मनकी परिभाषा ही से स्पष्ट हो जाता है कि उसके पास विचार, भावना तथा संकल्प की सामग्री प्राप्त करने के

लिये चेतन मन के सिवा कोई दूसरा उपाय ही नहीं है। उसका जो कुछ भी सम्बन्ध बाह्य जगत से होता है वह सचेत मन द्वारा ही होता है। चूंकि अन्तश्चेतना मानसिक विचार सामग्री के लिये सचेत मन ही पर अवलम्बित है, इस लिये यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि आप अपने अचेत मन को शिक्षित करना चाहते हैं तो उसके लिये सर्वोत्तम उपाय यही है कि आप अपने सचेत मनको शिक्षित करें। अगर आप अपने अन्तमन को अच्छा बनाना चाहते हैं तो अपने मानसिक चेतन जीवन को अच्छा बनाने का प्रयत्न कीजिये। अगर आप अध्ययन, वार्तालाप या पर्यटन द्वारा अपने चेतन मनको नये अनुभव या नया ज्ञान प्रदान करते हैं, अगर आप चिन्तन मनन, और एकाग्रता द्वारा अपने सचेत मनको सुव्यवस्थित तथा सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न करते हैं, तो आप देखेंगे कि चेतन मनके साथ-साथ अन्तश्चेतना भी उन्नित करेगी। सचेत मनके क्रियाशील रहने से कुछ फल तो शीघ्र ही प्रत्यक्ष रूप में प्राप्त हो जाते हैं, पर इस प्रयास के जो परिणाम अदृश्य रूप से होते हैं वे भी कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं होते, क्योंकि चेतन मनका विधि पूर्वक किया हुआ प्रयास अन्तश्चेतना को सामग्री पहुँचाता है, उसमें आवेश पैदा करता है और उसे बल प्रदान करता है। आप सचेत मन द्वारा जो अपरिपक्व-विचार-सामग्री अन्तश्चेतना के अन्दर भेजते हैं वह आपके परिपक्व रूप में वापिस मिल जाती है। अगर आप जागृत अवस्था में अपनी योग्यता बढ़ाने का प्रयत्न करते रहें तो आपकी अन्तश्चेतना भी वैसा ही करके आपके कार्य में सहायता देगी। अचेत मन एक प्रकार से सचेत मनका प्रतिबिम्ब स्वरूप है। यदि जागृति अवस्था में शुभ विचारों का चिन्तन, अच्छे मनोभावों का हृदय में समावेश और अच्छे संकल्प विकल्प किये जायं तो वे अन्तश्चेतना में पहुँच कर बहुत सूक्ष्म रूप में

लाभ पहुँचायेंगे। इसके विपरीत अगर आप अपने चेतन मन में चिन्ता भय, क्रोध ईर्षा, घृणा या इसी प्रकार के दूसरे नकारात्मक भावों को स्थान देते हैं, या उसमें सस्ता और रद्दी माल ही भेजेंगे तो आपके सचेत मनके साथ-साथ अचेत मन भी संकीर्ण, दुर्बल और विकृत हो जायगा। मनोविज्ञान का यह एक नियम है कि अव्यक्त मन वैसा ही हो जाता है जैसा कि सचेत मन। वास्तव में बाह्य और अन्तमन एक दूसरे से मिलकर काम करते हैं। यदि सचेत मन बाहर से विचार-सामग्री जमा करके उसका चिन्तन, मनन, और विश्लेषण करता है, तो अन्तश्चेतना उसी को सूक्ष्म रूप में परिवर्तित कर देती है, पुराने विचारों में नये सम्बन्ध ढूंढ निकाल कर नये नये विचारों का उत्पादन करती है। जो विचार सचेत या वहिर्मुख मन द्वारा आपकी अन्तश्चेतना के अन्दर पहुँचते हैं वे वहाँ से नये-नये रूप धारण कर बाहर निकलते हैं, या यों कहिए कि बाहर से आये हुए विचार अन्तश्चेतना के खेत में बीज का काम करते हैं और उन्हीं बीजों से अन्तश्चेतना की उपजाऊ भूमि भाँति-भाँति की रँग बिरंगी पत्ती और डाली फूल और फल की फसल पैदा करती है, जो अवसर पाकर सचेत मन में प्रकट हो जाती है, और यह तो स्पष्ट तथा निश्चय है ही कि जैसा बीज होगा वैसा ही फल भी होगा।

५—अन्तश्चेतना और रुचि

यदि सचेत मन के परिश्रम करने से अचेत मन को वह सामग्री प्राप्त होती है जिससे कि अन्तश्चेतना अपना कार्य सम्पादन करती है, तो उसे अपने काम के लिये आवश्यक सामर्थ्य उस भावना शक्ति या आवेश से मिलती है जो इच्छा रुचि, या उत्साह के रूप में प्रकट होती है। अन्तश्चेतना को प्रेरित करने

वाली शक्ति किसी विषय में तीव्र अभिरुचि या किसी प्रश्न को हल करने या किसी फल को प्राप्त करने की उत्कट इच्छा से उत्पन्न होती है। जीवन में एक हृदय ग्राही उद्देश्य या महत्वाकांक्षा से जितना उत्तेजन अन्तश्चेतना को मिलता है उतना अन्य किसी साधन से नहीं प्राप्त हो सकता। कुछ समय बाद आपके जीवन का उद्देश्य अन्तर्विभूत हो जाता है अथवा चेतना में नीचे दब जाता है, पर इससे उसका प्रभाव कम नहीं होता बल्कि कुछ बढ़ ही जाता है। ऐसी हालत में आप अपने जीवन उद्देश्य को दूसरों पर जताते नहीं फिरते और कभी २ तो ऐसा हो जाता है कि आप को इस बात का बिलकुल ध्यान ही नहीं रह जाता कि आप के जीवन का कोई विशेष उद्देश्य भी है। परन्तु वास्तव में आपका उद्देश्य आपकी अन्तश्चेतना में सन्निहित हो जाता है और वह उसे कभी नहीं भूलती। प्रेम और उत्साह से प्रेरित हो कर अन्तश्चेतना आप के जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिये एक चुम्बक का काम करती है। वह पिछले दिनों की घटनाओं में से अपने काम की बातों को खींच कर निकाल लेती है। आपकी निद्रावस्था में अन्तश्चेतना इन पदार्थों को सुव्यवस्थित करने में लगी रहती है और जब सवेरे सोकर उठने पर आप को एक नया विचार मिल जाता है, तो आपको आश्चर्य होता है कि यह वही विचार है जिसकी खोज में आप इतनी मुद्दत से थे और आपको यह पहले क्यों नहीं सूझा। अगर आपको अपने अचेत मन की शक्तियों को सुव्यवस्थित और परिवर्द्धित करने की कामना है और आप चाहते हैं कि अपनी अन्तश्चेतना से पूरा २ लाभ उठायें, तो जैसा कि सोच सम्बन्धी अध्याय में बताया गया है आपको उचित है कि अपने चेतन मन को एक उत्कृष्ट उद्देश्य से भर दें और उसी को चरितार्थ करने की धुन में लगजाँय।

६. अन्तश्चेतना और आत्म-सूचना

अन्तश्चेतना पर प्रभाव डालने का एक और तरीका है जिसको आज कल के मनोवैज्ञानिक बड़ी सिफारिश करते हैं। हमारा संकेत उस क्रिया की ओर है जिसे आत्म-सूचना (Auto-Suggestion) कहते हैं। संक्षेप में इसकी विधि इस प्रकार है कि पहले यह निश्चय कर लिया जाय कि अन्तश्चेतना को किस विशेष बात की शिक्षा देनी है। फिर उस बात में सफलता पाने के विचार को बार २ दुहराया जाय, विशेष कर रात को सोने से पहले। इस क्रिया को थोड़े दिन करने के बाद आप देखेंगे कि जिस बात की अभिलाषा आप कर रहे थे जिस सफलता का स्वप्न आप देख रहे थे वह चरितार्थ हो कर प्रत्यक्ष रूप से आप के सामने आ जायगा।

आत्मसूचना का अभ्यास इस सिद्धान्त पर अवलम्बित है कि कोई भी विचार जिस पर बार बार ध्यान दिया जाता है, वह भावना और इच्छा से मिश्रित होकर उत्तरोत्तर प्रबल होता जाता है, यहाँ तक कि वह अकस्मात् कार्य रूप में व्यक्त हो जाता है। कोई कार्य बार २ किये जाने से आदत के रूप में परिपुष्ट हो जाता है और आदतों का समूह ही चरित्र है। चेतन मन या अन्तश्चेतना का कोई भी शक्ति ऐसा नहीं जिसे आत्म सूचना के अभ्यास द्वारा परवर्द्धित न किया जा सकता हो। यह कोई तान्त्रिक क्रिया नहीं है बल्कि एक ठोस वैज्ञानिक क्रिया है जिसकी सफलता के अनेकों उदाहरण मिलते हैं।

आत्म-सूचना या आत्म-प्रेरणा का मुख्य नियम यह है कि आप जैसा बनना चाहते हों वैसे ही विचारों से अपने हृदय को भर दीजिये। विचार ही शक्ति है। मनुष्य की अवस्थायें उसके विचारों के फल हैं। मनुष्य जो कार्य वास्तव में सम्पादन करना

चाहता है, उसका आविर्भाव सबमें पहले विचार में होता है क्योंकि मनुष्य का भाग्य उसके मानस क्षेत्र में ही छिपा है। दृश्य संसार में प्रकट होने से पहले हर चीज़ मानसिक जगत में प्रकट होती है यदि हम किसी पदार्थ को अपनी मानसिक सृष्टि में अच्छी तरह निर्माण कर लें, तो दृश्य सृष्टि में भी हम उसे अच्छी तरह बना सकेंगे। मनुष्य के मनमें उठने वाले विचार चुम्बक हैं जो अपने ही समान पदार्थों, परिस्थितियों और फलों को आकर्षित करते हैं।

यदि आप शूर वीर बनना चाहते है तो आप निर्भयता और बहादुरी ही के विचारों को अपने मनमें आने दीजिये। निश्चय कर लीजिये कि आप किसी बात या किसी व्यक्ति से न डरेंगे। किसी प्रकार की शंका, दुर्बलता या डर की भावना को मन में कदापि न प्रवेश करने दीजिये, बजाय उनके साहस, वीरता और निर्भीकता के विचारों से मन को भर दीजिये। इसी प्रकार के विचारों की हर रोज़ पुनरावृत्ति कीजिये, तो आप देखेंगे कि वीरता के कैसे मूल्यवान और विलक्षण जौहर आपकी आत्मा में उत्पन्न हो जायेंगे। न केवल शारीरिक और नैतिक, बल्कि मानसिक शक्तियों की भी वृद्धि इसी तरह से की जा सकती है।

मन को उपयुक्त विचारों से भर देने के अतिरिक्त आत्म सूचना द्वारा मानसिक उन्नति के लिये यह परम आवश्यक है कि अपनी भावना सम्बन्धी परिस्थिति और प्रवृत्ति को भी आप उसी के अनुकूल बना लें।

७----आत्म-सूचना और अभिलाषा

आत्म सूचना को गुणकारी बनाने के लिये सर्वप्रथम जिस चीज की आवश्यकता है वह है अभिलाषा। मानसिक शक्तियों को उन्नत करने का प्रश्न ही तब उठेगा जब कि हृदय में ऐसा करने

की अभिलाषा हो। मनुष्य की अभिलाषाओं में गजब की शक्ति भरी हुई है। हमारी हार्दिक अभिलाषा हमारे अन्तर्बल को उत्तेजित करता है। वे हमारी शक्तियों को जोर देती हैं और हमारी योग्यता बढ़ाती हैं। वे मन की बिखरी हुई शक्तियों को एकत्रित करके एक विषय या पदार्थ पर केन्द्रित करती हैं जिसके कारण उनका प्रभाव कई गुना बढ़ जाता है। चेतन मन की अर्द्ध-विकसित शक्तियों को परिवर्द्धित करने के लिये और अचेत मन की सोई हुई शक्तियों को जगाने के लिये अभिलाषा के समान दूसरी युक्ति नहीं। उच्चाभिलाषा पहले आत्म प्रेरणा के रूप में परिणत होती है और फिर सिद्धि के रूप में। इसका यह अभिप्राय नहीं कि सफलता या उन्नति करने के लिये केवल हवाई किले बनाना ही काफी है। इसका अर्थ तो यह है कि सफलता प्राप्ति या उन्नति करने के लिये आप जो कुछ भी प्रयत्न करते हैं उसका असर उच्चाभिलाषा से बहुत बढ़ जाता है। यदि प्रयत्न है ही नहीं तो अभिलाषा बढ़ायगा किसे? बिंदी को किसी संख्या से गुणा किया जाय, फल बिंदी ही होगा। अतएव यह स्पष्ट है कि बिना प्रयत्न के अभिलाषा निकम्मी ही रहती है। कारीगर मकान बनाने से पहले उसके नक्शे को अपने मन में स्थिर कर लेता है, फिर उसी के अनुसार उस मकान का निर्माण करता है। सुन्दर और भव्य मकान बनाने के पहले वह अपने मानसिक क्षेत्र में उसकी सुन्दर और भव्य इमारत खड़ी कर लेता है, इसी तरह जो कुछ कार्य हम करते हैं, पहले उसकी सृष्टि हमारे मन में होती है, और बाद में वह दृश्य रूप में आता है। हमारी अभिलाषायें, हमारी कल्पनायें, हमारी जीवन रूपी इमारत के मान-चित्र हैं। पर यदि हम उन कल्पनाओं को सत्य करने के लिये जी जान से प्रयत्न न करेंगे तो उनका मानचित्र मात्र ही रह जायगा।

८—आत्म-सूचना और दृढ़ संकल्प

आत्म सूचना का दूसरा मूल तत्व है दृढ़ संकल्प। जिस गुण या सफलता को आप प्राप्त करना चाहते हो उस पर आपको अपना पूरा पूरा अधिकार समझना चाहिये कि वह चीज आपके लिये ही बनी है। इस प्रकार के विचार से आप में एक ऐसा अलौकिक बल आ जायगा जिससे आपके उद्देश्य की सिद्धि में बड़ी सहायता मिलेगी। आपको इस बात का पूरा विश्वास होना चाहिये, आपको सदा यही सोचते और समझते रहना चाहिये, कि आप स्वस्थ हैं, आप बलवान् हैं, आप प्रति दिन उत्तरोत्तर मानसिक और नैतिक उन्नति करते जा रहे हैं, आप सुखी और सम्पन्न हैं। इस प्रकार के सोचने और समझने का परिणाम यह होगा कि आपको जीवन में इन बातों का आपसे आप विकास होने लगेगा। आप बार २ यह कल्पना कीजिये कि जिस सुख, समृद्धि या उन्नति की आपको कामना है वह वास्तव में आप में वर्तमान है, जिस गुण की आपको अभिलाषा है उसे सचमुच आपने ग्रहण कर लिया है। ऐसे विचारों से मन को भर देने से आप अवश्य ही सुख सफलता और उन्नति की ओर अग्रसर होंगे, क्योंकि संसार का नियम है कि मनुष्य जो कुछ अपने सम्बन्ध में सोचता है वैसा ही बन जाता है

९—आत्म-सूचना और आत्म-विश्वास

आत्म सूचना का तीसरा आवश्यक तत्व है आत्म विश्वास यह भरोसा कि हमें निस्सन्देह ही सफलता और विजय प्राप्त होगी, हम अपने अभीष्ट ध्येय तक शीघ्र ही पहुँचेंगे। हमारी जितनी मानसिक और शारीरिक शक्तियाँ हैं, आत्म-विश्वास उन सबका सरदार है। वह खुद जो कुछ करता है वह तो करता ही है, पर साथ ही साथ वह हमारी सारी शक्तियों को भी

दुगुना और तिगुना बल पहुँचाता है। सबसे पहले तो आत्म विश्वास, मार्ग प्रदर्शन करता है। तब उसके पीछे-पीछे और शक्तियाँ चलती हैं। जब तक आत्म-विश्वास रूपी सेनापति आगे नहीं बढ़ता, तब तक और सब शक्तियाँ चुपचाप खड़ी उसका मुँह ताका करती हैं। पर जब आत्म-विश्वास अपना पूरा-पूरा काम करने लगता है तब बिल्कुल दबी हुई शक्तियाँ भी उठ खड़ी होती हैं और हमें आप से आप ले चलकर सफलता तथा विजय तक पहुँचा देता है। आत्म-सूचना को गुणकारी बनाना हो तो अपने हृदय को आत्म विश्वास से भर दीजिये। ऐसा विचार भूल कर भी मन में न लाइये जो सन्देह या संदिग्धता का सूचक हो, क्योंकि ऐसे विचारों से मन की शक्तियाँ क्षीण होती हैं। संशय बड़े घातक होते हैं। ये मनुष्य की उत्पादक शक्ति को नष्ट कर देते हैं और उसकी अभिलाषा को पंगु और शक्तिहीन बना देते हैं। जैसा मनुष्य का आत्म-विश्वास होता है उससे बढ़कर वह कोई काम नहीं कर सकता। मनुष्य की योग्यता चाहे कितनी बढ़ी चढ़ी क्यों न हो, पर फल उसे उतना ही मिलेगा जितनी योग्यता का वह अपने को समझता होगा। यदि मनुष्य अपने आत्म विश्वास को दृढ़ करता रहे, यदि वह इस बात को मानता रहे कि उसमें ऊँची शक्ति और योग्यता है, तो इससे उसकी मानसिक शक्तियों पर बड़ा ही उदार और दिव्य प्रभाव पड़ेगा।

१० आत्म-सूचना और आशा

आत्म-सूचना का चौथा मूल तत्व है सदाशा। सफलता और विजय की पूरी आशा करने का अर्थ यह होता है कि हमारा मन अपने ध्येय से एक अदृश्य, पर निकट, सम्बन्ध स्थापित कर लेता है, वह ऐसी परिस्थितियों को अपनी ओर आकृष्ट करता है जो उसके उद्देश्य को चरितार्थ करने में सहायक होती हैं। सदाशा ही

मानो मनुष्य का वास्तविक जीवन है। सुख और सफलता प्राप्त करने के लिये जिन तत्वों की आवश्यकता होती है वे सब सदाशा में बीज रूप से वर्तमान रहते हैं। सचेत या अचेत मन दोनों ही की शक्तियाँ सदाशा हो के वातावरण में प्रफुल्लित या विकसित होती हैं। हम वही पाते हैं जिसकी हम आशा करते हैं। यदि हम किसी चीज की आशा न करें तो हम कुछ भी न मिलेगा, जैसे जल अपने उद्गम स्थान से ज्यादा ऊँचा नहीं उठ सकता। जिस ओर मनुष्य अपना मुँह करेगा उसी दिशा को वह जायगा। असफलता, न्यूनता या दुर्बलता की ओर मुँह करने से आपकी गति भ इन्हीं की ओर होगी। अपने हृदय में सदा यह भाव रखिये कि आप सफलता विजय उन्नति, सुस्वास्थ्य और परोपकार के लिये बनाये गये हैं, और उनसे आपको कोई वंचित नहीं रख सकता। इसी तरह के आशामय उद्गारों को बराबर दुहराने की आदत डालिए। इससे आपके मनमें एक उत्पादक शक्ति आ जायगी जो मनोवांछित फल प्राप्त करने में आपकी बड़ी सहायक होगा।

११—मुख्य विचार को बार बार दोहराना

आत्म-सूचना का मूल सूत्र बार बार यह विचार करना है कि मैं दिन प्रति दिन हर प्रकार से उन्नति करता जा रहा हूँ। इस विचार को परिपुष्ट करने और सफल बनाने में अभिलाषा, कल्पना, दृढ़निश्चय आत्म-विश्राम और सदाशा से सहायता लेनी चाहिये। इन्हीं भावनाओं से आत्म सूचना की शक्ति कई गुनी बढ़ जाती है। आत्म-सूचना की क्रिया का अभ्यास दिन में कई बार करना चाहिये पर इसके लिये सबसे उत्तम समय रात में सोने से ठीक पहले का है। यह वह समय होता है जब चेतन मन अपना काम स्वयं बन्द कर के उसे अचेत मन को

सुपुर्द कर देता है। सोते समय जो सन्देश चेतन मन द्वारा अचेतन मन में पहुँचाया जाता है वह रात भर अन्तश्चेतना के भीतर काम करता रहता है और उसकी शक्तियों को स्फूर्ति देता है। आधुनिक विज्ञान हमें निश्चित रूप से बतलाता है कि हमारी बहुत सा नैतिक शिक्षा और चरित्र गठन निद्रावस्था में आप से आप अज्ञात रूप से हुआ करता है। बात यह है कि सोने के समय हमारे मन की जो अवस्था रहती है वही बराबर प्रातः काल तक बनी रहती है। उस समय जो भाव हमारे मन में रहते हैं वही रात के समय अपने आप हमारे अचेतन मन में परिपुष्ट होते रहते हैं। इस लिये यदि हम सोने के समय अपने विचार पवित्र, शान्त और उच्च कर लें तो हमारे शरीर तथा आचरण पर उसका जो असर होगा उसका अनुमान विज्ञ जन सहज ही कर सकते हैं। सोने के पहले लगातार कुछ दिनों तक जिन लोगों ने किसी आदर्श का चित्र अपनी मानसिक दृष्टि के समक्ष रक्खा है वे स्वयं भी उस आदर्श तक पहुँच गये हैं। पाश्चात्य देशों में ऐसे अनेक सज्जन मिलेंगे जिन्होंने इस प्रकार का अभ्यास करके अपने स्वास्थ्य तथा आचरण आदि में आश्चर्य जनक उन्नति कर ली है।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि रात्रि को सोने के समय प्रत्येक व्यक्ति को अपना मन शुभ तथा उन्नत और प्रसन्नता पूर्ण विचारों से भर लेना चाहिये और अच्छी अच्छी तथा शुभ बातों की आकांक्षा करना चाहिए। मन में यह भाव रखना चाहिये कि हम शीघ्र बहुत सम्पन्न सुखी एवं शक्तिशाली बन जायेंगे। अपने मन के सामने अपना आदर्श रखना चाहिये। जिस महात्मा या महानुभाव का चरित्र हमें बहुत अच्छा लगता हो उसके आचरणों का स्मरण और मनन करना चाहिये। बड़े बड़े लोगों के हृदय की विशालता उदारता, सहनशीलता, विद्वत्ता, बहुज्ञता इत्यादि का स्मरण करना

चाहिये और इस बात की आकांक्षा करनी चाहिये कि हम भी वैसे ही बनें। थोड़े ही दिनों के अभ्यास के उपरान्त आप देखेंगे कि आप की मानसिक अवस्था में बहुत बड़ा और बहुत ही शुभ परिवर्तन हो गया है। जब रात को सोने के समय जीवन का आदर्श आपकी दृष्टि के सामने होगा तो दूसरे दिन उस आदर्श की ओर आप अवश्य ही कुछ न कुछ अग्रसर होंगे।

आत्मसूचना को प्रभावशाली बनाने का एक और उपाय है। वह यह कि आप जो निश्चय करें उसे केवल मन ही में न रक्खें बल्कि उसका मुख से भी उच्चारण करें। केवल मन में सोची हुई सूचनाओं का तो प्रभाव आप पर पड़ता ही है, पर जिस सूचना या निश्चय को आप अपने-अपने मुख से भी उच्चारण करते हैं उसका आप पर विशेष और स्थायी प्रभाव होता है। मनुष्य की बहुत सी सोई हुई शक्तियां इसी प्रकार जोर से उच्चारण किये हुये निश्चयों द्वारा जागृत की जा सकती हैं। यदि मन में किये हुये निश्चय में आप मौखिक उच्चारण भी मिला दें और उसके शब्द आप के मुँह से निकल कर आप के कानों में प्रवेश करें, तो आप पर उनका प्रभाव कई गुना बढ़ जायगा। अपनी दुर्बलताओं और त्रुटियों का निवारण तथा अपनी मानसिक शक्तियों की उन्नति इस क्रिया से बहुत सहज में हो सकती है। पाश्चात् देशों में बहुत से लोग ऐसे हैं जिन्होंने इस प्रक्रिया से बहुत अधिक लाभ उठाया है। वे मानो अपने आप से बातें करते हैं और अपने सम्बन्ध में उन्हें जो कुछ कहना होता है वे अपने आप से ही कह लेते हैं। इस प्रकार के आत्मगत परामर्श का प्रभाव वैसा ही हितकर होता है जैसा किसी मित्र या महात्मा के उपदेशों का। इस प्रक्रिया से मनुष्य की मानसिक और नैतिक दोनों प्रकार की उन्नति हो सकती है, क्योंकि वह कामनाओं को पूरा करती है, व्यक्तिगत दोषों को

दूर करती है और शक्तियों को बल और स्पन्दन प्रदान करती है।

जब किसी को इस प्रकार अपने आप से बातें करनी हों तब उसे जन-समूह से दूर ऐसे एकान्त स्थान में चला जाना चाहिये जहाँ वह स्वतंत्रतापूर्वक अपने से बातें कर सके। ऐसी जगह पहुँच कर सोचना चाहिये कि हम में कौन सी त्रुटि है। अथवा हमारी कार्य-सिद्धि में कौन सी बात बाधक है। जिस काम में लगे हों उसके सब अंगों पर अथवा अपनी वर्तमान आवश्यकताओं पर विचार करना चाहिये और उनके सम्बन्ध में अपना कर्त्तव्य निश्चित करना चाहिये। जब कर्त्तव्य निश्चित हो जाय तो अपने आपको यह निश्चय सुनाना चाहिये और अपने को आवश्यक आदेश देना चाहिये। इस प्रकार एकान्त में जोर २ से अपने आपको सुना कर आप जो उपदेश या परामर्श अपने को देंगे उसका शुभ और आश्चर्य जनक परिणाम आपको थोड़े ही दिनों में दिखाई देगा।

कुछ पाठकगण शायद ऊपर की पंक्तियों को मजाक समझ कर हँसें। पर वास्तव में इस बात के अनेकों उदाहरण हैं कि संसार में छोटा या बड़ा कोई ऐसा व्यक्तिगत दोष नहीं है जो इस प्रकार एकान्त में अपने आपको उपदेश देकर दूर न किया जा सकता हो। आवश्यकता केवल दृढ़ निश्चय और अभ्यास की है। मान लीजिये कि एक मनुष्य बहुत शरमीला है और चार आदमियों के सामने जाने में और उनसे बात चीत करने में उसे बड़ा संकोच होता है। अब यदि वह एकान्त में बैठकर अपने आप से कहने लगे कि यह बड़ा भारी दोष है और उसे वह अवश्य ही दूर करेगा और सब के सामने खुल कर बिना शरमाये हुये बात चीत करने की योग्यता प्राप्त करेगा, तो सचमुच उसका यह

दोष बहुत शीघ्र ही दूर हो जायगा। इसी प्रकार दूसरे दोष भी दूर किये जा सकते हैं।

भारतीय साहित्य मे इसे "जप" कहा है, यद्यपि इसका रूप अब विकृत हो गया है, हम जो मुँह से बड़ बड़ाते हैं, उसके पीछे कोई मानसिक क्रिया नहीं होती, जप (जप)का अर्थ कुछ और होता है और हमारे विचार कहीं और हवा खाते हैं। पर यदि ठीक ढंग से जप किया जाय, अर्थात् जो हम मुँह से कहें वही मन में सोचते रहें, तो फिर इसका प्रभाव आश्चर्य जनक होगा। भगवत गीता में लिखा है कि जप सर्वश्रेष्ठ यज्ञ है यज्ञ से सभी कुछ मिल सकता है।

१२—निद्रावस्था में अचेत मन पर प्रभाव डालना

जागृत अवस्था में तो अचेत मन पर सचेत मन द्वारा प्रभाव डाला ही जा सकता है पर वैज्ञानिक प्रयोगों से यह सिद्ध होता है कि निद्रावस्था में अन्तश्चेतना पर सीधे २ ही, प्रभाव डाला जा सकता है। हिपनाटिज्म का तो सारा काम ही इस सिद्धान्त पर निर्भर है कि निद्रावस्था में अचेत मन को आदेश दे कर उससे काम लिया जा सकता है।

डाक्टर वोरस्टर का दृढ़ विश्वास है कि सोते हुये बालकों को शिक्षा दे कर सहज ही उनके चरित्र को सुधारा जा सकता है। उनकी सलाह है कि जब बालक सोया हो उस समय उसे बहुत धीरे २ अच्छे २ उपदेश देने चाहिये। उससे कहना चाहिये कि तुम अमुक २ दोष छोड़ दो और अपना आचरण अमुक प्रकार से सुधार लो। उनका कहना है कि सोये हुये बालकों से यदि धीरे २ बात कही जाती है तो उससे उनकी निद्रा तो भंग नहीं होती पर जो कुछ उनसे कहा जाता है उसे वे अचेत मन की सहायता से बहुत अच्छी तरह सुन लेते हैं. और केवल सुन ही नहीं लेते

बल्कि समझ लेते है और ग्रहण भी कर लेते हैं तथा बाद मे उसके अनुसार आचरण करते हैं। जो बात बच्चो मे निद्रावस्था मे कहनी हो बहुत धीरे २, कई तरह मे और खूब समझा बुझा कर कहनी चाहिये। डा० वारस्टर ने अपने अनुभवों का वर्णन करते हुये लिखा है कि उन्होंने बहुत से बालकों की बुरी आदतें छुडाई हैं और उन्हें अच्छे मार्ग पर लगाया है। इ से डरने वाले बच्चों ने डरना छोड दिया, भूठ बोलने वाले लडको ने भूठ बोलना और क्रोध करने वाले बालकों ने क्रोध करना छोड दिया यहाँ तक कि हकला कर बोलने वाले बच्चों ने हकलाना भी छोड दिया।

प्रायः सभी देशों और जातियों मे यह रिवाज है कि बच्चों को सुलाने से पहले हर प्रकार से प्रसन्न करते हैं। हमारे यहाँ भी बालकों को सोने से पहले अनेक प्रकार की अच्छी २ शिक्षाप्रद कहानियाँ और लोरियाँ आदि सुनाने की प्रथा है। पढी लिखी या समझदार मातायें सोने से पहले अपने बच्चों को नाना प्रकार के अच्छे २ उपदेश देती हैं, महापुरुषों का कथायें सुनाती हैं और उनमे शुभ कामनायें तथा श्रेष्ठ भावनायें भरने का प्रयत्न करती है। कोमल हृदय वाले बालकों पर इन सब बातों का बहुत अच्छा और गहरा प्रभाव पडता है। सोने से पहले जो बातें सुन लेते हैं वे निद्रावस्था में उनकी अन्तश्चेतना पर दृढतापूर्वक अंकित होने लगती हैं और बालकों के भावी जीवन तथा आचरण आदि पर बहुत शुभ प्रभाव डालती हैं।

जो मातायें अज्ञान अथवा किसी दूसरे कारण से ऐसा न करती हों उन्हें उचित है कि अब से सोने के समय अपने बालकों को प्रसन्न करने और उन्हें अच्छी २ बातें बताने का प्रण करें। इस प्रकार वह उन्हें जागृत अवस्था की अपेक्षा निद्रावस्था मे और भी अधिक तथा उत्तम शिक्षा दे सकेंगी। जागृत अवस्थाओं में दी हुई शिक्षाओं और उपदेशो आदि का बालकों पर पूरा प्रभाव पड़

ा न पड़े, पर साने से पहले दी हुई शिक्षाओं तथा उपदेशों का अच्छा प्रभाव पड़ता हुआ प्राय. देखा गया है। जागते हुये तो हवा किसी प्रकार का प्रतिक्रिया भी कर सकता है परन्तु निद्रावस्था में उसके लिये किसी प्रकार की प्रतिक्रिया करना असम्भव हो जाता है और उपदेश तथा शिक्षायें उसके हृदय पर प्रत्यक्ष रूप से और दृढ़तापूर्वक अपना कार्य करता हैं। आज कल पश्चात्य देशों में तो इन बातों ने एक प्रकार से एक शास्त्र का रूप धारण कर लिया है। वहाँ केवल दुष्ट बालकों के आचरण सुधार के लिये ही नहीं बल्कि उनके अनेक शारीरिक रोगों को दूर करने के लिये भी इन तत्वों का व्यवहार किया जाता है। यह कहना शायद अनावश्यक होगा कि जो माता पिता अपने बच्चों को मार पीट कर या डर धमका कर सुलाते हैं वह भारी भूल करते हैं।

१३—अन्तश्चेतना और विश्राम

जिस समय मनुष्य अपने चेतन मन से काम लेता होता है उसका अचेत मन भी कुछ न कुछ काम करता रहता है। पर अन्तश्चेतना को काम करने का पूरा अवसर तभी मिलता है जब मनुष्य के सो जाने या आराम करने के कारण उसका चेतन मन काम करना बन्द कर देता है। इसका अर्थ यह हुआ कि हमारी अन्तश्चेतना वैसे तो सदा ही काम करती रहती है पर सोने या आराम करने के समय और भी जोरों से काम करने लगती है। जब हमारा हृदय-पिंड सत्तर या सौ वर्ष तक बिना रुके हुये बराबर काम कर सकता है तो इस बात के मानने में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है कि हमारे मन का यह भाग भी कभी विश्राम नहीं करता ?

अगर हम अचेत मन की शक्तियों से लाभ उठाना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि उसको पूरी तरह काम करने का अव

मर दें। यह तभी हो सकता है जब सचेत मन स्वयं काम करना बन्द करदे और उसकी ओर से अन्तश्चेतना को कुछ समय के लिये अवकाश मिल जाय। उदाहरण के लिये मान लीजिए कि आपको किसी गूढ़ विषय पर सोच विचार करना है या किसी नयी विद्या का अध्ययन करना है और इस काम में ८ घंटे लगाने का आपका इरादा है। क्या आपको ये आठों घंटे एक साथ ही, अथवा एक ही बैठक में, या एक ही दिन में, उस प्रश्न पर विचार करने में लगा देने चाहिये या थोड़ा २ करके तीन चार दिन में? मनोविज्ञानवेत्ताओं का कहना है कि उस मामले पर एक दिन में अधिक समय देने की अपेक्षा उतने ही समय का थोड़ा २ करके तीन चार दिनों में लगाना बहुत अधिक लाभदायक होगा। क्योंकि एक तो लगातार देर तक एक ही काम में लगे रहने से उस विषय की ओर अभिरुचि कम हो जाती है जिससे उस विषय पर पूर्ण रूप से ध्यान देना कठिन हो जाता है। दूसरे देर तक मानसिक परिश्रम करने से मस्तिष्क थक जाता है जिससे उसकी शक्तियाँ शिथिल पड़ जाती हैं। पर तीसरी और बड़े महत्व की बात यह है कि लगातार चिन्तन में तल्लीन रहने से अन्तश्चेतना को चेतन मन की सहायता करने का बिल्कुल अवसर ही नहीं मिलता। इसके विपरीत जब सोचने की अवधि कई दिनों में बाँट दी जाती है तो अचेतन मन की शक्तियों को विचारों में उलट फेर, संश्लेषण, विश्लेषण करने और उन पर एक नवीन प्रकाश डालने का अवसर मिल जाता है।

" कभी २ ऐसा होता है कि हम किसी प्रश्न के हल करने में बहुत देर तक प्रयत्न करने पर भी उसे हल नहीं कर पाते। या किसी समस्या में क्या करें यह निर्णय करने का लाख प्रयास करने पर भी समझ में नहीं आता कि क्या करें। ऐसी अवस्था में सिर धुनने की अपेक्षा यह कहीं अच्छा होगा कि उस समय हम उस प्रश्न

या प्रसंग को मन के सामने से बिल्कुल हटा दें और एक दो दिन बीत जाने पर पुनः उस पर विचार करें। ऐसा करने से हम बहुधा देखेंगे कि कदाचित् दूसरे ही दिन सवेरे उठने पर हमारे प्रश्न का उत्तर स्पष्ट हो जायगा और हमारी समस्या का समाधान आप ही आप हमारे मनमें बिजली के प्रकाश की रेखा के समान चमक उठेगा।

१४—मानसिक काम को समुचित समय दीजिए

किसी मानसिक काम करने में यह बड़ा उपयोगी नियम है कि उसे यथेष्ट समय दीजिए चाहे उस समय में आप उस विषय पर क्रियात्मक मनन या चिन्तन न भी करते रहें। केवल समय बीतने से बहुत सी कठिनाइयाँ स्वतः दूर हो जायगी बहुत से प्रश्नों का उत्तर आपसे आप समझ में आ जायगा, और बहुत से नवीन विचार उत्पन्न हो जायेंगे जो समस्या पर प्रकाश डालेंगे।

किसी विद्या, या कला, अथवा हुनर के सीखने में या किसी बात को कठस्थ करने की क्रिया में जल्द बाजी करना या मस्तिष्क को जबरदस्ती ढकेलना 'मनोविज्ञान' के नियमों के बिल्कुल विरुद्ध है। ऐसा करने से अन्तश्चेतना को काम करने का अवसर नहीं मिलता। परिणाम यह होता है कि शिक्षार्थी जो कुछ भी सीखता है वह बिल्कुल उथला है, अधकचरा और अस्थायी रहता है सूक्ष्म तथा गूढ़ बातों को मन देख ही नहीं पाता, और न बारीक अर्थों को समझ पाता है, जो कुछ वह सीखता है वह परिपुष्ट नहीं हो पाता और शीघ्र ही भूल जाता है। जो विद्यार्थी साल भर मेहनत न करके इमतिहान के निकट आने पर रटाई करते हैं वे बड़ी भूल करते हैं परीक्षा में चाहे वे भले ही उत्तीर्ण हो जाँय पर न तो वे यथेष्ट योग्यता प्राप्त कर सकते हैं और न उनके मन का उतना विकास ही होता है जितना कि होना चाहिए। चतुर

विद्यार्थी फुरसत की घड़ी को बेकार नहीं समझता, क्योंकि उस अवकाश में न केवल वह अपने थके हुए मन को तरो ताज़ा कर लेता है बल्कि अपने अज्ञात मन को भी कार्य सपादन का अवसर देता है। पर साथ ही साथ वह फुरसत की घड़ी को इतना नहीं बढ़ा लेता कि साल के ग्यारह महीने तो एक लम्बा रविवार बन जांय और इम्तहान के पहले का एक महीना रटाई और सिर धुनाई में लगाना पड़े।

सातवाँ अध्याय

एकाग्रता

१. मानसिक दक्षता का आवश्यक अंग

मानसिक दक्षता प्रधानतः दो बातों पर अवलम्बित है, एक तो मनुष्य की शक्तियों की प्रबलता, दूसरे यह कि कितनी एकाग्रता से वह काम में लाई जाती हैं। एक व्यक्ति चाहे कैसा ही कुशाग्रबुद्धि क्यों न हो पर यदि वह अपने मन को इधर उधर भटकने या भरपूर ज़ोर से काम न करने की आदत पड़ जाने देता है, तो वह दुनिया में अधिक कार्य न कर सकेगा। दोनों दशाओं में मानसिक शक्ति का ह्रास होगा और दिमागी एंजिन से उतना पूरा-पूरा बल न मिल सकेगा जितना पैदा करने की उसमें योग्यता है। अगर आप एक तेज़ बुद्धि वाले व्यक्ति हैं तो एकाग्रता आपकी बुद्धि को और भी सहारा देगी और प्रखर बनायेगी। अगर आपका जन्म प्राप्त दिमाग उतना अच्छा नहीं है जितना कि आप चाहते हैं, तब तो यह और भी आवश्यक है कि आप अपनी कमी को तन्मयता द्वारा पूरा करें। आपकी मानसिक शक्तियों की प्रबलता कुछ भी हो, एकाग्रता उनकी उपयोगिता में आश्चर्यजनक वृद्धि कर सकती है। एक विद्वान ने खूब कहा है कि एक अद्भुत प्रतिभा वाले व्यक्ति का वह विशेष गुण, जो और बातों से अधिक उसे जनसाधारण से अलग करता है, उसके अवधान की शक्ति ही है, जिसके द्वारा वह किसी पदार्थ को अपने मन के सामने उस समय तक रख सकता है जब तक वह उस पर पूर्ण अधिकार प्राप्त नहीं कर लेता। शायद एक सूक्ष्म बुद्धि वाले मनुष्य (genius) का मन से बड़ा

लक्षण यही है कि वह किसी चुने हुए विषय पर इच्छानुसार देर तक ध्यान को लगाये रखने की क्षमता रखता है। मन को एकाग्र करने की सामर्थ्य ही से सफलता और असफलता, अपूर्व सिद्धि और सामान्यता का अन्तर पड़ जाता है। एकाग्रता योग्यता का प्राण है।

२. अवधान का अर्थ

यह समझाने की शायद ही कोई आवश्यकता हो कि अवधान या ध्यान का क्या अर्थ है, क्योंकि यह तो सभी जानते हैं कि किसी वस्तु अथवा विचार पर ध्यान देना किसे कहते हैं। ध्यान देने का अर्थ है अपने चुने हुये पदार्थ पर मन की शक्तियों को कुछ समय तक लगाना और उन्हें दूसरी चीजों से हटा लेना। अवधान के प्रभाव से हमारे मन की सामर्थ्य हमारे सोचने की महत्वपूर्ण और बारीक बातों पर एकत्रित हो जाती है, ठीक उसी प्रकार जैसे एक आतशी शीशा सूरज की किरणों को किसी अभीष्ट बिन्दु पर केन्द्रित कर देता है। चेतना तमाम क्षेत्र पर समान रूप से नहीं फैली रहती, बल्कि रुचि, आवश्यकता या उमंग के अनुसार कभी एक विषय पर कभी दूसरे पर इकट्ठी हो जाती है। इसका यह अर्थ है कि साधारण चेतना में मनुष्य सदा किसी न किसी चीज़ पर ध्यान देता रहता है। हमारी चेतना के क्षेत्र में कोई न कोई पदार्थ हमेशा हमारा ध्यान अपनी ओर खींचने की चेष्टा करता रहता है, और एक चीज़ पर ध्यान देने का मतलब है ध्यान को बहुत सी दूसरी चीजों से हटा लेना जिन पर कि ध्यान टिक सकता है। अवधान चेतना प्रवाह में से कुछ विशेष पदार्थों को चुन लेता है और उन्हीं पर ज़ोर देता है और विचार करता है। अवधान ही इस बात का निर्णय करता है कि क्षण-क्षण के बाद हमारी मानसिक शक्ति किन चीजों पर केन्द्रित होगी।

ऊपर की बातों से यह स्पष्ट हो गया होगा कि अवधान में दो क्रियाओं का समावेश रहता है, एक तो मानसिक किरणों को किसी एक पदार्थ पर एकत्रित करना और दूसरे चेतना क्षेत्र के अन्य तमाम पदार्थों से उनको हटा लेना अथवा उन पदार्थों को अन्धकारमय (Black Out) कर देना। जितनी पूर्णता से यह दोनों क्रियायें की जायेंगी उतना ही गहरा अवधान होगा।

३. एकाग्रता से लाभ

(क) एकाग्रता मानसिक दक्षता को बढ़ती है।

नियंत्रित (Controlled) अवधान का पहला और सब से स्पष्ट लाभ यह है कि यह मानसिक क्रियाओं को अपनी चरम सीमा तक उन्नति करने में सहायक होता है। दूसरे उपायों से अधिक एकाग्रता ही मन की गुप्त शक्तियों को अभिव्यक्त करती है और उसकी परोक्ष क्षमता को प्रत्यक्ष कर देती है। हम में से बहुतों को याद होगा कि किस तरह बचपन में हम एक उन्नतोदर ताल (Convex Lens) द्वारा कागज़ के छोटे छोटे टुकड़ों को जलाया करते थे। जब सूरज की किरणें सीधे ही कागज़ पर पड़ती हैं तो घंटों में भी कोई विशेष प्रभाव नहीं पैदा कर पाती हैं, सिवाय इसके कि कागज़ शायद कुछ गर्म हो जाता है। पर जब सूरज की रोशनी को उतनी ही मात्रा एक आतशी शीशे द्वारा एक बिन्दु पर एकत्र कर दी जाती है तो कागज शीघ्र ही जल उठता है। जो काम सूरज की छितरी हुई किरणें घण्टों, शायद युगों में भी, न कर पातीं वह उनको एक बिन्दु पर केन्द्रित कर देने से कुछ ही क्षणों में सम्पूर्ण हो जाता है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि एक एकड़ ज़मीन की घास में इतनी शक्ति भरी रहती है कि यदि उसे एक भाप-इंजिन के पिस्टन राड (Piston Rod) पर केन्द्रित कर लिया जाय तो उसके द्वारा संसार की सारी चक्कियों और मोटरों का

संचालन किया जा सकता है, परन्तु बिखरी होने के कारण वह व्यर्थ जा रही है। इसी तरह यदि मन की शक्तियाँ बहुत सी बातों पर फैली रहें तो वे शायद ही कुछ कर सकें। अगर हम किसी प्रश्न या प्रश्न को लिये ऊँघते रहें तो कदाचित् एक घंटे या एक दिन में भी कुछ न कर पावें। इस के विपरीत, अगर हम मन को इधर उधर भटकने से रोक लें और कमर कस कर पूरी शक्ति से उसे काम मे लगावें और अपने विचारों को दूसरी हर चीज से हटा कर केवल उसी काम में निमग्न हो जाँय जिसे कि हाथ में ले रक्खा है, तो हम देखेंगे कि जो काम पहले घंटों में नहीं हो पाता था वह इस प्रकार दत्त चित्त होने से अब मिनटों में हो जाता है, यही नहीं बल्कि बहुत से काम जो पहले बिलकुल नहीं हो सकते थे अब सम्भव हो जाते हैं।

मन की तुलना भाप के एक अचल एंजिन से करके यही बात एक दूसरे ढंग से समझाई गई है। इंजिन की रचना इस प्रकार होती है कि वह भाप के विशेष दबाव पर ही जैसे १५० पौंड प्रति वर्गइंच पर अपना अधिकांश काम करता है। शायद कोई यह ख्याल करे कि जब १५० पौंड का दबाव कारखाने की सारी कलों को चला सकता है तो ७५ पौंड के दबाव पर वह एंजिन वहाँ की आधी कलों को अवश्य ही चला सकेगा कम से कम हल्की कलों को। ऐसा ख्याल करना गलत होगा क्योंकि ७५ पौंड के दबाव पर यह बलशाली एंजिन शायद अपने पहियों को भी मुश्किल से घुमा सके और जो काम उसे करना है उसे तो बिल्कुल ही न कर सकेगा। जो काम एंजिन १५० पौंड के दबाव पर करता है उसका आधा काम वह तभी कर पावेगा जब भाप का दबाव बढ़ते-बढ़ते कोई १०० पौंड तक पहुँच जावे। यही हाल हमारे मन के छोटे से भूरे एंजिन का है। चूँकि यह अपना सबसे उत्तम कार्य एक विशेष दर्जे की एकाग्रता पर ही कर सकता है इस लिए यह उतने ही समय

में आधे ध्यान से आधा काम नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त बहुत सा काम ऐसा भी है जिसे वह उस समय तक बिलकुल ही न कर सकेगा जब तक कि वह पूरे जोर के साथ काम न करे। शायद यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि यदि अवधान की मात्रा समानान्तर श्रेणी में बढ़े तो मानसिक दक्षता गुणोत्तर श्रेणी (Geometrical Progression) में बढ़ जायगी। व्यक्तियों में एकाग्रता की शक्ति में अन्तर होने के कारण एक व्यक्ति मानसिक निपुणता और सफलता के शिखर पर पहुँच जाता है जब कि दूसरा उसका विनीत अनुयायी ही बना रह जाता है। किसी ने यह बहुत ही ठीक कहा है कि अद्भुत प्रतिभा (genius) केवल देर तक एकाग्रचित्त रहने की शक्ति का ही नाम है।

(ग) एकाग्रता यथार्थ ज्ञान प्राप्त करा देती है।

अवधान अपने लक्ष्य को स्पष्ट और निश्चित कर देता है और इस प्रकार यथार्थ ज्ञान प्राप्त करा देता है। कोई पदार्थ जिस पर अवधान केन्द्रित किया जाय वह चेतना में चमकदार बन जाता है और साफ साफ दिखाई देने लगता है। इन्द्रियाँ, जिनके जरिये से हमें वाह्य जगत का बोध होता है, अपनी निपुणता के लिये उस एकाग्रता की श्रेष्ठता पर ही निर्भर करती हैं जिसे वह प्रमेयों (Phenomenon) के निरीक्षण में उपयोग करती हैं। हमारी इन्द्रियों के संकलन किये हुये संस्कार (Impressions) तभी यथार्थ, सम्पूर्ण, और विश्वास योग्य होंगे जब कि इन्द्रियाँ गहरे ध्यान से काम में लाई जायँ। चाहे आँखों के सामने बहुत से दृश्य हों या कानों के सामने आवाज़ पर अवधान के बिना न तो आँखें देख सकेंगी और न कान सुन सकेंगे। अगर ध्यान को किसी दूसरी जगह लगा दिया जाय तो यह सम्भव है कि मनुष्य दुखते हुये दाँत या किसी दूसरी शारीरिक पीड़ा के संवेदन या इन्द्रिय ज्ञान (Sesantion) को बिलकुल ही भूल जाय। इसी प्रकार अगर मन ध्यान न दे तो हमारा

सोचना छिछला दुर्बल और अस्पष्ट होगा। जब तक हम विकृतियों (Phenomena) पर ध्यान न दें हम उन्हें जान नहीं सकते क्योंकि अवधान दिमाग का प्रकाश बिन्दु (SPotlight) है जो अध्ययन के विषय को प्रज्ज्वलित करता है और उसकी बहुत सी बारीक बातों को प्रकाशमान करता है, जो बिना उसके अन्धकार में रह जातीं।

हममें से अधिकांश लोग किसी न किसी चीज़ में निपुण बन सकते हैं, और इसका रहस्य है यही एकाग्रता से काम करने की आदत। ज्ञान के किसी क्षेत्र में, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो—पंडित बन जाने से मनुष्य को मानसिक आत्म-सम्मान प्राप्त हो जाता है। विलोमतः यदि आप किसी विषय में पारंगत बनने का आदर्श अपने सामने रक्खें तो देखेंगे कि एकाग्रता की आदत सुगमता से पड जाती है।

(ग) एकाग्रता स्मृति को सहायता देती है।

नियंत्रित अवधान का तीसरा लाभ यह है कि यह मन पर अधिक गहरे छाप बनाता है और इस कारण से धारण (Retention) में सहायता देता है। अवधान का अर्थ है स्मृति अगर पहली छाप (Original Impression) धुँधली है तो उसका पुनरावाहन करने (Recall) के प्रयत्न का फल भी धुँधला ही होगा। जितना गहरा अवधान होगा उतनी ही टिकाऊ छाप मन पर बनेगी। एक विद्वान ने तो यहाँ तक कहा है कि अवधान ही स्मृति की जननी है।

(घ) एकाग्रता मौलिकता में सहायता देती है। एकाग्रता का चौथा लाभ यह है कि यह कल्पना को उत्तेजित करती है और इस तरह से मौलिकता और अनुसन्धान में सहायक होती है। एकाग्रता उल्लास (Inspiration) की एक आवश्यक शर्त है। कोई भी ऐसे विषय में नये विचार नहीं पैदा कर सकता जिसके सम्बन्ध में उसने थोड़ा ही सोचा है और जिसके बारे में उसकी जान-

कारी कुछ नहीं के बराबर हैं। एकाग्रता ही उत्पादक शक्ति को पूरा सुअवसर प्रदान करती है। इससे यह अभिप्राय न निकालना चाहिये कि नव कल्पना के लिये एकाग्रता ही अकेली या काफी शर्त है, या यह कि इससे नये विचारों की एक बढ़िया फसल के रूप में तुरन्त ही फल मिल सकता है। इसके विपरीत, अनुभव तो यही बताता है कि नये विचार अचानक ही आ जाते हैं, शायद ऐसे समय पर जब कि मन एक बिलकुल ही दूसरे काम में लग हो। साथ साथ यह भी सच है कि यदि पहले से विषय पर गहरा ध्यान न दिया जाय तो नये विचार कदाचित् पैदा ही न हों।

४—अवधान की प्रकृति

(क) अवधान निश्चलता नहीं है।

जन-साधारण में यह विश्वास प्रचलित है कि यदि किसी मनुष्य का अवधान समुचित रूप से शिक्षित है तो उसमें यह योग्यता होनी चाहिये कि घंटे आध घंटे तक बिना पलक मारे अपनी नाक के सिरे या एक आल्पीन की नोंकको घूरता रहे। अवधान का ऐसा अर्थ लगाना बिलकुल गलत है। एक आल्पीन की नोक को आध घंटे या अधिक देर तक देखते रहने की क्षमता उच्च कोटि की सराहनीय एकाग्रता भले ही हो, पर मानसिक उन्नति के के विचार से ऐसी क्रिया बिलकुल निरर्थक होगी, क्योंकि आल्पीन की नोकके सम्बन्ध में हमें कुछ नई बात बताने के बजाय इसका नतीजा केवल इतना ही होगा कि या तो हमारी दृष्टि धुँधली पड़ जायगी या हम एक बनावटी निद्रा या सम्मोहन (Hypnotism) अवस्था को मे पहुँच जायँगे।

इससे मिलती जुलती यह धारणा है कि एकाग्रता में मन को एकसमय में केवल एक ही विचार से भर लेना चाहिये; जैसे यदि आपको रेल के एक एंजिन पर 'ध्यान देना है' तो आपके दिमाग

में सिवाय रेलके एंजिनके और कुछ भी न होना चाहिये। चलना सीखने के समय एक बच्चा भी ऐसा ही करता है। एक कदम के आगे दूसरा कदम रखने के सिवाय वह और किसी बात के विचार को मन में नहीं ला सकता। इसका नतीजा यही होता है कि वह बहुत दूर नहीं चल पाता क्योंकि उसका चलना अत्यन्त ही भोंडे प्रकार का होता है। वास्तव में चलने का अर्थ इससे कहीं अधिक है। इसका मतलब है सारे शरीर को साधना और साथ ही साथ आगे बढ़ते जाना।

इसी तरह एकाग्रता के यह माने नहीं कि ध्यान को किसी एक पदार्थ पर जमा दिया जाय, या मानसिक प्रकाश बिन्दु (Spot Light) को किसी एक वस्तु पर केन्द्रित कर दिया जाय, बल्कि इसका अर्थ तो यह है कि मानसिक प्रकाश बिन्दु (Spot Light) को इच्छानुसार घुमाया जाय जिससे कि विषय या पदार्थ के विभिन्न पहलू बारी-बारी,से प्रकाशित हो जॉय। विभिन्नता में एकता ही एकाग्रता की सच्ची व्याख्या है। एकाग्रता के यह माने नहीं कि दिमाग के भीतर केवल एक वस्तु को रखकर दूसरी और सब चीजों को बाहर निकाल दिया जाय, बल्कि इसका अर्थ तो यह है कि क्रमानुसार उन सब भिन्न भिन्न बातों पर विचार किया जाय जो ध्यान के लक्ष्य से सम्बन्ध रखने के कारण एक हैं। इसका अर्थ है विषय के चारों ओर जोर के साथ और सक्रिय ढंग से सोचना। या यों कहिये कि दिमाग को विषय के चारों ओर चलाना जिससे वह उसे हर दिशा से देख लेता है अथवा विषय के बारे में सोचना और जितने अधिक विचार हो सकें उससे जोड़ लेना। अवधान का असली मतलब यही है, और इस प्रकार का अवधान विषय को भीतर से बाहर तक तथा चारों ओर से समझ लेने में सहायक होता है।

एकटक घूरने के समान वाला अवधान न केवल मानसिक क्रिया की हैसियत से बिलकुल बेकार होगा, बल्कि सच तो यह है कि ऐसा अवधान असम्भव है, क्योंकि मनोविज्ञान की खोजोंसे पता चलता है कि ध्यान किसी एक वस्तु पर कुछ सेकण्डों से अधिक देर तक नहीं जमाया जा सकता। अवधान को टिकाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि या तो ध्यान के विषय अथवा लक्ष्य (Object) में परिवर्तन हो, जैसा कि एक सिनेमा के पर्दे पर चलती हुई तसवीरों में होता है, या विषय-धारक (Subject) के मनमें परिवर्तन हो ताकि वह विषय को बारम्बार उलट पलट कर देखता रहे और उसके विभिन्न पहलुओं और सम्बन्धों पर विचार करता रहे। सच तो यह है कि जब हम किसी काम में तल्लीन हो जाते हैं और देर तक उसमें ध्यानावस्थित रहते हैं तो भी हमारा ध्यान थोड़े थोड़े समय के बाद उचटता रहता है और हमें विषय के किसी पहलू को खींचकर मनके सामने वापिस लाने और वहाँ उपस्थित रखने को बार-बार कोशिश करनी पड़ती है ऐसा करने से ध्यान का विषय बढ़ता और फैलता जाता है। यह जीता-जागता, चलता-फिरता और परिवर्तनशील बन जाता है न कि निश्चल या निर्जीव।

(ख) एकाग्रता क्रियाशील है न कि निष्क्रिय

ध्यान देने का उचित तरीका यह है कि विषय को इस तरह व्यवस्थित किया जाय, कि वह क्षण क्षण के बाद एक नये प्रकाश में प्रकट होता रहे। मान लीजिए कि आप रेखागणित के एक साध्य (Theorem) पर मन को एकाग्र करने की कोशिश कर रहे हैं ताकि उसे अच्छी तरह हृदयंगम कर लें। ऐसी हालत में आप उसे बार बार पढ़ने अथवा दोहराने पर ही मत निर्भर रहिये इससे कहीं अच्छा तरीका यह है कि साध्य को एक बार

भली भाँति समझ लेने के बाद उसके विभिन्न सम्बन्धो के बारे मे सोचा जाय, जो युक्ति उसको साबित करने में प्रयोग की गई है उसे उसके मुख्य खंडो में तोड़ लिया जाय और उनके बीच में जो तार्किक सम्बन्ध हैं उनको समझ लिया जाय। कौन से पहले के साध्य उसको सिद्ध करने में उपयोग किये गये और कौन से दूसरे साध्य या अभ्यास या तो अकेले या दूसरे साध्यो की सहायता लेकर उससे निकाले जा सकते हैं, अगर उपपत्ति की कोई वैकल्पिक विधि है तो दोनों विधियों की तुलना करनी चाहिये और देखना चाहिए कि उनके (Mode of Approach) लक्ष्य की ओर प्रगति की रीति और तर्क (Line of Argument) में क्या अन्तर है। आवश्यक बात यह है कि जिस चीज पर ध्यान जमाना उसके साथ कुछ न कुछ कार्य किया जाय। केवल इसी तरह आप उसे अपने ध्यान के केन्द्र में रख सकेंगे। मनको बिलकुल स्थिर रखने का प्रयत्न करने से अवधान नहीं प्राप्त हो सकता बल्कि उसे चलाते रहने से और तत्सम्बन्धित विचारों के वृत्त के अन्दर सोचते रहने से। विचार के किसी विषय पर देर तक ध्यान जमाये रखने की परमावश्यक शर्त यह है कि हम उसे मनके अन्दर लगातार उलट-पलट करते रहें और बारी बारी से उसके विभिन्न पहलुओ और सम्बन्धों पर मनन करते रहें।

(ग) एकाग्रता और मनका भटकना

जब हम किसी विषय पर जोर के साथ ध्यान देते हैं तो इसका यह मतलब नहीं होता कि हमारी चेतना विचार शून्य होकर उस विषय पर घूरती रहती है, बल्कि यह कि उस विषय को विचार का केन्द्र बनाकर उससे सम्बन्ध रखने वाली बातों पर विचार करती है।

नीचे दिये हुए चित्र मे घिरी हुई शक्ल प्रश्न के निकट सम्बन्धों के क्षेत्र को प्रगट करती है।
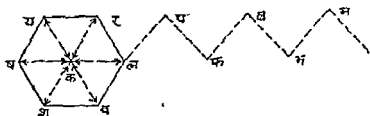
उसका केन्द्र 'क' स्वयं प्रश्न है। थोड़ा सा विचार करने मे यह प्रकट हो जायगा कि आप केवल प्रश्न ही पर अपने ध्यान को जमाकर कोई बात हल नहीं कर सकते। अगर आप ऐसा करने की कोशिश भी करें तो उसका नतीजा सिर्फ इतना ही होगा कि आप इस बात को और भी ज्यादा महसूस करने लगेंगे कि आपके सामने एक प्रश्न है जिसे आप हल नहीं कर पा रहे हैं। अगर आप किसी प्रश्न पर मन को एकाग्र करना चाहते हैं तो आप को चाहिये कि उस प्रश्न को उसके अंगों य, र, ल, व, इत्यादि में विभाजित कर लें और उनमें से हर एक पर बारी बारी से ध्यान दें। चित्र में जो तीर बनाये गये हैं वे हमारे विचार को प्रश्न के केन्द्र से उसके विभिन्न खण्डों तक या खण्डों से फिर केन्द्र को या एक खण्ड से दूसरे खन्ड को जाना प्रगट करते हैं। हम प्रश्न पर उस समय तक ध्यान देते रहेंगे और उसके बारे में सोचते रहेंगे जब तक कि हमारा चिन्तन उन सम्बन्धित विचारों तक सीमित है जो सब केन्द्रीय विषय पर हमको वापस ले जाते हैं। जब हमारा विचार लौट कर केन्द्र पर वापस नहीं जाता तभी ध्यान उचट जाता है तब हम य, र, ल, व, ... को छोड़ देते हैं जो ध्यान के विषय से सम्बन्धित हैं और उड़कर प. फ. ब,..........होते हुए न मालूम कहाँ पहुँच जाते हैं।

इसका हम एक उदाहरण देते हैं। मान लीजिए आप के सामने प्रश्न, जिस पर आप को ध्यान देना है, यह है कि क्या आप अपनी गर्मी की छुट्टी बिताने के लिए मसूरी जाँय ? यह प्रश्न का मर्म है, यानी प्रश्न खुद। प्रश्न पर मनको एकाग्र करने में यह न तो आवश्यक है और न उचित कि आप ध्यान को सवाल के केन्द्र पर गाड़कर जमा दें। बार-बार यह सोचने या रटने से कि क्या आप मसूरी जाँय आप उसके समाधान के जरा भी समीप नहीं पहुँच सकते। करना तो यह चाहिये कि पहले आप ध्यान पूर्वक प्रश्न को उसके खन्डो में विभाजित करलें और फिर बारी-बारी से अपने विचार को उन खण्डों पर केन्द्रित करें अथवा यात्रा का खर्च, मंसूरी में ठहरने और खाने पीने का प्रबन्ध, रेल के सफ़र की कठिनाइयाँ, मसूरी में घूमने फिरने और मनोरंजन के साधन इत्यादि बातों पर जो कि आपके प्रश्न के मुख्य अंग हैं. बारी बारी से विचार करें।' जब तक आप इन बातों और दूसरी सम्बन्धित बातों पर विचार करते रहेंगे तब तक आप अपने प्रश्न पर ध्यान देते रहेंगे कि क्या छुट्टी को मंसूरी में व्यतीत करना ठीक होगा। लेकिन अगर आप रेल के सफर का ख्याल करते करते अपने विचारों को गाड़ियों में सर्वव्यापी भीड़ और तब उस भीड़ के कारण अथवा फौजी माल और फौजों का आना-जाना उसने लड़ाई के कारण लीग आफ नेशन्स (League of Nations) का विफल होना और फिर स्वर्गीय प्रेसीडेन्ट विल्सन इत्यादि पर चले जाने दें तो आपका अवधान भंग हो कर बाह्य मामलों पर भटक गया होगा।

५, एकाग्रता की कमी का अर्थ

एकाग्रता की कमी दो मुख्य रूपों में प्रगट होती हैं। एक तो मन का भटकना और दूसरे तीव्रता की (Intensity) की कमी।

मन के भटकने के माने हैं कि वह किसी एक पदार्थ पर एकाग्र नहीं होता। वह किसी एक चीज़ पर देर तक अपनी शक्तियों को केन्द्रित नहीं कर सकता बल्कि उचंग और झक के आदेशानुसार इधर उधर घूमता रहता है। चेतना प्रवाह में बेमललब के अललटप्पू विचार उठते रहते हैं और अवधान को अपने लक्ष्य से विचलित करके ऐसी बातों पर खींच ले जाते हैं जिनका कि लक्ष्य से कोई लगाव नहीं रहता। हम में से अधिकांश लोग समय समय पर विक्षेप (Mind Wandering) के दोषी होते हैं। हमें ऐसे कितने मौके याद होंगे जब हमने सोचना तो एक प्रश्न पर शुरू किया पर थोड़ी ही देर में अपने को उससे मीलों की दूरी पर पाया, या जब एक सफ़े को पढ़ चुकने पर हम दूसरे पर पहुँचे तो हमें पता चला कि पिछले सफ़े पर हमने जो कुछ पढ़ा था उसमें से हम कुछ भी नहीं जानते, क्योंकि यद्यपि आँखें शब्दों और वाक्यों पर पड़तीं जाती थीं हमारा ध्यान भटक कर कहीं और ही जा पहुँचा था। एक दिमागी काम करने वाला चाहे उसकी बुद्धि कितनी ही तीव्र क्यों न हो जिसे विक्षेपकी बान पड़ गई है और जो एक निर्दिष्ट दिशामें देर तक नहीं सोच सकता सदा एक कच्चा और अयोग्य काम करने वाला बना रहेगा जब कि एक दूसरा व्यक्ति जिसकी बुद्धि चाहे साधारण ही हो पर जो कि बिना बुलाये आने वाले विचारों को रोक सकता है और अपने निर्वाचित विषय में देर तक तल्लीन रह सकता है उस तीव्र बुद्धि वाले विचारक से कहीं अधिक अच्छा काम कर सकेगा जिसकी मानसिक गाड़ी सदा उन भूले भटके विचारों से टक्कर खाकर नष्ट भ्रष्ट होती रहती है जो उसके मार्ग में बिना बुलाये घुस आते हैं।

अनवधानका दूसरा रूप वह है जिसमें मनुष्य ध्यान तो ठीक बातों पर देता है लेकिन काफी ज़ोर से नहीं सोचता। उसमें मान-सिक दबावकी कमी रहती है जिसके फलस्वरूप उसका मानस यंत्र

अपनी पूरी शक्तिका अल्पांश ही उत्पन्न कर पाता है और तदनुसार ही वह निम्न श्रेणी का काम भी देता है। वह इधर-उधर के विचारों को मनसे दूर रखने में चाहे सफल हो जाता हो, मगर प्रश्न पर प्रबलता के साथ आक्रमण नहीं करता। उसके चेतना प्रवाह की धारा बहुत धीरे धीरे बहती है, वह अपनी मानसिक शक्तियों को इकट्ठा करके अपने सामने के विषय पर काफी दृढ़ता से नहीं केन्द्रित करता। उसके विचार चाहे यथेष्ट मात्रा में एकाग्र भले ही हों, मगर वे दुर्बल, निस्तेज और मन्द होने के कारण आग लगाने में विफल होते हैं। यह ऐसा ही है कि जैसे सूरज की किरणों को ग्रहण के समय एक कागज पर केन्द्रित किया जाय। उनमें शक्ति की कमी रहती है और वे कागज को न जला पायेंगी चाहे वे एक ताल (Lens) द्वारा एक बिन्दु पर ही एकत्रित क्यों न करली जॉय। इस प्रकार के अवधान का अर्थ होता है मानसिक आलस्य शक्तिका ह्रास अयोग्यता और असफलता।

६—अवधान के भेद

हम सभी ने ऐसी रोचक कहानियाँ पढ़ी होंगी, ऐसे तेज मुकाबलेके खेल देखे होंगे और ऐसी हृदयग्राही बातचीत या व्याख्यान सुने होंगे, जिन्होंने हमारे ध्यानको जोरसे पकड़ लिया और दूसरी सब बातों को इस तरह दूर हटा दिया कि हमें मुश्किल से यह चेत रह गया कि हमारे चारो ओर क्या हो रहा है। इसके विपरीत, हम एक दूसरे प्रकार के अवधान से भी परिचित हैं जब कि हम एक नीरस कहानी पढ़ते हैं या एक सुस्त खेल को देखते हैं या ऐसे व्याख्यान या बातचीत को सुनते हैं जो अरुचिकर हो या जिससे शीघ्र ही जी ऊब जाता हो। हम इन चीजों पर ध्यान तो देते हैं मगर प्रयास के साथ और ऐसा जान पड़ता है कि हमारे मनकी शक्ति और सभी ओर आकर्षित होती है सिवा उस

माले के जिस पर कि ध्यान देना है। बाहर से सैकड़ों पदार्थ हमें प्रलोभन देते हैं और अक्सर हमें एक झटका देकर ध्यानको अपने लक्ष्य पर वापिस लाना पड़ता है। और जब हम उसे अपने प्रश्न-पर लौटा लाते हैं तो भी हम इस बात को महसूस करते रहते हैं कि हमारा मन पुनः स्वतन्त्र हो जाने के लिये निरन्तर खींचातानी कर रहा है।

उपरोक्त कथन से इस बातका पता चलेगा कि हर दशा में अवधान चेतनाकी एक सक्रिया या गत्यात्मक (Dynamic) अवस्था को प्रकट करता है और उसको जातियों में विभाजित नहीं किया जा सकता। मगर एकाग्रताके विषयको अच्छी तरह समझने के लिये हम अवधान का दो कक्षाओं में वर्गीकरण करेंगे। इस वर्गीकरण का आधार वह कारण है जो ध्यान को प्रेरित करता है अथवा वह तरीका जिससे कि अवधान उत्पन्न होता है। अवधान का एक भेद अनैच्छिक (Spontaneous) अवधान है जो बिना किसी इरादे या कोशिश के पैदा हो जाता है और तबियत के झुकाव या कम से कम रुकावट के मार्ग का अनुसरण करता है। दूसरे प्रकार के अवधान को हम सक्रिय या ऐच्छिक (Voluntary) कह सकते हैं। इस प्रकार का अवधान इच्छा शक्ति या अनुशासित प्रयास (Directed Effort) के कारण उत्पन्न होता है और उसे बहुधा मन के किसी दूसरे विषय की ओर झुक जाने या केवल इधर उधर घूमने की इच्छा के विरुद्ध काम करना पड़ता है।

जिन पदार्थों में हमें रुचि होती है वे खुद हमारे अवधान पर अधिकार कर लेते हैं, और इस प्रकार के अवधान को हम सुविधा के लिये अनैच्छिक या निष्क्रिय (Passive) कहेंगे। पर जब हमें किसी ऐसी बात पर ध्यान देना होता है जिससे हमें स्नेह नहीं तो हमें निरन्तर अवधान को दूसरी चीजों पर भटकने से रोकने के लिए अपनी इच्छाशक्ति को प्रयोग करना पड़ता है।

इस प्रकार के अवधान का नाम हम सक्रिय या ऐच्छिक अवधान रक्खेंगे ।

अनैच्छिक अवधान का आधार रुचि है। जिन चीजों को हम पसन्द करते हैं, जिन्हें करने या पाने का हम आशा करते हैं, जिन बातों में हमारा जी लगता है, ये ही वे चीजें हैं जो हमारे ध्यान पर स्वतः अधिकार कर लेती हैं। उन पर ध्यान देने में कोई प्रयास नहीं करना पडता, बल्कि प्रयास तो ध्यान को उन मनोहर चीजों से हटा लेने में करना पडेगा। यदि अवधान को अपने ही पर छोड दिया जाय तो वह केवल प्राकृतिक नियमों का पालन करेगा और कम से कम प्रतिरोध (Resistance) के मार्ग को ग्रहण करेगा। निष्क्रिय अवधान में हमेशा विचारधारा स्वभावतः उन चीजों की ओर मुड जाती है जो सबमे अधिक आकर्षक हैं। हमारे अवधान का अधिकाश भाग इसी प्रकार का होता है।

सक्रिय अवधान का प्रयोग उस समय किया जाता है जब हम जान बूझकर अपने मन को एक पदार्थ की ओर मुडने के लिये मजबूर करते हैं जब कि उसका झुकाव किसी दूसरी ही ओर होता है। सक्रिय अवधान में या तो प्रयास और रुचि या प्रयास और मानसिक आलस्य के बीच द्वन्द्व रहता है, और उसको जीते बिना हम ध्यानपूर्वक विचार नहीं कर सकते। सक्रिय या ऐच्छिक अवधान का रहस्य तो सकल्प(Will)ही है। अगर हम ऐच्छिक अवधान को देर तक किसी विषय पर लगाये रखना चाहते हैं तो हमें बार-बार सकल्प के प्रयत्न द्वारा उस विषय को मन के सामने वापिस लाना पडेगा। यह मुमकिन है कि शुरू में अवधान किसी पहले से मौजूद रुचि की वजह से पैदा हो जाय मगर यह न समझना चाहिये कि केवल उस दिलचस्पी ही के सहारे अवधान बराबर कायम रक्खा जा सकेगा। बहुधा परिश्रम की आवश्यकता होती है और हमको सघर्ष पर विजय प्राप्त करने और विपरीत

भावनाओं को दूर करने के लिये तैयार रहना चाहिये। सारांश यह है कि हमें अपनी इच्छाशक्ति को काम में लाना चाहिये।

७ रुचि और इच्छा शक्ति

अवधान रुचि और संकल्प की युगल जोड़ी पर अवलम्बित है। इसलिए इन पर थोड़ा और विस्तार के साथ विचार कर लेना आवश्यक है।

अवधान का मूल आधार रुचि है। अगर आप रुचि को जाग्रत करने और क़ायम रखने के प्रश्नों को हल कर लें तो अवधान का प्रश्न आप से आप हल हो जायगा। जिस विषय का आप अध्ययन करने चले हैं यदि उसमें आपका जी लगता है तो अवश्य ही उसमें आपका ध्यान भी लगेगा। अगर आप किसी विषय पर अपने मन को एकाग्र करना चाहते हैं तो उसमें आपको दिलचस्पी पैदा करनी चाहिये। बिना इस शौक या दिलचस्पी के विषय शीघ्र ही जी ऊबा देने वाला बन जाता है। और ज्योंही आपका जी ऊब उठता है त्योंही आप अनजाने में विषय के विरुद्ध एक संरक्षक प्रतिक्रिया (Protective Reaction) उपस्थित कर देते हैं जो आपको उसके आगे और अधिक ध्यान देने से बिलकुल ही रोक देती है।

यदि अवधान रुचि पर अवलम्बित है, तो यह प्रश्न उठता है कि एक व्यक्ति ऐसे काम पर किस प्रकार ध्यान जमावे जिसमें उसको बिलकुल ही रुचि नहीं है ?

अधिकांश लोगों की ऐसी धारणा रहती है कि रुचि पदार्थ में रहने वाला ही कोई गुण है। वास्तव में रुचि तो मनुष्य-मात्र का गुण है न कि मनुष्य के बाहर की वस्तुओं का। स्वयं वस्तुओं में कोई रोचकता नहीं होती, बल्कि रोचकता तो हम लाकर उनमें पैदाकर देते हैं। वास्तव में रुचि तो मन का एक दृष्टि कोण है

पदार्थों की ओर देखने का एक ढंग। जब हम यह कहते हैं कि अमुक पुस्तक रोचक है तो हमारे कहने का अभिप्राय केवल इतना होता है कि हमें उस पुस्तक में दिलचस्पी का बोध हो रहा है। यह आवश्यक नहीं कि रुचि पुस्तक का कोई अन्तरस्थ स्वभाव हो, क्योंकि वही पुस्तक शायद एक दूसरे पाठक को रोचक न जान पड़े। गुल्ली डंडे का खेल एक बच्चे के लिये अत्यन्त चित्ताकर्षक होता है पर एक ज्यादा उमर के व्यक्ति पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अनपेक्ष (Absolute) अर्थ में तो कोई भी चीज रोचक नहीं होती, मगर आपेक्षिक अर्थ में—एक व्यक्ति विशेष के लिये—कोई भी चीज रोचक या चित्ताकर्षक हो सकती है। रुचि एक विषयीगत (Subjective) वस्तु होती है न कि विषयात्मक (Objective)

हमने देख लिया कि रुचि व्यक्ति ही का एक गुण है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात जो ध्यान देने योग्य है वह यह है कि कोई व्यक्ति जन्म से ही कुछ विशेष रुचियों से युक्त और कुछ से विहीन पैदा नहीं होता बल्कि वह रुचियों में बहुत बड़ी सीमाओं के भीतर परिवर्तन कर सकता है। बल्कि सच तो यह है कि मनुष्य की उत्कृष्ट रुचियों में से अधिकांश अर्जित होती हैं न कि सहज या स्वाभाविक, और यह अर्जित रुचियाँ ही जीवन में प्रमुख रहती हैं। विलियम जेम्सका कहना है कि एक युवा पुरुष की अधिकांश रुचियाँ कृत्रिम होती है। वह धीरे धीरे बनकर तैयार होती है। मूलतः मनुष्य के व्यवसाय सम्बन्धी पदार्थ ज्यादातर अरुचिकर होते हैं न कि आकर्षक। मगर जब उनका लगाव ऐसी स्वभावतः उत्तेजित करने वाली बातों से हो जाता है जैसे व्यक्ति का निजी हित-साधन या उसकी सामाजिक जिम्मेदारियां और विशेष कर अभ्यास पड़ जाने के कारण, वे दिल में ऐसी जगह कर लेती हैं

कि मनुष्य को उनके सिवा दूसरी बातों का मुश्किल से ही शौक रह जाता है।

८. रुचियाँ किस तरह पैदा की जाती हैं

रुचियों के प्रश्न पर थोड़ा और विचार करना और यह देखना कि शौक किस तरह पैदा किया जाता है, शिक्षाप्रद होगा। उदाहरणतः ऐसा क्यों होता है कि एक विद्यार्थी का जी गणित में खूब लगता है पर वह इतिहास से घृणा करता है जब कि उतनी ही बुद्धि वाला और वैसी ही शिक्षा पाये हुए एक दूसरा विद्यार्थी इतिहास से प्रेम करता है पर गणित से घबराता है ?

इस अन्तर के कारण का पता लगाने के लिये हमें उन दोनों के समस्त पिछले अनुभव के प्रारम्भ की जाँच करनी चाहिये और उनके तमाम मानसिक संगठन का विश्लेषण करना चाहिये। हम यह विचार कर सकते हैं कि मन के भीतर जो कुछ है, अथवा ... सभी पूर्व संचित अनुभूति यह मानों परस्पर सम्बद्ध और भावना मिश्रित ज्ञान की बहुत सी भाव ग्रन्थियों से मिलकर बनी है। इन जटिल समूहों ने अपना जीवन छोटे छोटे केन्द्रों की अवस्था से आरम्भ किया था, पर सम्बन्धित विचारों को सोख कर और पचा कर और अपने शरीर से एकाकार कर के वह धीरे धीरे बढ़ते गये। जितनी बड़ी वे ग्रंथियाँ हो जाती हैं उतनी ही तीव्र उनकी पाचन शक्ति भी हो जाती है और उतना ही अधिक वे नये खाने के लिये लालायित भी रहती हैं। भौतिक पिण्डों की नाईं ये ज्ञान के विषम ढेर भी, जो कि अन्तःक्षोभ (Emotion) से आविष्ट (*Charged*) होते हैं, रुचि के संगठित व्यूहों (*System*) की तरह कार्य करते हैं अथवा समान विचारों को आकर्षित करते हैं और असम्बन्धित, असंगत, या विपरीत विचारों को हटा देते हैं।

यह आकर्पण की शक्ति आकर्पण करने वाली भाव ग्रन्थि के आकार के अनुपात में ही बदलती रहती है और यह रुचि की प्रवलता है जिसका वर्णन हम कर रहे हैं। जब हम किसी नये विपय का अध्ययन आरम्भ करते हैं उस समय उसके सम्बन्ध मे हमारा ज्ञान नहीं के बाराबर होता है और उसी के अनुरूप उसकी रुचि की तेजी भी कम होती है—जिसका अर्थ यह है कि वह बहुत कम अवधान को उत्तेजित करता है। ज्यों-ज्यों नयी ग्रंथि पहले से जमी हुई दूसरी ग्रन्थियों की तुलना में बढ़ती जाती है त्यों त्यों उससे सम्बन्ध रखने वाले विचारों के मार्ग का प्रतिरोध भी उत्तरोत्तर घटता जाता है और उसकी आकर्पण शक्ति अथवा रुचि भी उसी अनुपात मे तीव्र होती जाती है। तात्पर्य यह कि जैसे जैसे किसी विपय के बारे में हमारी जानकारी बढ़ती जाती है; वैसे ही उसमें हमारी रुचि भी बढ़ती जाती है । जब हमारा विद्याभ्यास उन्नति कर जाता है, तो ज्यादातर यह देखने में आता है कि जिस विपय मे हमारी अभिज्ञता अधिक होती है उसी में हमारी रुचि भी अधिक होती है बनिस्बत एक दूसरे मजमून के जिसमें हमारा विचार भण्डार अपेक्षाकृत न्यून है। इससे स्पष्ट हो जायगा कि यदि आत्महित या किसी दूसरी प्राकृतिक प्रेरणा द्वारा यथेष्ट उत्तेजन मिले तो एक मनुष्य इतिहास प्रेमी होने के साथ साथ गणितज्ञ भी बन सकता है, और एक गणितज्ञ एक इतिहासज्ञ बन सकता है। जिन दिमाग़ों ने विशिष्ट प्रकार की शिक्षा पायी है (Special Mind), उनमें कोई विशेप ग्रंथि (Complex) सारे व्यक्तित्व पर शासन करने लगती है, जैसे एक वकील के दिमाग पर कानून का, गणितज्ञ के मन पर गणित का और वैद्य के मन पर चिकित्सा शास्त्र की ग्रंथि का प्रभुत्व हो जाता है। प्रत्येक भाव ग्रन्थि बहुत सी छोटी-छोटी ग्रन्थियों से मिल कर बनी होती है और उसकी तमाम रचना

बड़ी पेचीदा होती है। अगर एक अच्छी तरह जमी हुई ग्रन्थि के प्रभुत्व के विपरीत किसी अल्पाकार ग्रन्थि (Complex) को बढ़ाना हो तो संकल्प (Will) को काम में लाना पड़ेगा ताकि वह उस छोटे समूह की रक्षा उसके बलवान प्रतियोगी के विरुद्ध कर सके। इच्छाशक्ति ही अभीष्ट दिशा में प्रारम्भिक आवेग (Impetus) को पैदा करती है, शुरू के प्रतिरोध को पराजित करती है, और ऐसा कर लेने के बाद मनुष्य को उन सब मनोवृत्तियों का विरोध करने का सहायक होता है जो दूसरी दिशाओं से घिर कर आती रहती हैं और हमारी रुचि को और अधिक प्रबलता से आकृष्ट करने का प्रयत्न करती रहती हैं। व्यवसाय या सकल्प (Will) सन्तरी के समान खड़ा होकर बिना बुलाये हुए चुपके से घुस आने वाले विचारों को रोकता है और ज्योंही बेमतलब के विचार चेतना के द्वार पर दिखाई देते हैं, त्योंही उन्हें हटा कर दूर कर देता है।

जैसे जैसे नई ग्रन्थि पुरानी ग्रन्थियों के मुकाबले में प्रबल होती जाती है, वैसे ही उसके विरुद्ध प्रतिरोध भी धीरे धीरे घटता जाता है जिसका परिणाम यह होता है कि अभ्यास और अनुशासन द्वारा कुछ समय बाद एक व्यक्ति इस बात की आशा कर सकता है कि सूखी से सूखी दिखाई देने वाली सामग्री में भी उसे आनन्द मिलने लगेगा और इस प्रकार वह उसे अपने ध्यान के केन्द्र पर इच्छानुसार कायम रख सकेगा।

९—सक्रिय अवधान किस प्रकार निष्क्रिय अवधान में परिणत हो जाता है

अब हमने देख लिया कि निष्क्रिय अवधान रुचि से पैदा होता है पर एक रुचि भी ऐसी होती है जो अवधान से उत्पन्न होती है और फिर अवधान को सहारा देती है। हमारी अर्जित रुचियों में

से अधिकांश के सम्बन्ध मे यही बात लागू होती है। शुरु मे एक मनुष्य को एक नये काम या नये विषय से चाहे अनुराग न हो और उस पर ध्यान देने में चाहे उसे कठिन परिश्रम करना पड़े लेकिन शुरु मे की हुई मेहनत से शीघ्र ही थोड़ा ज्ञान और थोड़ी निपुणता प्राप्त हो जाती है और धीरे धीरे जैसे जानकारी और निपुणता बढ़ती जाती है मनुष्य उतना ही काम में अधिकाधिक दिलचस्पी लेने लगता है। इस तरह धीरे धीरे रुचि बढ़ने लगती है और इसके साथ ही साथ काम पर ध्यान देने में उत्तरोत्तर कम परिश्रम करना पड़ता है, यहाँ तक कि अन्त मे उस पर ध्यान आप जमने लगता है। यद्यपि आरम्भ में अवधान ने रुचि को उत्पन्न किया, किन्तु बाद मे वही अर्जित रुचि अवधान को स्थिर रखती है और यह बात एक नियम के रूप मे लिखी जा सकती है कि ऐन्छिक या सक्रिय अवधान की प्रवृत्ति यही रहती है कि वह अन्त मे अनैच्छिक अवधान में परिणत हो जाय। बहुत से विद्यार्थी अपने निजी अनुभव मे ही इस नियम के दृष्टान्त दे सकेंगे कि किस प्रकार बीजगणित और भौतिक विज्ञान जैसे विषय, जो शुरू में बड़े सूखे और कठिन दीख पड़ते थे बाद में इतने आसान और रुचिकर हो गये कि उन्हीं में उन विद्यार्थियों ने, जो पहले उनसे डरते थे पुरस्कार और प्रतिष्ठा प्राप्त की। एक ओर रुचि और दूसरी ओर विज्ञता और निपुणता में सीधा सम्बन्ध है। ये दोनों एक दूसरे को प्रोत्साहित करते हैं।

वैज्ञानिकों का कहना है कि प्रकृति मे कोई भी चीज इतनी कुरूप और अप्रिय नहीं कि उसे तेज रोशनी द्वारा सुन्दर तथा मनोहर न बनाया जा सके। इसी प्रकार मन के प्रकाश को केन्द्रित कर लेने से सूखी से सूखी चीज भी चित्ताकर्षक बन जाती है और किसी विषय या हुनर पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेने से उस की नीरस बातें भी सरस बन जाती हैं।

१०—एकाग्रता में बाधाएँ

एकाग्रता में बहुत सी बाधाएँ आती हैं जिनमें कुछ तो आन्तरिक या विषयीगत (Subjective) होती हैं और कुछ बाह्य होती हैं। यहाँ पर हम कुछ की चरचा करेंगे जैसे—स्वाभाविक आलस्य या कठिन परिश्रम के प्रति अनिच्छा, मन का चंचल होना या मन के भटकने की ओर स्वाभाविक झुकाव, चिन्ता और घबराहट, थकावट, उत्तेजना से प्रेम या रुचियों की बहुतायत ।

स्वाभाविक आलस्य या मन की अस्थिरताको सुधारने के लिये इच्छा-शक्ति अथवा संकल्प (Will) को काम में लाना चाहिये। घबराहट चिन्ता व भय तीनों ही रुचि, अवधान और स्मृति को शिथिल कर देते हैं। व्यग्रता और व्याकुलता को हटा कर उनकी जगह पर साहस, आशा, आत्मविश्वास और ईश्वर में श्रद्धा के भावों को भर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त इस बात को भी अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि चिन्ता और घबराहट से कोई परिस्थिति सुधारी नहीं जा सकती बल्कि और भी बिगड़ जाती है। भय चिन्ता और मन की चंचलता जैसे दोष बहुधा आत्म सूचना (Auto-Suggestion) के अभ्यास द्वारा दूर किये जा सकते हैं। आत्म सूचनाका अर्थ है कि आप अपने आपको जानबूझ कर सचेत रूपसे इन दुर्बलताओं को पराजित करने के लिये आदेश दें। रात को सोने से ज़रा पहले ही आत्म-सूचना का अभ्यास करने के लिये सबसे उत्तम समय है।

जब मन थका हुआ हो उस समय उसे ज़बरदस्ती किसी काम पर लगाना बड़ी भूल है। शक्ति-व्यय के बाद शक्ति-संचय की बारी आनी चाहिये और मन की वास्तविक थकावट के लिये मानसिक विश्राम अत्यावश्यक है।

बहुत सी रुचियों के रखने का स्वाभावता परिणाम होता है कि दिमाग इधर-उधर भटकता रहता है क्योंकि ऐसी अवस्था में अवधान को अपने आप को एक बहुत बड़े क्षेत्र पर फैला देने की आदत पड़ जाती है और मन सदा एक वस्तु से दूसरी पर कूद फाँद करने का अभ्यस्त हो जाता है। (कोई भी मनुष्य बहुत से विषयों पर ध्यान देकर उन सब में सिद्धहस्त नहीं बन सकता।) अपनी मानसिक शक्तियों से सबसे उत्तम ढङ्ग से काम निकालने के लिये यह आवश्यक है कि अवधान के विस्तार को छोटा करके उसके केन्द्र के तेज को बढ़ाया जाय।

इनके अलावा एकाग्रता के मार्ग में बहुत सी बाहरी अड़चनें भी उपस्थित हो सकती हैं जैसे शोर गुल, अनुपयुक्त प्रकाश इत्यादि। एकाग्रता के लिये सबसे उत्तम वातावरण प्राप्त करने के लिये ऐसी बाधाओं को बिलकुल दूर कर देना आवश्यक है। पढ़ने की कुर्सी ऐसी होनी चाहिये जिसमें बैठने में आसानी हो और बैठने का ढङ्ग भी आराम का होना चाहिये जिससे कि उन मांसपेशियों पर जो शरीर को थामे हुये हों कम से कम जोर पड़े। किताब को इस प्रकार रखना चाहिये कि उसको पकड़ने में कम से कम परिश्रम करना पड़े। रोशनी बायें कन्धे के ऊपर से आनी चाहिये, विशेष कर लिखते समय, जिससे कि लिखने वाले की परछाई लिखावट पर न पड़े। आँखों को कभी-कभी क्षण भर के लिये बन्द कर देना चाहिये जिससे कि उनकी मांसपेशियों को विश्राम मिलता रहे और थकावट की प्रगति में रुकावट पड़े। इसी तरह शरीर की थकान को कम करने के लिये कभी-कभी बैठने की स्थिति को बदल देना; या उठकर चलना फिरना लाभ दायक सिद्ध हो सकता है। कपड़े ढीले होने चाहिये जिससे खून के दौरे के लिये काफी जगह रहे। वायुमंडल स्वास्थ्यप्रद होना चाहिये और उसमें शोरगुल या अन्य तरह की आवाजों की बाधायें भी न होनी चाहिये। भर पेट भोजन के बाद

तुरन्त ही ऐसे काम में न लग जाना चाहिये जिसमें एकाग्रता की आवश्यकता हो। ऐसे समय को तो हलके प्रकार की पुस्तकों के पढ़ने या तथ्यों के संग्रह करने या ऐसे काम में ही लगाना चाहिये जिसमें दिमाग की ज्यादा आवश्यकता न हो।

११ दत्तचित्तता की उन्नति करना

यद्यपि अवधान निस्सन्देह ही कुछ हद तक एक प्राकृतिक देन है, फिर भी शायद मन की कोई दूसरी क्रिया ऐसी नहीं है जिसमें शिक्षा द्वारा अवधान से अधिक उन्नति की जा सके। और जैसा कि शरीर और मन की दूसरी शक्तियों के लिये भी सत्य है, अवधान की उन्नति का रहस्य उसका उपयुक्त प्रयोग ही है। इसी बात को दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि ध्यान देना ही अवधान को शिक्षित करने का एकमात्र उपाय है। अवधान की प्रकृति और नियम के बारे में चाहे कितना ही वाद-विवाद किया जाय, चाहे उनको कितनी ही अच्छी तरह क्यों न समझ लिया जाय पर उससे कोई लाभ नहीं हो सकता जब तक कि एकाग्रचित्त से काम करने का अभ्यास न किया जाय।

मन को एकाग्र करने की आदत डालने के लिये बहुत से अभ्यासों का सुझाव किया गया है। हम यहाँ पर केवल दो ही का उल्लेख करेंगे।

एक अभ्यास यह है कि हर रोज अपनी किसी प्रिय तथा उपयोगी पुस्तक या पत्रिका का कुछ भाग पढ़ लीजिए, और फुरसत के समय जैसे ट्रेम, बेस या रेल से सफर करते हुए या किसी बाग में बैठे हुए, ध्यान पूर्वक यह विचार कीजिए कि उस दिन आपने क्या पढ़ा था, उस विषय पर आप पहले कितना जानते थे और आपने जो नई बात पढ़ी उसका आपके पिछले ज्ञान से क्या सम्बन्ध है। इस अभ्यास से मन को इच्छानुसार काम में

लगाने, अथवा एकाग्रता, की आदत तो पड़ेहीगी, साथ ही साथ पढ़ी हुई सामग्री पर आपको प्रभुत्व पाने में भी सहायता मिलेगी क्यों कि इस उपाय से आप उसे अधिक समझ सकेंगे और याद भी कर सकेंगे।

दूसरा अभ्यास यह है की रात को सोने से पहले या किसी और अवकाश के समय दिन भर की या हफ्ते भर की तमाम महत्वपूर्ण तथा शिक्षाप्रद घटनाओं का पुनरावलोकन कर लीजिए। जो कुछ हाल मे किया हो उसको जांच कर लेनी चाहिये और जो कुछ आप करने वाले हों उस पर भी विचार कर लेना चाहिये, किस दिशा में आप जा रहे हैं और किस ओर आप जाना चाहते हैं; अपने सुख और शान्ति में किस प्रकार आप वृद्धि कर सकते हैं, इन सब बातों पर कोई आध घंटा मनन कर लेने की आदत आप को डालनी चाहिये। इससे आप अपने मन को इच्छानुसार प्रयोग करने की आदत डालेंगे और आपको चरित्र गठन और आनन्द का भी लाभ होगा।

१२ एकाग्रता की आदत

किसी निपुणता में सुगमता और मितव्ययता तभी प्राप्त हो सकती है जब कि उद्योग को एक आदत में परिवर्तित कर लिया जाय। जितना ही अधिक किसी काम को एक ढर्रे पर डाल दिया जायगा उतना ही अधिक अवकाश मन को आगे का काम करने के लिये मिलेगा। जब मानसिक अनुशासन यंत्रवत, या आप ही आप काम करने वाला. बन जाता है तो मनुष्य को लाभ होता है, क्योंकि इससे शक्ति की बड़ी बचत होती है। हर विद्यार्थी को अपनी अधिक से अधिक दिमागी ताकतों को इस तरह संगठित करने की कोशिश करनी चाहिये जिससे उनको ऐसी आदत पड़ जाय कि आवश्यकता पड़ने पर वे स्वतः काम कर सकें।

इसी तरह अवधान को शिक्षा देने में हमारा उद्देश्य यह होना चाहिये कि मन और ज्ञानेन्द्रियों को तन्मयता से काम करने की आदत डाली जाय और यह अभ्यास केवल उसी तरह रोपित किया जा सकता है कि जहाँ और जब भी ध्यान देने की जरूरत हो वहाँ पर हम एकाग्रचित्त से ध्यान दें। चाहे काम करना हो चाहे खेलना, किताब पढ़ना हो या किसी अभ्यागत से बात-चीत करना, एक कठिन पाठ को पढ़ना हो या एक नीरस व्याख्यान या बातचीत को सुनना हो, लेकिन यदि उन पर ध्यान देना ही है तो हमारे लिये उचित है कि उन पर एकाग्र मन और सम्पूर्ण हृदय से ध्यान दें—हमेशा न कि ठहर ठहर कर, उद्यम के साथ—क्या कि यदि कोई काम करने योग्य है तो उसे भली भाँति ही करना चाहिये। इसके अलावा, जो कोई भी जान बूझ कर ऐसा अभ्यास डालेगा उसे बहुधा यह पता चलेगा, जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं कि नीरस और अरोचक काम भी रोचक बन जाता है। पर यदि वह कभी रोचक न भी बन पावे तो भी ऐसा व्यक्ति कम से कम आत्म अनुशासन की आदत डाल रहा है जो उसके तमाम जीवन में अमूल्य सिद्ध होगा। इसके विपरीत एक मनुष्य जो कभी ध्यान नहीं देता और कभी मन को जमा कर काम नहीं करता सिवाय ऐसे अवसरों के जब उसकी रुचि उत्तेजित हो गई हो और जो कभी अवधान को बलपूर्वक लगाने की कोशिश नहीं करता वह एक ऐसी आदत डाल रहा है जिससे उसकी मानसिक शक्तियों का विनाश हो जायगा।

आठवाँ अध्याय

पढ़ने की कला

१—भाषा का महत्व

मनुष्य ने जो यंत्र बनाये हैं उनमें सबसे उपयोगी, महत्त्वपूर्ण और अधिक काम का यंत्र भाषा है। कुत्तों की यदि एक ऐसी जाति हो जो मस्तिष्क में मनुष्य के समान हो, तो मनुष्य के बराबर दिमाग होते हुए भी वे कुत्ते मनुष्य के बराबर उन्नति कदापि नहीं कर सकते यदि उनके शरीर में बोलने का यंत्र मनुष्यों की सी ही ऐसी भाषा पैदा करने में असमर्थ हो जो शब्दों से भरपूर हो और जिसके द्वारा विचार और भाव के सूक्ष्म भेदों को साफ-साफ प्रकट किया जा सके। कारण यह कि उनके पास विचारों को व्यवहार में लाने के साधन न होंगे और जब एक जाव विचारों को प्रकट करने या दूसरी तरह काम में लाने में असमर्थ है तो वह. विचारों का उत्पादन ही क्यों करेगा और दूसरों को मालूम भी कैसे पड़ेगा कि उसके पास विचार हैं? इसी प्रकार प्राचीन जातियों के लोगों में बहुतों के पास उतनी ही मानसिक शक्तियाँ रहती हैं जितनी उनके सभ्य भाइयों के पास। किंतु यदि उनकी भाषा थोड़े से ही शब्दों तक सीमित है जिनमें हर एक के बहुत से भिन्न भिन्न अर्थ हैं, तो वे लोग उतनी अच्छी तरह न सोच सकेंगे जितना कि उनके सभ्य भाई।

भाषा केवल दूसरों के पास सम्वाद भेजने या उनसे वार्तालाप करने का ही साधन नहीं वरन् उस सम्वाद के लिए सामिग्री पैदा

करने का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन भी है। भाषा विचारों को व्यक्त तो करती ही है, उनके उत्पादन का भी मूलाधार है। हम लोगों के सोचने, कल्पना करने पहचानने और याद करने की क्रियाओं का बहुत बड़ा अंश शब्दों पर निर्भर करता है और ऐसा जान पड़ता है कि हम किसी आदमी, वनस्पति या पहाड़ को तब तक नहीं जानते जब तक हमें उनके नामों का पता न हो जाय। किसी विज्ञान सम्बन्धी विषय (Technical Subject) में दक्षता प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि पहले हम उसकी विशेष शब्दावली से पूर्ण परिचय प्राप्त करलें।

किसी भाषा पर अधिकार प्राप्त कर लेने से अनेकों लाभ होते हैं। सबसे प्रत्यक्ष लाभ तो यह होता है कि उस भाषा में जो कुछ ज्ञान का भण्डार है, वह अपना हो जाता है, मन सुन्दर उत्कृष्ट और उपयोगी विचारों, भावनाओं, और प्रेरणाओं से भर जाता है। दूसरा लाभ जो और भी महत्त्वपूर्ण है, चाहे देखने में इतना स्पष्ट न हो, यह है कि मन शिक्षित बलिष्ट और फुर्तीला बन जाता है जिससे उसकी कार्य क्षमता और योग्यता में बड़ी वृद्धि हो जाती है। अध्ययन द्वारा संचित की हुई विचार सामग्री और सुशिक्षित विचार-यन्त्र, अर्थात् प्रवीण मन, दोनों ही मनुष्य के जीवन में सफलता, सम्मान, सुख और आनन्द प्राप्त करने में सहायक होते हैं। मानसिक दक्षता बढ़ाने के लिये अध्ययन के बराबर गुणकारी दूसरा उपाय नहीं।

भाषा पर अधिकार प्राप्त करने का एक तीसरा महत्त्वपूर्ण लाभ है, जिससे कदाचित बहुत से लोग परिचित न हों। इससे व्यक्ति के परिचित शब्दों की पूँजी में बड़ी वृद्धि हो जाती है। इस कथन का महत्त्व शीघ्र ही समझ में आजाएगा यदि हम इस बात पर विचार करें कि शब्द ही विचार के औज़ार हैं और बिना शब्दों के कोई सोच नहीं सकता। अगर आप एक न्यून शब्दावली

(vocabulary) से ही सन्तुष्ट रहते हैं तो आपको न्यून विचारों से भी सन्तुष्ट रहना पड़ेगा और अपने दुर्बल विचारों को भी दूसरों पर प्रकट करने में आपको कठिनाई होगी।

व्यवहारिक मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा इस बात का पता लगाया है कि किसी व्यक्ति की शब्दावली उसकी मेधा (Intelligence) का सच्चा प्रतीक है और जीवनमें सफलता का बृहत शब्दावली से एक घनिष्ट सम्बन्ध है। जिन्होंने इस विषय में अनुसंधान किया है वह इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि बड़ी शब्दावली सफलता के पहले आती है न कि बाद में। अधिकांशतः यह देखने में आता है कि जो लोग ऊँचे पदो पर हैं उनका शब्दज्ञान-उन लोगों से कहीं बढ़ा चढ़ा है जो नीचे पदों ही पर रुक गये हैं। इसी प्रकार यह भी अनुभवसिद्ध बात है कि जिन विद्यार्थियों का शब्दभण्डार बड़ा होता है वे भावी जीवन में बड़ी सफलता प्राप्त करते हैं और ऊँचे पदों तक पहुँचते हैं।

भाषा में योग्यता प्राप्त करने की अपेक्षा अधिक उपयोगी और सीखने योग्य हुनर बहुत थोड़े ही हैं। अच्छी तरह पढ़-लिख और बोल सकने वाले आदमी को भली प्रकार सोचने और अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करके प्रभावोत्पादक बनाने की भी सुगमता रहती है।

इस विषयकी महत्ताको सोचते हुए यह स्वाभाविक ही है कि मनोवैज्ञानिक इस ओर अधिक ध्यान दें। वास्तव में उन्होंने ऐसा किया भी है और उनकी छान-बीन के मुख्य निष्कर्ष बिल्कुल आश्चार्यचकित करने वाले हैं। उनसे प्रकट होता है कि अधिकांश लोग भाषा को बिल्कुल फूहड़ ढंग से व्यवहार करते हैं। वे जब पढ़ने की चेष्टा करते हैं तो पाठका साधारण अर्थ या उसकी मोटी-मोटी बातें समझ जाते हैं पर उसके मानसिक संस्कार *Impressions*

गलत होते हैं और उनकी पठन गति भी मन्द रहती है। वे जब लिखने का प्रयत्न करते हैं तो अपने विचारों को अस्पष्ट, अशुद्ध और निर्बल ढंग से व्यक्त करते हैं, जिसका कुछ कारण तो यह है कि वे केवल थोड़े से शब्दों का प्रयोग करते हैं और कुछ यह कि सुन्दर वाक्य रचना करने में वे असमर्थ रहते हैं। बोलने में दुर्बलता कितनी व्यापक है इसको तो प्रयोग द्वारा सिद्ध करने की कोई आवश्यकता ही नहीं। परन्तु जहाँ इतना निराशामय अन्धकार है वहीं उसमें आशामय प्रकाश की झलक भी है, वह यह कि एक समझदार आदमी भाषापर अधिकार प्राप्त करने वाली अपनी निपुणता में आश्चर्यजनक गति से उन्नति कर सकता है। वह पढ़ने, लिखने तथा बोलने में निस्सन्देह सफलता प्राप्त करना सीख सकता है, बशर्ते कि वह उसके लिए इच्छुक हो और विधिपूर्वक प्रयत्न भी करे।'

२—पढ़ने में त्रुटियाँ

यदि आपसे कोई यह कहे कि आप पढ़ना नहीं जानते तो कदाचित आपको बुरा लगे। निस्सन्देह आप पढ़ सकते हैं। यह तो आपने बहुत बचपनमें ही सीखना आरम्भ कर दिया था और स्कूलसे निकलते निकलते तो आप एक निपुण पाठक बन गये थे। मगर सच बात यह है कि यह स्वीकार करना तो स्वयम् ही शक पैदा करता है कि आप कुशल पढ़ने वाले नहीं हैं; क्योंकि यदि स्कूल छोड़ने के बाद आपने पढ़नेमें कोई उन्नति नहीं की, तो अवश्य आप अपूर्ण पाठक ही रह गए। यह देखने में आता है कि प्रायः लोग पढ़नेमें एक हद तक तरक्की करते हैं और उसके आगे रुक जाते हैं। जब आप स्कूलमें थे उस समय की अपेक्षा कहीं अधिक आवश्यकता आपको इस समय है पढ़ने में दक्षता प्राप्त करने की। आपको निस्सन्देह बड़ा लाभ हो यदि आप भाषा-यंत्रको व्यवहार करने की अपनी योग्यता को बढ़ा सकें।

यह कहने से हमारा क्या तात्पर्य है कि आप उतने कुशल पाठक नहीं हैं जितना होना चाहिए ? हमारा मतलब कई बातों से है जो सभी महत्त्वपूर्ण हैं। पहली बात यह कि आप किसी पैराग्राफ या अध्याय को पढ़ लेनेके बाद विस्तार पूर्वक नहीं बता सकते कि आपने क्या पढ़ा था। बड़े आश्चर्यकी बात है कि इस विषय में परीक्षा लेने पर कितने ही लोगों में गम्भीर दुर्बलता मिलती है।

आप उतने कुशल पाठक नहीं हैं जितना होना चाहिए ऐसा कहने से हमारा दूसरा अभिप्राय यह है कि आप आवश्यकता से कहीं अधिक धीरे-धीरे पढ़ते हैं। अनुसंधान से यह सिद्ध हो गया है और इसलिये इस कथन पर विश्वास करलेना चाहिए कि हममें से बहुतेरे अपने पढ़नेकी सामान्य गतिमें थोड़े परिश्रम से भी बड़ी वृद्धि कर सकते हैं। यदि आप ऐसा कर सकें तो क्या यह हर प्रकार से उपयोगी सिद्ध न होगा ?

तीसरे हमारा मतलब यह है कि पढ़नेकी कुछ विशेष, पर अत्यन्त ही उपयोगी और महत्त्वपूर्ण क्रियायें हैं जिन्हें आप नहीं जानते। आपको इस योग्य होना चाहिए कि अपनी सामान्य गति की दूनी चालसे सरसरी तौरसे पढ़ सकें जिससे तत्त्वकी बातें या निचोड़को तो निकालते चले जांय—जैसे दूध में से मलाई--पर साथ ही साथ पढ़ी हुई चीजका साधारण अर्थ भी बहुत न छूटने पावे। क्या आप ऐसा कर सकते हैं ? यदि आप किसी निपुण व्यक्ति को उस समय देखें जब कि वह अपने विशेष विषयको पढ़ रहा हो, तो आप देखेंगे कि वह आद्योपान्त कदाचित ही कभी पढ़ता हो—वह केवल इधर-उधर निगाह डालता है और आवश्यक तत्वों एवम् मुख्य-मुख्य निर्णय फलों को चुन लेता है, और शेष सब बातों को उन्हीं के सहारे समझ लेता है। वह अपने विषयको हर पंक्तिपर रेंग रेंग कर पढ़ने वाले परिश्रमी व्यक्तिकी अपेक्षा

अधिक तेजी से पढ़ नहीं लेता वरन पूरा पढ़ ही चुकने पर उसके बारेमें अधिक ज्ञान भी प्राप्त कर लेता है।

आपको इस योग्य होना चाहिए कि घटनाओं और तथ्यों को चुननेके लिए एक ढंगसे पढ़ सकें और सामान्य विचारोंको ग्रहण करने के लिए एक दूसरे ढंगसे। इसके अतिरिक्त पढ़नेकी एक और विशेष प्रकार की क्रिया होती है—पढ़ी हुई सामग्री को संक्षेप करने उसकी रूपरेखा (Outline) तैयार करने और उसके नोट बनानेके उद्देश्य से पढ़ना प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि बड़े तेज दिमाग वाले भी ऐसी परीक्षा लेने पर जिसमें उनसे लेखक के विचारों के भाग-प्रतिभाग, उनके क्रम और आपस के सम्बन्ध को ठीक-ठीक बताने को कहा जाय—बहुधा असफल हो जाते हैं। जब वह इतना नहीं कर सकते तो भला लेखक के अर्थ को कैसे समझ सके होंगे ?

अब उन उपायों की ओर ध्यान दें जिनसे पढ़ने में तरक्की की जा सकती है।

३—शौक से पढ़िये

किसी काम से पूरा पूरा लाभ और आनन्द उठाने के लिये यह आवश्यक है कि आप उसे उत्साह और एकाग्रमन से करें। इसी तरह यदि आप अपनी पढ़ाई से अपने दिमाग की तरक्की करना चाहते हैं तो आपको चाहिये कि जो कुछ भी आप पढ़ें उसे उत्साह, बल और पूरे मन से पढ़ें। पढ़ कुछ रहे हैं और ध्यान कहीं और है, ऐसी पढ़ाई से न केवल समय नष्ट होता है वरन् बहुचित्तता की बान भी पडती है जिससे मन की शक्तिया, बजाय बलवती बनने के, और भी शिथिल हो जाता हैं। पढ़ते समय आप पढ़ाई में तल्लीन होने की आदत डालिए, ऐसा करने ही से आप लेखक से सूक्ष्म विचारों को समझ सकेंगे और उन्हें याद भी रख सकेंगे।

४—उद्देश्य से पढ़िये

पढ़ने के विषय पर की गई खोज से एक बहुत बड़ा सिद्धान्त यह निकलता है कि पढ़ने की सारी क्रिया उद्देश्य पर निर्भर है और उद्देश्य के साथ-साथ बदल जाती है। छपे हुए पृष्टको, एक उद्देश्य के साथ अपने मस्तिष्क मे उतार लेना ही अच्छी पढ़ाई है। हर प्रकार का पढ़ना एक विशेष (Specialised) कार्य है क्योंकि किसी पृष्टको पढ़ते समय आप उस पर लिखी हुई हर बात का नहीं देखते बल्कि केवल उन्हीं बातों को जिन्हें देखने के लिये आप इच्छुक हैं। यदि कोई यह मानता हो कि मैं पढ़ते समय पृष्ट पर लिखी हुई हर चीज को देख लेता हूँ तो यह न केवल सत्य के विपरीत होगा वरन् असम्भव भी। क्योंकि यदि वह तथ्यों या घटनाओं पर विशेष ध्यान देता है तो उससे उसकी मोटी-मोटी सामान्य बातें अथवा अनुगम छूट जाती है। और

यदि वह इन दोनों को ग्रहण करता है तो सम्भव है कि वह पढ़ी हुई सामग्री के साहित्य-चातुर्य को बिल्कुल ही न देख पावे।

अगर आप चाहते हैं कि आपका पढ़ना लाभदायक हो, तो यह अत्यावश्यक है कि आप अपने पढ़ने का निश्चित उद्देश्य निर्धारित कर लें, और यदि चाहते हैं कि आपकी पढ़ाई का कोई मूल्य हो, तो उसे आप नियमशील अवश्य बनावें।

आप क्यों पढ़ना चाहते हैं? किसी रुचिपूर्ण विषय को समझ कर उससे शिक्षा लेने के लिए, या किसी दूसरी भाषा को सीखने के लिए, अथवा अपने कारोबार सम्बन्धी ज्ञान की वृद्धि के लिए? इस प्रकार की कोई प्रेरणा आपको बना लेनी चाहिए जिससे आपके पढ़ने को लक्ष्य और उत्साह मिले। यह प्रेरणा कैसी हो यह आपके कारोबार और आपकी जीवन-स्थिति पर निर्भर है। विद्यार्थियों के लिए परीक्षा और व्यापारियों के लिए अपनी आमदनी बढ़ाने की इच्छा प्रेरक का काम करेगी।

एक उद्देश्य निश्चित कर लेने पर वह पढ़ने में आपके लिए एक प्रबल आवेग का काम करेगा और मन को एकाग्र करने में भी सहायता पहुँचायेगा क्योंकि रुचि या उद्देश्य ध्यान को स्थिर करने के प्रधान साधनों में से एक है।

अच्छा तो यह होगा कि आप उद्देश्य पूर्ण अध्ययन का अभ्यास करने के लिये प्रति दिन आध घण्टा समय अलग निकाल लें। कोई चित्ताकर्षक पठन-वस्तु जो केवल अभ्यास के ही लिए नहीं वरन् स्वयम् वैसे भी पढ़ने योग्य हो, आप चुन लें, और तब केन्द्रित तथा निश्चित उद्देश्य के साथ उसको पढ़ें। इसके पढ़ने के क्या उद्देश्य हो उनमें कुछ यहाँ दिये जाते हैं, आप अपने मन में ऐसी धारणा करलें कि मैं इसे पढ़कर इसमे से कुछ घटनाओं या तथ्यों को चुन लूँगा, इसमें दिये गए तर्क की प्रत्येक बारीक बात को बखूबी समझूँगा, इसके भाषा चातुर्य के गुणों को ग्रहण

अरूँगा और उसका आनन्द उठाऊँगा, अथवा उसको उसी विषय पर किसी दूसरी पुस्तक में पढ़ी हुई बातों से तुलना करूँगा। यह सिद्ध हो चुका है कि इन भिन्न-भिन्न प्रकार के आत्म शिक्षणों में जो कुछ मनुष्य करता है वह भी भिन्न-भिन्न होता है। इस प्रकार पढ़ने की सारी क्रिया उद्देश्य के, साथ साथ बदल जाती हैं। आप तथ्यों और घटनाओं से कूट कूट कर भरे हुए किसी वर्णन से जो इतनी कम बातें ग्रहण कर पाते हैं उसका कारण यही है कि उसे उपन्यास की तरह सरसरी निगाह से पढ़ते हैं। इस प्रकार उपन्यास का पूरा आनन्द नहीं उठा पाते क्योंकि उसे आप घटनाओं के एक ब्योरेवार वर्णन की तरह पढ़ते हैं। पढ़ने में दक्षता प्राप्त करना बिलकुल उद्देश्य पर निर्भर है। बहुत से लोग अच्छे पाठक नहीं होते उसका प्रधान कारण यही है कि उनका पढ़ना उद्देश्य रहित होता है। अतः आप उद्देश्य पूर्ण पढ़ने का अभ्यास करें।

५—पढ़ने को क्रियाशील बनाना

पढ़ने में सफलता प्राप्त करने के लिये उसमें अभिरुचि रखना और उसका एक उद्देश्य निर्धारित कर लेना तो बिल्कुल आरम्भ की बातें हैं। अब इसके आगे जो होना आवश्यक है वह है क्रिया शील ढंग से पढ़ना।

अधिकांश लोग केवल अपनी आँखों से पढ़ते हैं, दिमाग से नहीं। इस प्रकार पढ़ते समय वे आँखों द्वारा कुछ संस्कार प्राप्त कर लेते हैं और वहीं उनके पढ़ने की क्रिया समाप्त हो जाती है। पढ़ने का यह ढंग किसी हल्के विषय की पढ़ाई जैसे किस्से-कहानियाँ आदि के लिए तो ठीक है, किन्तु जब गम्भीर अध्ययन करना हो और दक्षता प्राप्त करनी हो और भविष्य के लिये याद कर लेने की इच्छा हो, तो मस्तिष्क को क्रियात्मक रूप से काम में :

लगाना जरूरी है। तात्पर्य यह कि पढ़ने के साथ विचार करते रहना भी आवश्यक है। यदि पढ़ने को विचारने का सहारा न दिया जाय, अर्थात पढ़ने के साथ साथ विचारने की क्रिया न की जाय तो उस पढ़ने का प्रभाव अस्थाई तथा दुर्बल होगा और वह मस्तिष्क से उसी प्रकार फिसल जायगा जैसे चिकने घड़े के ऊपर से पानी। किसी भी अध्ययन को उपयोगी बनाने के लिये यह आवश्यक है कि विचारने की क्रिया को पढ़ने की क्रिया के साथ घनिष्टता से सम्मिलित किया जाय। आपके सोचने की क्रिया जितनी ही घनिष्ट होगी उतना ही अधिक लाभकारी आप का अध्ययन भी होगा। तीव्रता से सोचने से मन को एकाग्र करने में तथा जो कुछ आप पढ़ते हैं उसे समझने और अधिक अच्छी तरह याद रखने में सहायता मिलती है।

९. निष्क्रिय पढ़ना अव्यवस्थित पढ़ने से भी अधिक हानि कारक है। ऐसी पढ़ाई में मस्तिष्क कोई काम नहीं करता बल्कि एक स्वप्न की सी अवस्था में रह कर, बिना किसी स्थान पर केन्द्रित हुए इधर-उधर भटकता रहता है। ऐसे पढ़ने से तो मानसिक शक्तियों की लचक और सेर्जा और भी कम हो जाती है, दिमाग दुर्बल और सुस्त बनकर कठिन प्रश्नों तथा गम्भीर नियमों को समझने के अयोग्य हो जाता है।

पढ़ना और विचारना मन की व्यायाम शाला हैं कसरत करने वाला व्यायाम-शाला से वहां के सामान औजार हथियार नहीं उठा ले जाता वरन् बल और चुस्ती जो उसे व्यायाम से मिलती है। इसी प्रकार जो विचार सामग्री हम किताब से निकाल लेते हैं और स्मृति में संग्रहीत कर लेते हैं, वह इतनी मूल्यवान नहीं है जितना कि वह शक्ति और निपुणता जो हम किताब पढ़-कर अपने में पैदा कर लेते हैं। निष्क्रिय पढ़ाई से मस्तिष्क की कोई उन्नति नहीं होती, ठीक उसी प्रकार जैसे अखाड़े में केवल

बैठे रहने से कोई पहलवान नहीं बनसकता। मन को भी कड़े, निरन्तर और नियम-शील व्यायाम की आवश्यकता है, और यह व्यायाम कितबों को विचार और परिश्रम पूर्वक पढ़ने से मिलता है। साधारणतः उन्हीं किताबों से आपको अधिक लाभ होगा जिनको पढ़ने में आपको सबसे कठिन परिश्रम करना पड़ता है।

'जौन लाक, का कहना है कि पढ़ना केवल ज्ञान की सामग्री को जुटाना है और विचारना ही उस पढ़ी हुई वस्तु को अपना बना देता है।

किताबों से पूरा लाभ उठाने के लिए पाठक को विचारक होना आवश्यक है। केवल जानकारी प्राप्त करने से मनुष्य को शक्ति नहीं मिल सकती। मन को ऐसे ज्ञान से भरना जो समय पड़ने पर काम में न लाया जा सके उसी तरह निरर्थक है जैसे किसी मकान को मेज कुर्सी तथा अन्य काठ-कबाड़ से इतना भर देना कि उसमे चलने फिरने को भी स्थान न रह जाय। भोजन तब तक शारीरिक बल पुष्ट और मस्तिष्क नहीं बनता जब तक वह पूर्णतया पच नहीं जाता और पचकर रक्त, दिमाग और इन्द्रियों से भलीभाँति मिल नहीं जाता। इसी तरह जानकारी भी शक्ति में उस समय तक परिवर्तित नहीं होती जब तक कि वह मन द्वारा पचाई न जाय और स्वयम् मनका ही एक अंश न बन जाय।

इस विषय में इमर्सन का मत है कि "पढ़ना संशोधन के लिए होना चाहिए न कि जानकारी के लिए।" एक दूसरे विद्वान ने यही बात दूसरे शब्दों में यों कही है, "किसी किताब को पढ़ने के लिए आप अपने मनको उसके पास इस प्रकार ले जायें जैसे एक कुल्हाड़ी को एक सान धरने वाले पत्थर के पास ले जाते हैं, यानी पत्थर से कुछ मिलेगा इस उद्देश्य से नहीं वरन् अपने पासकी कुल्हाड़ी को तेज करने के लिए।"

६. पढने से पहले सोचिये

इसका अर्थ यह है कि पहले सोचें और तब पढें। कुछ लोग पहिले पढते हैं और तब सोचते हैं। यह ढग, यद्यपि सर्वोत्तम नहीं पर अच्छा है। परन्तु सबसे कम गुणकारी ढंग उन लोगों का है जो केवल पढते ही हैं, सोचते बिल्कुल नहीं। अपने पढने से पूरा लाभ उठाने वाले वे बिरले ही हैं जो पहले सोचने और बाद को पढते हैं। यदि पढने के लिये आपके पास आध घटे का समय है तो आप दस मिनट पाठ्य विषय पर अपने विचारों और ज्ञान के पुनरावलोकन मे खर्च करें और अगर आपका विश्वास है कि आप उस विषय में कुछ नहीं जानते हैं तो कमसे कम उसके बारे में कुतूहल पूर्ण अचरज के ही विचार करें और तत्पश्चात् शेष बीस मिनट पढने मे व्यतीत करें। आप अपने वर्तमान ज्ञान का—चाहे वह थोडा हो या अधिक या नाम मात्र को हो, पढाई द्वारा पढ़ाने के पहले—पुनरावलोकन अवश्य करलें और तब अपनी किताब खोलें और पढना आरम्भ करें। तब आप इसका परिणाम देखेंगे कि वास्तव मे पहले की अपेक्षा आप अधिक समझ पाते हैं और याद भी ज्यादा होता है। विख्यात विद्वान जान मोर्ले (बाद मे लार्ड मोर्ले) ने लिखा है कि किसी लेख को पढने से पहले यह विचार कीजिये कि उसमें क्या है।

आरम्भका सोचना मस्तिष्क को जागृत कर देता है जिससे वह विषय की ओर से सचेष्ट हो जाता है, उसका ज्ञान पुनः विधि-पूर्वक क्रमबद्ध हो जाता है और बहुत से निश्चित या अनिश्चित प्रश्न दृष्टि में आ जाते हैं। पढना आरम्भ करने के पहले सोचने से मन में विषय के ओर से जो प्रतीक्षा की भावना पैदा हो जाती है उसके कारण बाद में पढते समय बहुत सी ऐसी सूक्ष्म

बातें सूझ जाती हैं जो कदाचित् और किसी प्रकार से न आ पातीं। आपके पुराने ज्ञान का क्रम ऐसे स्थान उपस्थित कर देता है जिनमें नये ज्ञान का प्रत्येक अंश बिल्कुल ठीक ठीक बैठ जाता है।

ऐसे अभ्यास से आपका मानसिक घर सुव्यवस्थित हो जाता है, उसके सभी अव्यवहृत कोने और कमरे खुलकर साफ़ हो जाते हैं और मन ज्ञान रूपी प्रकाश के प्रवेश के लिये तैयार हो जाता है जैसा, अन्य किसी तरह की पढ़ाई से नहीं हो सकता है। आप के भीतर आपके कुछ निजी विचार उठ खड़े होते हैं। बाद में पढ़ने के द्वारा आप उनमें सुधार, प्रसार और वृद्धि करते हैं। ऐसा करने से आपकोकेवल ज्ञान और सुव्यवस्थित मनका ही लाभ नहीं होता, बल्कि इससे मन और इच्छा-शक्ति या संकल्प (Will) की शक्ति में भी वृद्धि होती है।

पढ़ने के विषय में जो अनुसन्धान किए गए हैं वे भी इस परिणाम के प्रष्टपोषक हैं। आप जो कुछ पढ़ने जा रहे हों उसके अन्दर क्या है इसका सामान्य ज्ञान पढ़ना आरम्भ करने से पूर्व ही प्राप्त कर लेना सर्वथा अच्छा होता है। ऐसा करने से एक बुद्धिमत्तापूर्ण उद्देश्य तुरन्त उपस्थित हो जायगा और यह विदित हो जायगा कि आप उस पाठ्य-विषय में से क्या छोड़ दें और क्या ग्रहण कर लें। यदि लेखक ने अध्याय का सारांश अथवा उपसंहार दिया हो तो उसे सबसे पहले पढ़ लीजिये। अगर विषय की एक अच्छी सूची हो जिसमें किताब का एक खाका दिया हो तो उसे अवश्य ही पढ डालिये। आप जो पढ़ना चाहते हैं उस पर अगर कोई समालोचना मिल जाय तो उसे देख जाइये। और अगर उसके बारे में कोई मित्र कुछ बता सकता हो तो उसी से जान लेने की चेष्टा कीजिये। यद्यपि यह नियम केवल मन बहलाव की पढ़ाई जैसे कहानियाँ और उपन्यास आदि में लागू नहीं होता, लेकिन शेष उन सभी प्रकार की पढ़ाइयों के लिये उपयुक्त

है जिनमें लोग कम-से-कम समय देकर विषय को खूब अच्छी तरह समझ लेना चाहते हैं।

७. पढ़ना और सोचना

परन्तु इसका अर्थ यह कदापि न समझ लेना चाहिये कि सोचना केवल पढ़ने से पहले का ही काम है। सोचना पढ़ने की क्रिया का एक मूल तत्व है। पढ़ने को गुणकारी बनाने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि पढ़ना आरम्भ करने के पहले ही नहीं बल्कि पढ़ते समय और पढ़ना समाप्त होने के पश्चात् भी सोचा जाय। उदाहरणार्थ—एक पैरा या सफहा पढ़ने के बाद आप थोड़ा रुक जाइये, लेखक के तर्क और प्रतिपादन को समझिये, उसके मुख्य-मुख्य विचारों को चुन लीजिये और यदि किताब आपकी ही हो तो उसमें चित्ताकर्षक तथा महत्वपूर्ण वाक्यों के नीचे निशान लगा लीजिये। ऐसा करने से आवश्यक विचार आसानी से दृष्टिगोचर हो जाते हैं और उन्हें अच्छी तरह अपनी स्मृति में जमा लेने में सहायता पहुँचती है। आप लेखक के तर्क और उसके प्रतिपादन-विधि की तुलना कभी पहले पढ़ी हुई उसी विषय की दूसरी किताब से करें।

अगर एक ही विषय पर दो किताबें साथ-साथ पढ़ रहे हों—जैसा कि गम्भीर अध्ययन के लिये सर्वथा स्तुत्य है—तो निस्सन्देह आपको एक का दूसरे से हवाला देने (Cross-reference) और तुलना करने की आवश्यकता होगी।

समाचार पत्रों की भांति किताबों में भी अन्तर होता है। दो विभिन्न स्थानों से देखने से ही किसी वस्तु की गोलाई या मोटाई का पता चलता है। हमें किसी पदार्थ के आकार और दूरी का अनुमान करने के लिये दो नेत्रों की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार हमें पढ़ने में सही दृश्य (Pers-pective) अथवा ठीक-ठीक जानकारी प्राप्त करने के लिए कई सम्मतियों की आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त पढ़ने मे दो और भी बातें हैं जिनकी आदत डालने की सलाह लोगों ने बड़े ज़ोरो से दी है। प्रथम यह कि सभी सामान्य नियमों और सिद्धान्तों के उदाहरण अपने से सोच निकालने की आदत डालें; केवल नियमों को सीख कर तथा सिद्धान्तों को समझ कर ही सन्तुष्ट न हो वरन् व्यवहार में लाने योग्य उदाहरण और प्रयोग स्वयम् ढूँढ निकालने का अभ्यास करें। अपने से ढूँढ निकाले हुए आपके ये व्यावहारिक उदाहरण तथा प्रयोग किताब में दिये गए उदाहरणों की अपेक्षा अधिक मूल्यवान ठहरेंगे और साफ़-साफ़ प्रकट कर देंगे कि आपने उन साधारण नियमों तथा सिद्धान्तों को खूब अच्छी तरह समझ लिया है अथवा नहीं। दूसरी बात यह है कि किसी पैराग्राफ को पढ़ लेने के बाद भी उस पर मन ही मन पुनर्विचार कर लेने का अभ्यास करें। यह याद करने का बहुत ही उत्तम तरीका है। इसी तरह अध्याय की समाप्ति पर उसमें जो कुछ पढ़ा हो उस पर फिर मन के अन्दर नज़र दौड़ा ले जाय। ऐसा करने से मनको अध्याय के सार को याद कर लेने में सहायता मिलती है और साथ ही ऐसे प्रश्न, जिनके उत्तर अगले अध्यायों में दिये हुए हैं, अपने आप सूझ जाते हैं। किसी पुस्तक को पढ लेने के बाद अलग रख उसके बारे में सब कुछ भूल न जाइये, बल्कि उसमें जो कुछ पढ़ा हो उसे संक्षेप करने का आदत डालिये ? और अपने से प्रश्न करिये कि लेखक जिस उद्देश्य को लेकर चला था उसमें उसे कहाँ तक सफलता मिली।

अगर आप चाहते हैं कि मानसिक बल प्राप्त करें तो यह आदत डालिये कि पूरे ध्यान से पढ़ चुकने के बाद कभी-कभी अपना किताब बन्द कर दीजिये और बैठ कर सोचिये—या जी चाहे तो खड़े हो जाइये और टहल कर सोचिये—मगर सोचिये अवश्य। चिन्तन और मनन अवश्य कीजिये। आपने जो कुछ

पढ़ा हो उसको बार-बार मन में घुमाइये तथा उलट पुलट कीजिये। पढ़ी हुई वस्तु आपकी उस समय तक नहीं हो जाती जब तक आप उसे अपने विचार द्वारा न अपना लें तथा उसे अपने जीवन में सम्मिलित न कर लें। जब उसे आप पहली बार पढ़ते हैं तो वह लेखक की ही मालियत होती है और आपकी वह तभी बनती है जब उसे आप स्वयम् अपना एक अंश बना लेते हैं।

कुछ लोगों का ऐसा विचार रहता है कि अगर वे सदा पढ़ते रहें, अगर उनके हाथों में अवकाश के हर क्षण एक पुस्तक रहे तो वे अवश्य ही सुशिक्षित और सुडौल मन वाले बन जायंगे। यह एक भूल है, जैसे कोई हर अवसर पर खाना खा लेने से पहलवान नहीं बन सकता। (पढ़ने की अपेक्षा सोचना कहीं आवश्यक है। जो कुछ पढ़ा है उस पर सोचना विचारना वही महत्त्व रखता है जो भोजन के लिए पाचन क्रिया।)

८. थोड़ी सी उत्तम पुस्तकों पर प्रभुत्व पाइये

एक विद्वान का कहना है कि कोई मनुष्य अधिक संख्या में किताबें पढ़ डालने से जानकार और बुद्धिमान नहीं बन जाता बल्कि समझ बूझ कर चुनी हुई किताबों की अधिक संख्या पर इस प्रकार दक्षता प्राप्त करने से कि उनमें का हर मूल्यवान विचार अपना एक परिचित मित्र बन जाय।

किसी सुन्दर काव्य, उत्कृष्ट निबन्ध, विचार पूर्ण विवेचन अथवा मधुर हास्य-रस की पुस्तक को एक दो बार पढ़ कर कोई उसके हृदय में प्रविष्ट नहीं कर सकता। इसके लिये तो आवश्यक है कि उसके बहुमूल्य विचारों और दृष्टान्तों को स्मृति कोष में संचित किया जाय और उन पर अवकाश के घंटों में मनन किया जाय।

थोड़ी सी उत्कृष्ट किताबों को समझ-समझ कर पढ़ना और उनकी शिक्षाओं को हृदयंगम कर लेना इससे कहीं अधिक उप-

योगी है कि बहुत सी किताबों को शीघ्रता से, पर बिना भली भांति समझे हुए, पढ़ डाला जाय। दुनिया में पुस्तकें असंख्य हैं और उन सब को पढ़ना न तो सम्भव है और न आवश्यक। अतएव थोड़ी सी चुनी हुई किताबों को पचा कर पढ़ लेना, उनके उपदेशों को ग्रहण करके चरित्र में प्रत्यक्ष करना और उनकी भाषा और विचारों को मन के ताने बाने में सम्मिलित कर लेना ही अध्ययन का मुख्य उद्देश्य और उचित रूप है।

९. पढ़ने का यंत्र-विज्ञान

दृष्टि संकेतों को मानसिक अवस्था में भाषान्तर करना ही पढ़ना है। इस क्रिया में ध्यान देने योग्य एक बात यह है कि आँख छपी हुई सतर पर लगातार बिना रुके हुए नहीं चलती है वरन् रुकते और विश्राम लेते हुए चलती है। वस्तुतः नेत्रीय चाल एक झटके वाली चाल है, जिसमें दृष्टि हर बार गड़ने के बाद रुक कर विराम लेती रहती है। आप जब किसी सतर पर दृष्टि डालते हैं तो वह पंक्ति के कुछ भाग को पकड़ लेती है, फिर जरा थम जाती है, फिर आगे के भाग को देखती है और फिर रुक जाती है—ऐसा ही बराबर होता रहता है जैसा निम्नांकित चित्र से स्पष्ट हो जायगा।

——— ——— ——— ——— ———

यह सीधी लाइनें नेत्रों द्वारा देखना प्रगट करती हैं और बीच की खाली जगहें दृष्टि का थमना बतलाती हैं। हर बारजब आपके नेत्र कागज पर केन्द्रित होते हैं तो आप केवल एक शब्द को नहीं देखते हैं वरन् एक शब्द-समूह को, जिसका अर्थ प्रायः उसी क्षण समझ में आ जाता है। *शब्दों की उस संख्या को, जिसे आप एक बार के दृष्टि गड़ने में पकड़ लेते हैं,* ग्रहण-विस्तार (Perceptual Span) कहते हैं। आपको यह विदित होना चाहिये कि नेत्र पाठक एक-एक शब्द को कम समय में नहीं पढ़ लेता, वरन् एक ही समय में अधिक शब्दों को पढ़ लेता है—उसका ग्रहण-

विस्तार अधिक बड़ा रहता है, अर्थात् वह एक बार के दृष्टि गाड़ने मे अधिक शब्दों को पकड़ लेता है। एक कम पढ़ा आदमी किसी छपे अनुच्छेद को कदाचित् एक-एक अक्षर करके धीरे-धीरे पढ़ेगा, लेकिन जो एक प्रवीण पाठक होगा वह एक बार के दृष्टि गाड़ने में एक समूचे वाक्य को पढ़ लेगा और केवल पढ़ ही नहीं लेगा, वरन् उसके अर्थ को भी साथ-साथ समझ जायगा।

यह बात अच्छी तरह समझने के लिये कि आप सचमुच शब्द-समूहों को एक साथ पढ़ते हैं, आप एक छोटा-सा प्रयोग कर सकते हैं। बराबर लम्बाई की चार खड़ी पंक्तियाँ लीजिये जिसमें एक में केवल अक्षर हों, दूसरी में छोटे-छोटे तथा तीसरे मे बड़े-बड़े शब्द और चौथी में वाक्य हों :—

[१]	[२]	[३]	[४]
क	कम	कमल-नयन	कमल का फूल हाथ में लो।
र	रघु	रघु-कुल-तिलक	रघु राम के परदादा थे।
प	पर	परम-पूज्य	परम पूज्य केसरिया प्यारा।
झ	झन	झनझनाहट	झंडा ऊँचा रहे हमारा।
म	महा	महाराजाधिराज	महात्मा गांधी जेल में हैं।
प	पुल	पुलकायमान	पलपलमें आकाशका रंग बदलता है।
त	तर	तरंगित	तरबूज़ चाकू से काटो।
ई	ईश	ईश्वरीय	ईश्वर सबका रक्षक है।
क	कल	कलयुगी	कलयुग मे ऐसा ही होता है।
स	सच	सच्चिदानन्द	सच बराबर तप नहीं।
भ	भाग	भागीरथी	भागीरथी गंगा का नाम है।
रा	राम	रामेश्वरम्	राम राम कहु राम सनेही।

प्रत्येक खड़ी पंक्ति को ऊपर से नीचे तक चुपचाप पढ़ जाइये और उसे पढ़ने में जितना समय लगे उसे सावधानी से नोट कर लीजिये। आप देखेंगे कि पढ़ने की सामग्री चौथी पंक्ति में पहली

से कोई ग्यारह गुनी, दूसरी से पाँच गुनी और तीसरी से दुगनी के करीब है, लेकिन इन पंक्तियों के पढ़ने में लगे हुए समय में यह अनुपात कदापि नहीं है। इन खड़ी पंक्तियों के पढ़ने में क्रमशः लगभग ४, ६, ८ और २० सेकण्ड लगते हैं। चौथी पंक्ति पढ़ने में लगे समय के अनुसार, पहली पंक्ति की पाँच गुनी और अक्षरों के अनुसार ग्यारह गुनी है। अब आपको स्पष्ट हो गया होगा कि जितनी जल्दी शब्द-समूह को आँख देखती है और मस्तिष्क समझता है प्रायः उतनी ही जल्दी वह एक अक्षर या शब्दको देखती है। अतः इस प्रयोग मे यह शिक्षा मिली कि अधिकाधिक शब्द-समूहों को एक साथमें देख लेनेका प्रयत्न करते हुए आप अपने पढ़ने की चालको दृढ़तासे बढ़ाते जाइये।

१० समझना या वेग ?

पढ़ने की गति तेज़ बनाने के लिये आपको अपना ग्रहण-विस्तार विस्तृत करने का प्रयत्न करना चाहिये जो नित्यप्रति के अभ्याससे किया जा सकता है। किन्तु यह भी ध्यान रहेकि पठन-क्रिया हदसे अधिक सचेत भी न हो जाय नहीं तो आपके पढ़नेकी गति तेज़ होनेके बजाय और भी मन्द हो जायगी। इसका अर्थ यह है कि पढ़ते समय आपका ध्यान पढ़ने की ही ओर होना चाहिये न कि इस ओर कि किस प्रकार उस पृष्ठ, पाठ या पुस्तक को जल्द-से-जल्द खतम कर डाला जाय। अगर आपका ध्यान केवल इस ओर रहा कि कैसे जल्दी से अन्त तक पहुँचे तो आप देखेंगे कि आप समझ नहीं रहें हैं, आपको एक ही वाक्य बार-बार पढ़ना पड़ रहा है।

किसी को उपन्यास या अखबार पढ़ने में प्रति मिनट तीन सौ शब्दों से कम में तो सन्तुष्ट होना ही नहीं चाहिये और चार सौसे बढ़ जानेके लिये भी उसे भरसक चेष्टा करनी चाहिये।

आशा तो यह है कि तेज़ पढ़ने के लिये आपके दृढ़ निश्चय-

पूर्वक प्रयत्न से ही कुछ समय में आपका ग्रहण-विस्तार बढ़ जायगा। परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि पढ़ने की गति बढाने के पीछे समझने का बलिदान कदापि न हो जाय, क्योंकि आपका पढ़ना जानकारी के लिये ही हो रहा है। पर क्या सचमुच पढ़ने की क्रिया में तेज गति और समझना परस्पर विरोधी हैं? नहीं! पढ़ने की गति तीव्र बनाते समय जो आश्चर्यजनक सत्य आप अनुभव करेंगे वह यह कि है पढ़ने की गति तेज होने के साथ ही साथ आपकी जल्दी से समझने की योग्यता भी तीव्र होती जायगी। प्रवीण पढ़ने वाले सदा तेज पढ़ने वाले होते हैं और उनकी दक्षता के दोनों अंग—तेजी और अच्छी तरह समझना—साथ-साथ चलते हैं।

११. शब्द-भंडार बढ़ाना

एक निपुण पाठक सर्वदा तेज पढ़ने वाला हुआ करता है। धीरे-धीरे पढ़ने में एक खतरा यह रहता है कि मन का भटकने का अवसर मिल जाता है और उसमें इधर-उधर के विचार घुस आते हैं जो उसकी एकाग्रता को भंग कर देते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि सुस्त पढ़ने के क्या कारण हैं? थकावट और अभिरुचि की कमी से स्वभावतः पढ़ने की गति मन्द हो जाती है। इसके अतिरिक्त सुस्त पढ़ने का एक और भी कारण है जो बड़ा महत्त्वपूर्ण है—परिचित शब्दों की संख्या की कमी अथवा मुहावरों और उनके अर्थ से अनभिज्ञता। अगर आपमें यह दोष है तो निश्चय ही आप जुमलों और पैराग्राफों को कई बार पढ़ने की उलझन में पड़ जायंगे, जिससे आपकी पठन-क्रिया के प्रवाह में बड़ी बाधा उपस्थित होगी। इससे बचने के लिये निस्सन्देह यही एक उपाय है कि आप अपना शब्द भण्डार और मुहावरों की जानकारी बढ़ायें—यह दोनों बातें शब्द-कोष को अधिक प्रयोग में लाने से प्राप्त हो सकती हैं।

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, शब्द ज्ञान को विस्तृत करना मानसिक निपुणता को उन्नत करने का एक उत्तम साधन है। इसलिए हर मनुष्य को शब्दों के अर्थों की जानकारी प्राप्त करने की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए. कितने शब्द ऐसे हैं जिन्हें हमने कई बार पढ़ा है और जिनका अर्थ हम विश्वास करते हैं कि हम जानते हैं, पर वास्तव में नहीं जानते। इसी प्रकार पढ़ते समय हम बहुत से शब्दों को छोड़ते जाते हैं क्यों कि लिखे हुए विचार को हम वाक्यों के प्रसंग में समझ लेते हैं। कितने शब्द ऐसे होते हैं जिन्हें हम पहचानते हैं पर बोलने या लिखने में प्रयोग नहीं कर सकते क्यों कि उनके ठीक ठीक अर्थ से हम अज्ञान भिज्ञ हैं। शब्द ज्ञान बढ़ाने के लिए नये और अपरिचित शब्दों का अर्थ कोष में देखना चाहिए। उनका सही अर्थ और उच्चारण सीखना चाहिए। और उनको लिखने तथा बोलने में इस्तेमाल करके, भली भांति अपना लेना चाहिए।

कई महापुरुष ऐसे हुए हैं जिन्होंने अंगरेज़ी के सारे कोष को कई बार पढ़ डाला था। सारे शब्द कोष को पढ़ डालना तो कठिन है, पर हर व्यक्ति को, जो मनोविकास के उद्देश्य से अपने शब्द भण्डार को बढ़ाना चाहता है, यह उचित है कि वह हर रोज़ कम से कम तीन नये शब्दों को सीखे, उनका प्रयोग करके जुमले बनाए और बातचीत में भी इस्तेमाल करे. ऐसा करने से एक वर्ष में १०९५ और पांच वर्ष में ५४७५ नये शब्द आपके शब्द भण्डार में सम्मिलित हो जायंगे। और जैसा कि अनुसंधानों द्वारा सिद्ध हुआ है अंगरेज़ी भाषा के एक फूहड़ और रद्दी शब्द भण्डार और एक शक्तिमान तथा सुसंस्कृत शब्द भण्डार में केवल पाँच छः हज़ार शब्दों ही का अन्तर रहता है! हमारी हिन्दी भाषा में तो कदाचित यह अन्तर केवल दो या तीन हज़ार शब्दों ही का होगा!

१२. अपनी साप्ताहिक परीक्षा

आपको हर हफ्ते अपनी जाँच करते रहना चाहिये। यह बड़ा मनोरंजक और उपयोगी काम है। पढ़ाई की जाँच के लिये अंग्रेजी में तो बहुत से अच्छे परीक्षा-पत्र बाजार में मिलते हैं जो थोड़े ही मूल्य में खरीदे जा सकते हैं। आप उनमें से कुछ खरीद लें। वे प्रायः दो या अधिक कक्षाओं में बने होंगे, जैसे—क ख ग (A· B· C·) ताकि आप क्रमागत सप्ताहों में उनका प्रयोग करके अपनी उन्नति का पता लगा सकें। आप उनके द्वारा स्वयं अथवा अपने किसी मित्र की सहायता से अपनी जाँच कर सकते हैं। अपने मित्र से कहिये कि वह एक चुने हुए प्रकरण (Passage) के बारे में कुछ प्रश्न बनायें, जिसमें उस प्रकरण की बारीक से बारीक बात तक पूछ ली जाय। अपने दोस्त से कहिये कि अपने प्रश्नों में हरएक विचार, हरएक घटना, हरएक तर्क को शामिल कर लें। आपकी परीक्षा निरसन्देह आपके उद्देश्य के अनुसार होनी चाहिये—यदि तथ्यों (Facts) के लिये पढ़ रहे हो तो परीक्षा में तथ्यों ही पर जोर दीजिये यदि आप विचारों के लिये तो विचारों पर इत्यादि। मतलब यह है कि अपनी उन्नति जानने का कुछ साधन जरूर होना चाहिये। अनेक व्यक्तियों के अनुभव को देखते हुए तो यही आशा है कि शीघ्र ही आप भी अपने को तेज और निश्चित उन्नति करते हुए पायँगे। अपनी छिपी हुई कम-जोरियों को देख कर कदाचित् आश्चर्य हो, पर यह देखकर आप को और भी अचम्भा होगा कि कितनी शीघ्रता से वे कमजोरियाँ सुयोग्य उपचार द्वारा दूर हो जाती हैं।

साथ ही साथ अपने अभ्यास का कुछ समय आप अपने पढ़ने की गति बढ़ाने में लगावें। केवल तेज पढ़ने के विचार को सामने रखकर पढ़ने से ही पढ़ने की गति में उन्नति हो जायगी।

निस्सन्देह ज्यों-ज्यों पढ़ने में आपकी दक्षता बढ़ती जायगी, आप के पढ़ने की चाल भी तेज होती जायगी। मगर यह देखने में आया है कि केवल रफ्तार बढ़ाने के उद्देश्य से जान बूझकर किये हुए प्रयत्न से भी लाभ होता है। पैरामाफों के पढ़ने में लगे हुए समय को नोट कर लीजिये और पढ़ना समाप्त करने पर शब्दों को गिन लीजिये—इससे आपको पढ़ने की गति मालूम हो जायगी। अपनी उन्नति को लिखते जाइये और हर हफ्ते अपनी रफ्तार को तुलना पिछले हफ्तों की रफ्तार से कीजिये। अनुभव से यही पता चलता है कि आप भी सुधार की आशा कर सकते हैं और आपकी उन्नति भी अस्थायी नहीं प्रत्युत स्थायी होगी। क्योंकि बाद में जब आप गति बढाने की कोई चेष्टा न भी करते होगे तब भी देखेंगे कि आपकी साधारण, आराम से और बिना जल्दी की हुई, रफ्तार भी पहले से अच्छी हो चुकी होगी। यह न समझिये कि इस काम से फायदा उठाने के लिये आपको घटों कड़ा परिश्रम करना पड़ेगा। तेज रफ्तार से पढ़ने के थोड़ी देर तक किये गये प्रयास भी अत्यन्त प्रभावशाली होते हैं।

अंग्रेजी में कुछ मासिक-पत्र ऐसे हैं जिनमें प्रत्येक लेख के पढ़ने का समय दिया रहता है। पाठक इससे यह अनुमान लगा सकते हैं कि उनके पढ़ने की गति तीव्र है अथवा मन्द। हिन्दी में भी, विशेष कर नवयुवको के मासिक पत्रों में, साधारण पढ़ने का समय हर लेख के अन्त में देना चाहिये।

१३ नोट लेने की आदत डालिये

पढ़ने को गुणकारी बनाने के लिए एक सलाह यह दी गई है कि जो कुछ पढ़ा जाए उसके नोट ले लिये जांय। अथवा उसमें से सुन्दर, उत्कृष्ट तथा महत्वपूर्ण वाक्यों और ऐसी चीजों को जिनकी भविष्य में आवश्यकता पड़ने की सम्भावना है, उद्धृत

करके एक स्मरण पुस्तक (Common Place Book) में लिख लेना चाहिए। ऐसी स्मरण पुस्तकें स्मृति को बड़ी सहायता देती हैं, क्यों कि जो कुछ पढ़ा है उसमें से यदि भविष्य में कुछ ढूँढ़ निकालना हो, तो इन पुस्तकों से यह काम बहुत आसान हो जाता है। सुनी या पढ़ी हुई बातों के नोट ले लेना एक बड़ी अच्छी आदत है।

स्मरण पुस्तकें बड़ी उपयोगी होती हैं—विशेषकर लेखकों और वक्ताओं के लिए। महापुरुषों की अद्भुत प्रतिभा बहुत कुछ ऐसी ही नोट-बुकों और स्मृति-पुस्तकों से आती है। किसी पुस्तक को पढ़ चुकने के बाद उसमें की महत्त्वपूर्ण और उपयोगी चीजों को नक़ल करने, या उसका सारांश या विश्लेषण तैयार करने में परिश्रम तो अवश्य है पर यही एक तरीक़ा है, जिससे महापुरुष बनते हैं।

१४. पढ़ने का शौक

प्रत्येक युवक और युवती के लिये यह सलाह है कि वह कालेज या हाई स्कूल छोड़ते समय अपने पाठ्य-विषयों में से किसी एक प्रिय विषय की पढ़ाई को बतौर अपने मानसिक मनो-रंजन (Hobby) को जारी रक्खे, या किसी दूसरे ही विषय का अध्ययन, जिसमें उसका विशेष अनुराग हो, आरम्भ कर दे। इस प्रकार के अध्ययन में सब से महत्त्वपूर्ण बात यह होगी कि दिमाग़ अपनी ही इच्छा-वश काम करना सीखेगा न कि केवल प्रतिदिन की आवश्यकताओं या घटनाओं की उत्तेजना के प्रत्युत्तर में, या बाहर की परिस्थितियों के कारण, जैसा कि प्रायः जीवन के कारोबार में हुआ करता है। अगर कोई मनुष्य केवल बाहरी उत्तेजना से प्रेरित होकर ही सोचता या विचार करता रहा है, तो यह क़रीब-क़रीब निश्चय है कि जब सुनने, देखने आदि की शारीरिक शक्तियाँ क्षीण होने लगेंगी और बाहरी चीज़ों का

पूर्ववत् अधिकार ध्यान पर न रह जायगा और जिज्ञासा कम हो चलेगी, तो उस समय मनुष्य की मानसिक उद्योगिता भी घट जायगी। लेकिन यदि कोई आदमी आन्तरिक प्रेरणासे या अपनी ही इच्छा वश होकर अपने मस्तिष्क को काम में लगाता रहा है है तो कोई और अपनी इच्छाशक्ति से प्रभावित हो काम करने का अभ्यस्त रहा कारण नहीं कि उसकी मानसिक शक्तियाँ उसके शरीर की अति वृद्धावस्था में भी बराबर उन्नति न करती रहें या कम-से-कम अपनी प्रखरता को बनाये न रखें वास्तव मे प्रायः ऐसा ही होता है। केवल इतना ही नहीं; एक मानसिक शौक़ (Hoffy) रखने से और भी बहुत से लाभ होते हैं। चाहे जल्दी या देरमें आपको यह महसूस करने का सन्तोष मिल जायगा कि आपने मानव ज्ञान के किसी अंग या विषयपर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया है और आप उसके बारेमें उतना जान गये हैं जितना कोई जानता है और इससे अपको दक्षता और आत्म-विश्वास का लाभ होगा, साथ ही साथ आप शक्ति वृद्धि और अवर्णनीय आनन्द का भी अनुभव करेंगे।

१५ योजना बनाकर पढ़ना

स्वभावतः आप अपनी अधिक-से-अधिक पढ़ाई अवकाशके ही समय में करना चाहते हैं। क्योंकि समय थोड़ा ही होगा इसलिए बुद्धिमानी इसीमें है कि आप पढ़नेके लिये एक योजना तैयार कर लें और उसीके अनुसार अध्ययन करें। कभी इधर और कभी उधर की पुस्तकें पढ़ने से मनोरंजन अवश्य होता है, किन्तु इससे समय अकारथ जाता है और मानसिक उन्नति भी काफी नहीं होती।

उदाहरणके लिये कदाचित् आपकी यह योजना हो कि 'जार्ज बर्नार्ड शा' की रचनाओंकी पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लें। अविलम्ब

आप पढ़ना आरम्भ कर दीजिये । जब आप उसकी सभी रचनाओं का आद्योपान्त अध्ययन कर चुकेंगे तो आप अवश्य अपने को पहले से अधिक बुद्धिमान् पायेंगे और अपने स्वयं के अनुभव से उनकी कृतियों के सम्बन्ध में बोल सकेंगे। अगर आपकी योजना में नाटक, उपन्यास, कविताएँ या जीवनियाँ आदि सम्मिलित हैं, तो उन्हीं को रखिये। परन्तु पहले से समझ-बूझकर कोई योजना आप अवश्य तैयार करलें। यदि ऐसा कर लेंगे और उसके अनुसार काम करेंगे तो निस्सन्देह आपको अधिक लाभ होगा।

किसी एक विषय में प्रभुत्व और श्रेष्ठता प्राप्त करना सुख, सफलता आत्म-सम्मान, समाज हित और जीवनानन्द के लिये दस विषयों का थोड़ा थोड़ा ज्ञान प्राप्त करने की अपेक्षा, लाख दर्जे अच्छा है।

१६ उपसंहार

अगर आप का अध्ययन केवल दिल बहलाव या वक्त काटने ही के लिए नहीं है, अगर आप मानसिक दक्षता प्राप्त करने के उद्देश्य से पढ़ना चाहते हैं, तो आप को उचित है कि अध्ययन के लिए प्रिय या उपयोगी विषय चुन लें। उसकी उत्कृष्ट किताबों पर अधिकार प्राप्त करने का कार्य क्रम बना लीजिए और यह भी विचार पूर्वक निर्णय कर लीजिए कि अगले छः महीने या एक साल या पांच साल में कौन कौन सी पुस्तकों को आप पढ़ डालेंगे। फिर उन्हीं पुस्तकों को उत्साह और ध्यान से पढ़िए। उनकी उत्तम तथा उपयोगी चीजों को अपनी स्मरण—पुस्तक में उद्धृत करते जाइये और उन उद्धरणों की वर्ण क्रमानुसार तालिका बना लीजिए जिससे आवश्यकता पड़ने पर वह सहज ही में निकाले जा सकें। सम्भव हो तो पढ़ी हुई पुस्तकों का सार

या विश्लेषण लिखते जाइये। पढ़ने का एक विशेष उद्देश्य निर्धारित कर लेना चाहिए और तेज, पर समझ समझ कर, पढ़ने की आदत डालनी चाहिए, पढ़ते समय न केवल नये और उत्कृष्ट विचारों को ग्रहण करना चाहिए, वरन् शब्द भण्डार को बढ़ाने का भी सदा प्रयत्न करते रहना चाहिए। अध्ययन तभी गुणकारी हो सकता है जब पढ़ी हुई सामग्री को विचार द्वारा पचा लिया जाय।

हर नर नारी का यह परम कर्त्तव्य है कि वह नियमित स्वाध्याय द्वारा अपनी मानसिक शक्तियों का विकास करे और अपनी पसन्द के किसी विषय या कार्य-क्षेत्र में श्रेष्ठता प्राप्त करके अपना और समाज का कल्याण करे।

नवाँ अध्याय

स्मृति और उसका विकास (१)

१. स्मृति का महत्त्व

स्मृति एक मानसिक क्रिया है जिसके द्वारा पुराने अनुभव सुरक्षित किए जाते हैं और आवश्यकता पड़ने पर फिर ध्यान में बुलाए जा सकते हैं, या पुनरावृत्ति होने पर पहचाने जा सकते हैं। यदि स्मृति हमारे अनुभवों और हमारी जानकारी को जमा न रखे और भावी उपयोग के लिए वह हमें प्राप्त न हो सके तो हम अपनी सारी ज्ञान सम्पत्ति खो बैठें, और प्रति दिन, शायद प्रति घंटा हमको अपना जीवन नये सिरे से आरम्भ करना पड़े। बिना स्मृति के न शिक्षा हो सकती है, न ज्ञानोपार्जन और न निपुणता का विकास, यहाँ तक कि हमारे घनिष्ठ मित्र तथा सम्बन्धी भी हमको अपरिचित मालूम पड़ेंगे। स्मृति ही विचार की सामग्री को उपस्थित करती है और यदि हम अपनी यह शक्ति खो दें तो हमारी अवस्था हीन हो जायगी, न तो हम संसार को समझ सकेंगे और न कोई काम कर सकेंगे। स्मृति के बिना सभ्य जीवन असम्भव होगा। हमको यह पता न रहेगा कि हमने किस को क्या दिया था, किससे क्या लिया था हमारा नाम क्या है कहाँ रहते हैं, किससे क्या सम्बन्ध है क्या काम कर चुके, क्या बाकी है और कौन सा काम कैसे किया जाय। भाषा का उपयोग भी कठिन होगा और मनुष्य मानो पशु बन जायगा। कभी कभी ऐसे मनुष्य देखने में आते हैं जो किसी मानसिक धक्के के कारण अपनी स्मृति खो बैठे हैं। उनकी दशा बड़ी शोचनीय होती है क्यों कि

यह बिलकुल पागल के समान बन जाते हैं। यह समझना कठिन नहीं है कि दुर्बल स्मरणशक्ति हमारे लिए असुविधा जनक ही नहीं वरन् हानिकर भी है. क्योंकि ऐसा होने से हर काम में हमें दूसरों से पिछड़ना पड़ेगा, चाहे शिक्षा हो या रोजगार कोई पेशा हो या कोई और काम जिसमें दक्षता की आवश्यकता है। इसके विपरीत, बढ़िया स्मृति हमारे जीवन के प्रत्येक काम मे सहायक होगी। अच्छी स्मरण-शक्ति वाले व्यक्ति की हर जगह मांग रहती है, और बिना इस गुण के उच्चकोटि की बुद्धि की भी उपयोगिता कम हो जाती है।

जो व्यक्ति ठीक मौके पर बात भूल जाता है वह किसी क्षेत्र मे श्रेष्ठता नहीं प्राप्त कर सकता, और जिसे भूलने की बान पड़ गई है वह तो अपने तोड़े हुए वादों के कारण समाज के लिए एक खतरा बन जाता है। धीरे धीरे लोगों को यह विश्वास हो जाता है कि वह झूठा आदमी है, उसके मित्र उसे छोड़ देते हैं और उसका रोजगार भी सफलता से नहीं चल सकता। कभी कभी तो स्मृति की एक चूक से अनेक जानें खतरे मे पड़ जाती हैं। रेल के स्टेशन मास्टर, सेना के नायक, जहाज के कर्णधार तथा ऐसे ही कितने कार्यकर्ता हैं जिनकी स्मृति के दुर्बल होने से जनता को खतरा पैदा हो सकता है।

२. क्या शिक्षा द्वारा स्मृति की उन्नति की जा सकती है?

स्मृति की महिमा और उपयोगिता में तो किसी को सन्देह न होगा। पर प्रश्न यह उठता है कि क्या प्रयत्न द्वारा घटिया स्मृति को बढ़िया बनाया जा सकता है? अर्थात्, क्या स्मरण-शक्ति में वृद्धि की जा सकती है? अधिकांश लोग तो यही मानते हैं कि स्मरण शक्ति बढ़ाई नहीं जा सकती और इस शक्ति की जो मात्रा मनुष्य को जन्म के समय मिल गई उसमें प्रसार या

विकास नहीं हो सकता। ऐसे लोग जो स्मृति को ईश्वर की देन समझते हैं, या जो भाग्यवादी हैं, स्वभावतः यह विश्वास करते हैं कि इस शक्ति को बढाने के लिए सब प्रयत्न व्यर्थ हैं क्योंकि उनसे दुर्बल स्मृति को कोई लाभ नहीं हो सकता। पर यह मत, जो प्रारब्धवाद या निराशावाद पर आधारित है, मनोवैज्ञानिकों की खोजों के निष्कर्षों के बिलकुल विरुद्ध है। इस विषय में मनोविज्ञान ने जो प्रयोगात्मक प्रमाण जमा किये हैं उनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया जाता है।

(क) उचित शिक्षा द्वारा कुरूप और जन्म से मूर्ख लोगों की स्मृति में भी इतनी उन्नति की जा सकती है जिससे वह अपना काम कुछ न कुछ चला सकें।

(ख) हम सभी जानते हैं कि पशुओं में स्मृति का विकास किया जा सकता है। तोतों के पढने से तो सब परिचित हैं। युद्ध के समय कबूतरों को सिखा कर उनके द्वारा सवाद भेजना बड़ा लाभप्रद सिद्ध हो चुका है। रूस के विख्यात मनोवैज्ञानिक पेव्लव (Pavlov) ने कुत्तों पर बहुत से प्रयोग किए और यह प्रमाणित कर दिया कि नियमित शिक्षा द्वारा स्मृति को जागृत करके कुत्तों में एक प्रकार की प्रतिक्रिया या प्रतिवर्त पैदा किया जा सकता है, यद्यपि स्मृति की उन्नति अल्पक्ष रहती है। चिड़ियों, मछलियों, बन्दरों तथा अन्य जानवरों को खेल सिखाए जा सकते हैं। उन कीड़ों को भी अपनी रक्षा के साधन याद कराए जा सकते हैं जिन्हें चिड़ियाँ और मछलियाँ खा जाती हैं।

(ग) निम्न कोटि के प्राणियों में भी काम चलाऊ स्मृति जागृत की जा सकती है। इस विषय में जो प्रयोग किए गए उनमें थोड़ी थोड़ी देर का अन्तर देकर हलकी सी बिजली की धारा नन्हें नन्हें प्राणियों के बीच विसर्जित (Discharge) की गई। धीरे धीरे उन जीवों को यह याद हो गया कि कितनी देर बाद

बिजली की धारा फिर विसर्जित होगी जिससे उन्हें धक्का लगेगा। इस का प्रमाण यह था कि उन्होंने बिजली की धारा के विसर्ग की प्रतीक्षा करना और उसके पहले ही ठीक समय पर उससे बचने का प्रयत्न करना सीख लिया।

जब निम्न कोटि के प्राणियों में इस प्रकार स्मृति जागृत हो सकती है तो फिर मनुष्य, जिसका मस्तिष्क उच्चतम कोटि का है, वैज्ञानिक रीति से शिक्षा द्वारा अपनी स्मृति का विकास क्यों नहीं कर सकता ?

डाक्टर लेलैण्ड (*Dr. Leland*) का, जो शिक्षा-शास्त्र के एक बड़े पण्डित थे, दावा था कि शिक्षा द्वारा स्मृति का बहुत आश्चर्य-जनक विकास हो सकता है। सच तो यह कि विशेष शिक्षा द्वारा स्मृति को इतना तेज किया जा सकता है कि जिन्होंने यह प्रयोग नहीं किया है उन्हें इसका विश्वास होना भी कठिन है। हर मनुष्य के पास ऐसी स्मृति होती है जो उचित साधनों द्वारा शिक्षित की जा सकती है।

कोलम्बिया विश्वविद्यालय के अध्यापक वुडवर्थ का कहना है कि मनोवैज्ञानिकों ने दो बड़े उत्साहवर्द्धक सिद्धान्तों का पता लगाया है। एक यह कि हर व्यक्ति के पास जितना वह समझता है उससे कहीं अधिक स्मरण-शक्ति रहती है। दूसरे यह कि उचित शिक्षा द्वारा स्मृति में बड़ी उन्नति की जा सकती है।

इस लिए यह मानना बिलकुल निराधार है कि मनुष्य स्मृति की एक अपरिवर्तनीय मात्रा लेकर उत्पन्न होता है, जिसमें शिक्षा और अनुशासन द्वारा कोई उन्नति नहीं की जा सकती।

३ स्मृति एक विशेषोन्मुख क्रिया है।

यह तो सत्य है कि स्मृति शिक्षित की जा सकती है, किन्तु यह समझना गलत होगा कि एक ओर की या एक क्षेत्र की उन्नति दूसरी दिशाओं या क्षेत्रों में भी काम देगी। स्मृति एक प्रकार की

मांसपेशी नहीं है जिसे शिक्षा या व्यायाम से बलवती बना कर चाहे जिसे काम में लगाया जा सके। वास्तव में मनोवैज्ञानिकों ने यह प्रमाणित किया है कि स्मृति नाम की कोई वस्तु है ही नहीं। हमारे पास याद करने की कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो हर अवसर पर और हर विषय में दक्षता से काम आ सके। इसके विपरीत, यह कहना उचित होगा कि मनुष्य के पास स्मृति की कई विशेष क्रियाएँ होती हैं जो एक दूसरे से भिन्न होती हैं, जिनमें से कुछ बढ़िया और कुछ घटिया होती हैं, जिनका विकास अलग अलग होता है, और एक क्रिया की उन्नति दूसरी क्रिया को प्रभावित नहीं कर सकती। इसके उदाहरण सहज ही में विचार में आ जायगे। अधिकांश लोग अपने पेशे या अपने शौक के काम (Hobby) से सम्बन्ध रखने वाली बातें खूब स्मरण रखते हैं। कालिज का खिलाड़ी जो पढ़ने लिखने में बहुत मामूली है, अपने शौक के खेलों के आंकड़ों के बारे में विश्वकोष की सी जानकारी का परिचय दे सकता है। इसी तरह एक व्यापारी मूल्यों का, और एक राजनीतिज्ञ अन्य राजनीतिज्ञों के व्याख्यानों तथा उक्तियों की बड़ी विस्तृत जानकारी दिखा सकता है, जो दूसरे लोगों को बहुत आश्चर्यजनक जान पड़ता है।

ऐसे प्रयोग किए गए जिनमें लोगों से भिन्न भिन्न प्रकार की बातें याद कराई गईं—जैसे संख्याओं और अर्थहीन शब्दों की सूचियाँ, काव्य, गद्य, उद्धरण और कुछ गद्य लेखों के तात्पर्य मात्र ऐसे प्रयोगों का फल यह निकला कि जिस प्रकार की बातों के स्मरण करने का अभ्यास किया गया (जैसे अर्थहीन शब्दों का याद रखना) उसी प्रकार की बातें ज्यादा याद रहने लगीं, परन्तु इस अभ्यास से अन्य प्रकार की बातों के प्रति स्मृति की उन्नति नहीं हुई, बल्कि कभी कभी तो उसमें और बाधा पड़ गई। कुछ लोगों को थोड़े दिनों तक साधारण बातें जैसे तिथियाँ, अर्थ

रहित शब्द अंक आदि याद कराए गए। उन्होंने अभ्यास के क्षेत्र में तो प्रत्यक्ष उन्नति की परन्तु कविताएँ और गद्य के तात्पर्य याद करने की उनकी योग्यता में कमी आगई। याद करने की योग्यता इतने विशेष ढंग से काम करती है कि एक ओर की उन्नति दूसरी ओर की अवनति का कारण बन गई।

इन प्रयोगों से यह महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलता है कि जब हमारे सामने अपनी या अन्य किसी व्यक्ति की कोई स्मृति समस्या हो, तो हमें अपना उद्देश्य यह न समझना चाहिए कि स्मृति की सामान्य शक्ति में वृद्धि करलें, बल्कि चुने हुए विशेष क्षेत्रों में उसकी निपुणता को बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। स्मृति को एक शक्ति न समझना चाहिए बल्कि विशेष प्रकार के हुनरों का समूह।

स्मृति के विकास का यह प्रयोजन नहीं कि वह सर्वतोन्मुखी उपयोगिता का एक बढ़िया औज़ार बन जाय, वरन यह कि जिस श्रेणी के कामों को या जिन कामों को हमने अपने लिए चुना है उन से सम्बन्ध रखने वाली बातों को सुगमता से याद कर सकें और दीर्घ काल तक याद रख सकें। इसलिए स्मृति को शिक्षित करने में पहला कदम यह है कि हम अपने उन स्मृति कार्यों को निर्धारित करलें जिन्हें हम अच्छे ढंग से करना चाहते हैं। पहले अपनी योग्यता, अपनी परिस्थिति, और अपनी आवश्यकताओं का अनुमान कर लेना चाहिए। शायद आपको यह पता चले कि यद्यपि कुछ कार्यों के लिए आपकी स्मृति उतनी अच्छी नहीं है जितनी कि होनी चाहिए फिर भी कमी कोई बड़ी नहीं है और उसके कारण आपके कारोबार, पेशे, या सामाजिक कार्यों में आपकी सफलता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। अगर ऐसा है तो सम्भव है आपके लिए स्मृति को उन्नत करने का प्रयत्न आवश्यक न हो, क्यों कि आप की स्मृति तेज़ भले ही न हो पर आपका काम चलाने भर को तो काफ़ी है। इसके विपरीत शायद आप

यह महसूस करते हो कि आपको अपनी स्मृति को अवश्य समुन्नत करना चाहिए और ऐसा करने की मेहनत से आप को कई गुना लाभ होगा। उदाहरण के लिए कदाचित आप का यह विचार हो कि यदि नामों और चेहरों को याद रखने की योग्यता को आप बढ़ा सकें तो आप के काम में आपकी सफलता बहुत बढ़ जायगी, या यह कि यदि आप ताश के खेले हुए पत्तों को याद रखने की निपुणता में वृद्धि कर सकें तो आप निज के अच्छे खिलाड़ी बन जायँगे। जो कुछ भी हो, यदि आप समझते हैं कि आपके लिए स्मृति को उन्नत करना उचित है तो पहला काम यह निश्चय करना है कि स्मृति के कौन कौन से काम आप अब की अपेक्षा अधिक अच्छे ढग से करना चाहते हैं। जब यह तै हो जाय कि स्मृति के किन कामों में आप सुधार करना चाहते हैं, तो उसके बाद आपका कर्तव्य यह होगा कि दक्षता के कुछ नियमों का प्रयोग करें जो सब के सब मनोवैज्ञानिक खोजों पर आधारित हैं और जिन्हें हम याद करने के कायदे कह सकते हैं।

४ स्मृति के चार अंश

थोड़ा सा विचार करने से यह ज्ञात होगा कि स्मृति हमको ऐसी कोई वस्तु नहीं लौटा सकती जो कि सुरक्षित रखने के लिए हमने उसे कभी दी ही नहीं या जिस को वह सुरक्षित नहीं रख सकी, या जिसे किसी भी कारण से वह फिर से बुला नहीं सकी। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि जिन बातों को स्मृति पुनः बुलाकर हमारे सामने रक्खे, हम उन्हें पहचान लें कि वह हमारी पूर्व-अनुभूत या पूर्व-परिचित बातें हैं, क्योंकि यदि हम उन्हें पहचान नहीं पाते तो याद करने की क्रिया अपूर्ण ही रह जाती है। इससे यह परिणाम निकला कि स्मृति के चार अंश हैं:—

(१) अंकित करना या मन पर छाप डालना (Impression Or

Registration)

(२) धारण या सुरक्षित रखना (Retention)

(३) पुनरावाहन या फिर से बुलाना (Recall)

(४) पहचानना (Recognition

५ अंकित करना या छाप डालना

इसका अर्थ है जो कुछ स्मृति के सुपुर्द करना है उसे स खना, पढ़ना या इन्द्रियों द्वारा उसका अवलोकन या अनुभव करना।

स्मृति के चारों अंशों में पहला, अथवा अकन या छाप, सब से अधिक महत्व का है, क्योंकि केवल वही हमारे अधिकार मे है। शुद्ध और शीघ्र पुनरावाहन अधिकांशतः ठीक ठीक छाप डालने पर ही अवलम्बित है, और अच्छी याददाश्त के लिए इतनी हानिकर कोई दूसरी बात नहीं जितनी अपूर्ण या दूषित प्रथम छाप। जो चीज अधूरी सीखी गई है वह अवश्य ही भूल जायगी, और यदि किसी पदार्थ या घटना को आप याद में ठीक ठीक पुनरावृत्ति करना चाहते हैं तो आप सावधानी और शुद्धता से उसका निरीक्षण कीजिए। किसी पाठ को सीखने और उसे अपनी स्मृति मे सुरक्षित रखने के लिए पाठक के मन पर जितनी गहरी छाप पडना आवश्यक है बहुधा उतनी गहरी छाप पडने के पहले ही शिक्षार्थी शिक्षण विषय को छोड देते हैं। प्रायः लोग कहा करते हैं कि अमुक बात उन्हें याद नहीं जब कि वास्तव में उन्होंने उसे कभी ठीक से सीखा ही नहीं था। एक मनोवैज्ञानिक ने कहा है कि स्मृति की जो कुछ भी उन्नति होती है वह अधिकांशतः स्मरणीय पदार्थों या घटनाओं की अपने मन पर छाप डालने के ढगों को सुधारने ही से होती है।

६ धारण
(Retention)

धारण—शक्ति मस्तिष्क का एक गुण है। इसकी क्रियाओं को समझने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने आदत के नियमों का सहारा लिया है, जिन के अनुसार एक बार की हुई क्रिया हर बार दोहराने से और भी सहज होती जाती है। इस नियम के कारण एक बार की हुई मानसिक क्रिया पुनरावृत्ति की ओर प्रवृत होती है, अर्थात कोई बात जो चेतना में एक बार उपस्थित हो जाती है उसका झुकाव याद हो जाने की ओर रहता है। भिन्न भिन्न व्यक्तियों की धारण शक्ति में निस्सदेह अन्तर रहता है, पर बिना किसी डर के यह कहा जा सकता है कि विभिन्न व्यक्तियों की स्मृति शक्ति में जो विभिन्नताएँ देखने में आती हैं वह अधिकतर प्रथम अंकन और पुनराहवन के व्यक्तिगत तरीकों में अन्तर के कारण होती हैं, न कि धारण शक्ति की मात्रा में अन्तर के कारण। इसी प्रकार यद्यपि हमारे ज्ञान का अधिकांश भाग विस्मृति के अंचल में लोप हो जाता है तथापि सम्भवतः इसका प्रमुख कारण उसका पुनरावाहन न करना है न कि उसे याद न रख सकना। जो ज्ञान मन में धारण नहीं किया गया उस का पुनरावाहन नहीं हो सकता, पर इसका उलटा सदा सत्य नहीं होता और यह नहीं कहा जा सकता कि जिस बात का पुनरावाहन नहीं हो सकता उसे स्मृति ने धारण ही नहीं किया है। प्राय. सभी का अनुभव होगा कि कभी कभी कोई विशेष नाम या शब्द आवश्यकता के समय बहुत प्रयत्न करने पर भी याद नहीं आता पर जब हम हार मान कर बैठ जाते हैं और जब उसकी ज़रूरत भी निकल जाती है तो वह स्वयं ही अकस्मात स्मृति पटल पर प्रकट हो जाता है। यदि उस नाम या शब्द को स्मृति ने धारण नहीं

किया था तो वह स्मृति में लौट कर आता ही कैसे ? अतएव यह स्पष्ट है कि वह मन में उस समय भी सुरक्षित था जब कि हम उसे वापिस बुलाने मे असमर्थ रहे।

इस विचार के समर्थन के लिए प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स ने एक विचित्र घटना का वर्णन किया है। एक वृद्धा को एक प्रकार का तेज़ ज्वर हो गया और वह सन्निपात की अवस्था में बड़बड़ाने लगी। यद्यपि वह अशिक्षित थी पर उस समय वह ग्रीक और लैटिन भाषाएं बोल रही थी। पादरियों ने कहा कि उसपर भूत सवार है, पर एक चिकित्सक ने जो उसके पूर्व इतिहास से परिचित था, इस रहस्य का उद्घाटन किया। बचपन से लेकर कई वर्ष तक वह बुढ़िया एक विद्वान पादरी के यहां नौकरी करती रही और उसे ग्रीक और लैटिन की पुस्तकें पढ़ते हुए सुना करती थी। उसके मस्तिष्क पर इन भाषाओं के वाक्यों की अमिट छाप पड़ गई थी यद्यपि वह इन भाषाओं से अनभिज्ञ थी और प्रयत्न करने पर उन भाषाओं का एक वाक्य भी पुनरावाहन न कर सकती थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि धारण—शक्ति हमारे अधिकार में नहीं है और चाहे उसकी जो मात्रा हमें प्रकृति से मिली है वह हमारे लिए यथेष्ट न भी जान पड़ती हो; तो भी निराशा की कोई बात नहीं क्यों कि अधिकांशतः स्मृति का काम करने में धारण शक्ति ही सब से कमज़ोर अंग नहीं है।

७. पुनरावाहन

ऊपर लिखा जा चुका है कि स्मृति का पहला अंश अंकन या छाप डालना है, जिसे ग्रहण भी कहा जा सकता है। दूसरा अंश है धारण अथवा सुरक्षित रखना। जो कुछ ग्रहण किया है या सीखा गया है उसे सुरक्षित रक्खे बिना काम कैसे चल सकता

है ? पर यदि हम अपनी सम्पत्ति को आवश्यकता पड़ने पर उपयोग न कर सकें तो उसका होना न होना बराबर ही होगा। इसी प्रकार सुरक्षित ज्ञान की उपादेयता तभी है जब वह आवश्यकता पड़ने पर मन में फिर बुलाया जा सके। पुनरावाहन ही स्मृति की कसौटी है।

पुनरावाहन का आधार है एक घटना या पदार्थ का दूसरी घटना या पदार्थ से मानसिक सम्बन्धी करण (Mental Association) यदि आप ठीक समय पर पुनरावाहन करने की अपनी योग्यता को शिक्षित करना चाहते हैं तो जो चीज़ आपको स्मरण करनी है उसकी मानसिक तसवीर और किसी दूसरी तसवीर या अनुभव के बीच में, जो आप जानते हैं कि आप के दिमाग में उसी समय उपस्थित होगा, आप को एक प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करना पड़ेगा। जब यह दोनों तसवीरें मन के भीतर जोड़ दी जायगी तो दूसरी के साथ साथ पहली भी आप के मस्तिष्क के सामने प्रकट हो जायगी। जिस किसी नाम या तथ्य का पुनरावाहन वांछनीय हो वह स्मृति रूपी समुद्र में से अन्य सम्बन्धित नामों या तथ्यों की काटयों द्वारा ही खींच कर निकाला जा सकता है। हमारी स्मृति किसी इच्छित पदार्थ या घटना तक इस प्रकार के मानसिक सहचारों के पुलों पर से होकर ही पहुँच सकती है। किसी नवीन घटना या तथ्य और उससे मिली जुली पूर्व परिचित घटनाओं या तथ्यों के बीच मानसिक सम्बन्ध जितने बहुसंख्यक और विभिन्न होंगे, पुनरावाहन की सम्भावना उतनी ही बढ़ जायगी। उदाहरणार्थ, ऐतिहासिक तिथियों और घटनाओं को याद करना हो तो उनका मानसिक सम्बन्धीकरण उन महत्वपूर्ण और केन्द्रीय घटनाओं और तिथियों से करना चाहिए जिनसे उनका स्वभावतः ·०। भौगोलिक नाम, स्थान या अन्य सामग्री को कण्ठस्थ करना हो तो उस पर वर्तमान जानकारी के प्रकाश में सोच

विचार करना चाहिए, और वैज्ञानिक ज्ञान को एक शृङ्खला में बांध कर समूचे रूप से याद करना चाहिए। सारांश यह कि हमें स्मृति को जो कुछ भी धरोहर सुरक्षित रखने के लिए सौंपना हो, उसे भली भांति सोच विचार कर उसके समान पूर्ववर्ती ज्ञाननिधि से सम्बद्ध कर देना चाहिए। पेंसिल, चाकू, कंघे और ऐसी ही अन्य छोटी मोटी चीजें, इधर उधर होकर, घरों में अक्सर खो जाया करती हैं, पर यदि इन चीजों का एक बड़ा सा बक्स हो तो उनके इस प्रकार खो जाने की सम्भावना बहुत कम होगी। इसी तरह हमें यह आशा न करनी चाहिए कि हमारी स्मृति इक्के दुक्के असम्बद्ध तथ्यों को अपने पास जमा रक्खेगी और अवसर पर पुनः हमें देदेगी, बल्कि हमें चाहिए कि मनन और चिन्तन करके उन बातों को अधिक से अधिक तार्किक सम्बन्धों द्वारा, अपनी ज्ञान राशि से जोड़ दें, जिससे स्मृति में उनके खो जाने की सम्भावना कम हो जाय।

८. पहचानना

यदि हमने किसी बात का पुनरावाहन कर भी लिया, पर उसे पहचान न सके, तो हम अतीत से उसका सम्बन्ध न जोड़ सकेंगे, और उस हद तक हमारी स्मृति अपूर्ण रहेगी। अक्सर ऐसा होता है कि आप यह निश्चय नहीं कर पाते कि एक व्यक्ति से, जो आप के सामने है, आप पहले मिल चुके हैं या नहीं, या कोई विशेष कहानी आप पहले सुना चुके हैं या नहीं। ऐसी हैरानी की मानसिक अवस्थाएँ साधारणतः अपूर्ण या अधूरी पहचान के कारण ही उत्पन्न होती हैं।

स्मृति के चारों अंशों का विवेचन करने के बाद हम आधुनिक मनोविज्ञान की खोजी हुई उन विधियों का वर्णन करेंगे जो प्रत्येक अंश के लिए सर्वश्रेष्ठ सिद्ध हो चुकी हैं। इन रीतियों को

समझ लेने के बाद तत्परता से उनका प्रयोग करते रहना चाहिये यहाँ तक कि वह आदत में दाखिल हो जाय और आवश्यकता पड़ने पर अनायास ही उनका प्रयोग हो सके।

९. अंकित करने के नियम

(१) सीखने का संकल्प।

सर्व प्रथम कण्ठस्थ करने की उत्कट कामना या सीखने का दृढ़ संकल्प होना चाहिये। निश्चित उद्देश्य की मानसिक प्रेरणा के बगैर केवल अंकन या बार बार के अंकन से भी कोई अधिक *लाभ न होगा।*

दो मनोवैज्ञानिकों ने अर्थरहित शब्द-खण्डों को रटने के सम्बन्ध में कुछ प्रयोग किए। उनके अनुसंधानों से यह नतीजा निकला कि शिक्षार्थी जितना निष्क्रिय होगा उतनी ही अधिक बार कण्ठस्थ करने के लिए उसे दोहराने की आवश्यकता होगी। दूसरे शब्दों में, जब सीखने की क्रिया का आधार यन्त्रवत् दोहराना होता है तो यह क्रिया धीरे धीरे और कठिनाई से होती है। एक दफा जब इन मनोवैज्ञानिकों ने कण्ठस्थ करने का अधिकतम प्रयास किया तो उन्हें क्रमशः १३ और १९ बार दोहराना पड़ा। पर जब उन्होंने एक निष्क्रिय भाव अपना लिया तो उन्हीं बातों को याद करने के लिए उन्हें क्रमश ८९ और १०० बार दोहराने की आवश्यकता पड़ी, और उस पर भी तुर्रा यह कि अधिक बार दोहराकर निष्क्रियता से—सीखी हुई बातें उन्हें दीर्घकाल तक स्मरण भी न रह सकीं। क्योंकि कुछ दिनों बाद जब उन्होंने उन शब्द—खण्डों को फिर मुखाग्र करने की कोशिश की जिन्हें उन्होंने पहले क्रियात्मक या निष्क्रिय ढंग से याद किया था—तो यह देखा गया कि निष्क्रियता से सीखी हुई सामग्री को पुन कण्ठाग्र करने में उन्हें अधिक बार दोहराने की आवश्यकता पड़ी। सच तो यह है

कि उन्होंने जो कुछ निष्क्रियता से सीखा था उसका अधिकांश भाग एक सप्ताह बाद ही उनकी स्मृति से लोप हो गया।

सीखने की क्रिया में सीखने के संकल्प का बहुत बड़ा हाथ रहता है, और उत्तम फल प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सीखने के वास्ते एक दृढ़ संकल्प या हार्दिक इच्छा हो।

हर प्रकार के मानसिक उद्योग में इस बात का बड़ा असर पड़ता है कि किस मानसिक भाव से यह काम किया जा रहा है। अगर किसी कविता को कण्ठस्थ करने की आप की तीव्र इच्छा है तो समझ लीजिए कि याद करने का आधा काम हो गया। फिर यदि आपको वह पद्य अच्छा लगता है तो याद करने का परिश्रम और भी कम हो जायगा।

इरादे से धारण को बड़ी सहायता मिलती है। यह बात चाहे अत्यन्त सरल जान पड़ती हो पर स्मृति को परिष्कृत करने में इसको पहला कदम समझना चाहिए। याद रखने के प्रयत्न ही से स्मृति की कार्य क्षमता बढ़ जाती है, और यह बात प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो चुकी है, कि याद करने की उत्कण्ठा से तात्कालिक स्मृति में ७० प्रतिशत और दीर्घकालिक स्मृति में ६० प्रतिशत उन्नति हो जाती है।

(२) एकाग्रता

एकाग्रता—जिसपर सभी प्रभुत्व पा सकते हैं—एक दृढ़ और फूहड़ स्मृति का सारा अन्तर पैदा कर देती है। स्मृति की त्रुटियों और दुर्बलताओं का सब से व्यापक कारण यही है कि संस्कार डालते या सीखते समय लोग दत्तचित्त नहीं होते। अगर आप अपना आधा या चौथाई ही मन काम में लगाते हैं, अगर आप उसी समय और भी दूसरी बातों के विषय में विचार करने लगते हैं, जिससे कि नया पदार्थ तथ्य या परिचय आप की चेतना को

सतह पर एक हल्की सी लहर ही पैदा करके रह जाता है, तो आप को बिलकुल भी अचम्भा न करना चाहिए यदि पाँच ही मिनट बाद आप उस नाम या तथ्य को भूल जाय और न अपने भाग्य ही को दोषी ठहराना चाहिए।

अगर आप अच्छी तरह हृदयस्थ करना चाहते हैं तो आप को एक समय में एक ही वस्तु पर ध्यान देने और उसी पर अपने सम्पूर्ण मन का प्रयोग करने की आदत डालनी चाहिए। जो काम कर रहे हो उस पर अपने मनको एकाग्र करना चाहिए, जिससे न केवल उसका रूप रेखा और महत्वपूर्ण बातों को देख सकें बल्कि अपने स्मृति पटल पर, धुंधले धब्बा के बजाय उसके कई एक चमत्कार, नुकाले और स्पष्ट चित्र अंकित कर सकें। स्मरण करने के लिए यह आवश्यक है कि संस्कार ग्रहण करते समय मन सचेत हो और सारी इन्द्रियां जागरूक हों।

(२) काम में रस लेना चाहिए।

एकाग्रता के लिए जरूरी है कि जो कुछ भी काम किया जाय उसमें रस लिया जाय। उत्तम दक्षता के लिए गहरी रुचि आवश्यक है। जिस काम में भी आप हाथ लगावें उससे जी को न ऊबने दीजिए और न यह सोचिए कि यह किसी तरह जल्द खतम हो जाय, वरन् उसे प्रेम पूर्वक करते जाइए। ऐसी आदत डालिए कि जो ही काम हो उसे करने में आपको आनन्द का अनुभव हो। अपने काम के चित्ताकर्षक पहलू को देखिए। यह महसूस कीजिए कि आपका काम महत्वपूर्ण और उपकारी है। उसमें आपको और दूसरों को जो लाभ होगा उसकी कल्पना कीजिए। उसमें आनन्द लेना सीखिए। एकाग्रता का यही रहस्य है।

यदि किसी को स्मरण करने में देर लगता है, यदि किसी को सीखना ना पसन्द है, यदि कोई इस शंका में पीड़ित है कि याद की

हुई चीज शीघ्र भूल जायगी, यदि कोई अपनी स्मरण शक्ति पर अविश्वास करता है तो उसके हृदय के यह निषेधात्मक भाव स्मरण करने के उस काम को वास्तव में कठिन बना देंगे और यह आशंका रहेगी कि उसने जो कुछ याद किया है उसे वह देर तक सुरक्षित न रख सकेगा। मानसिक दक्षता का दृष्टिकोण से घना सम्बन्ध है। प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि यदि कोई कार्य खेल की तरह मजेदार समझकर किया जाता है तो कार्य क्षमता बढ़ जाती है। स्मृति के साथ भी ऐसा ही होता है। यदि आप स्मृति कार्य को दुष्कर और दुखदायी के बजाय आनन्ददायी और खेल समान समझें तो आप ज्यादा अच्छी तरह और देर तक याद रख सकेंगे। किसी बालक का भरण पोषण और शिक्षा ऐसी न होनी चाहिए। जिस से वह मानसिक कार्य को अरुचिकर समझने लगे और यदि किसी वयस्क की इस प्रकार की बुरी बान पड़ गई है तो उसे शीघ्र ही अपने मानसिक भाव में परिवर्तन कर देना चाहिये। अगर आप स्मरणकार्य की ओर अपना दृष्टिकोण सचमुच और यथार्थ मे नहीं बदल सकते तो कम से कम बनावटी तौर से ही प्रसन्नता का रूप धारण कर लेने से भी स्मृति को बड़ी सहायता मिलेगी, और जब थकावट या अरुचि प्रकट होती जान पड़े उस समय तो कम से कम ऐसा अवश्य ही करना चाहिए। अगर आप याद करने के तथा दूसरे मानसिक कार्यों को खेल समझने की आदत डाल लें तो आप देखेंगे कि यह सब काम वास्तव में सुलभ और आनन्द प्रद हो जायंगे।

(४) प्रथम संस्कार क्रमशः और सावधानी से डालने चाहिए

शिक्षण क्रिया में प्रारम्भिक संस्कारों का बड़ा महत्व रहता है। इस लिए यह आवश्यक है कि यह पहले संस्कार धीरे धीरे साव-

धानी से डाले जांय, जिससे कि यह मानसिक चित्र जिन्हें ग्रहण करना है स्पष्ट, शुद्ध और सम्पूर्ण हो। संस्कार ज्ञानेन्द्रियों द्वारा, मुख्यतः आंख और कान द्वारा, हमारे मन के भीतर प्रवेश करते हैं, और अनावश्यक तथा विरोधी संस्कारों से बचने के लिए यह आवश्यक है कि मन के दूसरे द्वारों की रखवाली की जाय और केवल उन्हीं वस्तुओं को अन्दर आने दिया जाय जिन्हें याद करना अभीष्ट है। इसलिए यह उचित है कि आरंभ में धीरेधीरे कार्य किया जाय। हर प्रकार की आदतें डालने में यह विषय लागू होता है, पर याद करने की आदतें डालने में यह विशेषकर महत्वपूर्ण है। बहुत से लोग शिकायत करते हैं कि उनकी स्मृति अयोग्य है, जब कि वास्तव में यह अपनी स्मृति को काम करने का मौका ही नहीं देते क्योंकि वे प्रारम्भिक संस्कार ग्रहण करने में बेपरवाही करते हैं। उदाहरणार्थ, लोग नाम और चेहरे याद रखने में बहुधा भूल करते हैं। इसका कारण यही है कि वे शुरू में एक स्पष्ट चित्र अंकित करने का कष्ट नहीं उठाते। जल्दी में उनसे परिचय कराया जाता है, या परिचायक मिलने वाले का नाम गुनगुना कर रह जाता है, या वे स्वयं ही इस विषय पर काफ़ी ध्यान नहीं देते। फलतः यह अपने मन पर कोई स्पष्ट चित्र नहीं बना पाते और ऐसी दशा में नाम और चेहरे का शीघ्र ही धुंधला हो जाना स्वाभाविक ही है। किसी भी नई सामग्री की पहली छाप डालने में यथेष्ट समय देना आवश्यक है। इस प्रकार अंगरेजी के किसी नये शब्द का अर्थ शब्दकोष से सीखने में उतावलापन कदापि न करना चाहिए, बल्कि उसके उच्चारण, रूप और हिज्जे भली भांति देख लेना चाहिए, और उसके विभिन्न अर्थों और प्रयोगों की यथा सम्भव स्पष्ट और गहरी छाप मन पर डाल लेनी चाहिये।

जो काम हाथ में लिया हो उस पर सावधानी से ध्यान देने

के अलावा यह भी आवश्यक है कि उसको खूब अच्छी तरह समझ लिया जाय। सीखते समय इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि हर वस्तु को ठीक-ठीक समझ लिया जाय, और जब तक कि हर बात मन में स्पष्ट, निश्चित और सुव्यवस्थित न हो जाय तब तक सीखने की क्रिया को अधूरा ही समझना चाहिये। सड़क या रेल की दुर्घटनाओं के बारे में प्रत्यक्षदर्शियों के दिए हुए बयान अधिकांशतः गड़बड़ होते हैं, क्योंकि दुर्घटना को देखकर लोग घबरा जाते हैं और उनके मन में दुर्घटना के जो चित्र बनते हैं वह भी धुंधले और उलटे-पलटे होते हैं।

इस विषय का पालन आवश्यक है क्योंकि अच्छी स्मृति वाले के लिए भी कोई बात ठीक से याद कर लेना असम्भव हो जायगा अगर यह बात आरम्भ में अच्छी तरह और पूर्ण रूप से सीखी नहीं गई थी। किसी विषय पर स्पष्ट विचार प्राप्त करने के लिए शुरू में चाहे कितना भी परिश्रम करना पड़े उसे व्यर्थ न समझना चाहिए। हमारे महापुरुषों ने इस बात की पुष्टि की है कि उनकी सफलता बहुत कुछ इस नियम के अटूट पालन के कारण हुई।

यह समझाने के लिए कि इस नियम को किस प्रकार व्यवहार में लाया जाय, कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं।

(क) यदि आप कोई कविता, तथ्य-शृङ्खला या वाद-विवाद को हृदयस्थ कर रहे हैं, तो केवल शब्दों या विचारों के मानसिक चित्रों पर ही संतोष न कीजिए, वरन यह विचारिए कि एक भाग का दूसरे से क्या सम्बन्ध है और कोई पंक्ति, तथ्य या युक्ति किसी अन्य के बाद, तथा किसी अन्य के पहले, क्यों आती है।

(ख) यदि आप किसी भाषण की तैयारी कर रहे हैं तो केवल उसका ढांचा ही याद करके न बैठ रहिए, बल्कि यह विचार

कीजिए कि विषय का विकास कैसे करना है, तथा किस तर्क या युक्ति को किस क्रम से कहना चाहिए और क्यों। यदि इन बातों को आप भलीभांति समझ लेंगे तो बहुत सम्भावना है कि जब आप बोलने को खड़े होंगे तो बिना हिचक के तर्क और युक्तियां क्रमानुसार आपके मस्तिष्क में आती रहेंगी।

(ग) यदि आप किसी से मुलाकात या कोई अन्य काम करने के लिए समय नियत कर रहे हैं और उसे उसी समय नहीं टीप सकते (डायरी में लिखकर भी कभी-कभी लोग डायरी देखना ही भूल जाते हैं!) तो मन में केवल इतना ही बार-बार विचार करके न रह जाइए कि आप को अमुक व्यक्ति से अमुक समय पर मिलना है, बल्कि उस दिन के सारे कार्यक्रम पर दृष्टि डाल जाइए और यह सोचिए कि नये कार्य या मुलाकात के कारण उस दिन के पूर्व निर्धारित कार्यक्रम में क्या परिवर्तन करना पड़ेगा। मुलाकात, उसके स्थान, वार्तालाप के विषय, तथा अन्य सम्बन्धी बातों और मुलाकात में जो भाग आप स्वयं लेंगे, उस पर भी विचार कर लेना चाहिए।

(घ) यदि आप को कुछ आज्ञाएं दी जा रही हैं जिन्हें आप को जबानी याद करना है तो आप उन्हें निष्क्रिय भाव से न सुनिए, बल्कि उनके सम्बन्ध में प्रश्न पूछिए, नई बातें उठाइए, और टीका-टिप्पणी कीजिए। यह सब उन आदेशों में त्रुटियां निकालने के लिए नहीं, बल्कि इस उद्देश्य से कि उन्हें और भी अच्छी तरह हृदयंगम कर सकें। आप को भले ही यह विश्वास हो कि आप उन आज्ञाओं को खूब समझ गये हैं, तो भी आपको ऐसा ही करना चाहिए।

(ङ) यदि आप को कोई अनजान व्यक्ति मिले और आप उसकी शक्ल और उसका नाम याद रखना चाहें, तो आप केवल उसके चेहरे की ओर घूरते और नाम रटते न रहिए, क्योंकि जैसा

हम पहले बता चुके हैं, सीखने या याद करने के लिए केवल दोहराना ही पर्याप्त नहीं। आप को चाहिए कि जितनी जल्दी संभव हो नाम को कागज़ पर लिख लें और हो सके तो कुछ बातें उसकी सूरत के बारे में भी नोट कर लीजिए।

५. आरम्भ में जो संस्कार मन पर डालें उनमें अत्यधिक ब्योरे को सम्मिलित न कीजिए।

प्रथम सस्कारों मे बहुत से ब्योरे आजाने से मानसिक चित्र अस्पष्ट और धुधले हो जॉयगे। किसी विषय के मूल तत्त्वो और उसके छोटे छोटे ब्योरे में बडा अन्तर रहता है पर इस पर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया जाता। प्रायः विद्यार्थी लोग इन दोनों को समान महत्ता देकर ही, जैसे कि वह किताबों मे पाये जाते हैं, पढ लेते हैं। इसी तरह कुछ पुस्तकों में भी यह दोष रहता है कि उनमे छोटी छोटी बातो का भी उतने ही विस्तार से वर्णन रहता है जितना कि मुख्य सिद्धान्तो का बल्कि कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि नियमों को दर्शाने वाले उदाहरणों की अपेक्षा अधिक जोर उनके अपवादों पर ही दिया गया है। इसका कारण यह हो सकता है कि लेखक नियम से इतना परिचित होगया है कि उसे नियम में तो कोई महत्व दीखता ही नहीं बल्कि केवल अपवादों में ही दीखता है।

आरम्भ मे स्मृति पर छोटी-छोटी बातो का अतिशय बोझा न डालना चाहिए। इस हेतु यह सलाह दी गई है कि यदि किसी नये विषय को सीखना हो तो पहले उसकी कई पुस्तकों का मिलान किया जाय और जो-जो प्रधान शीर्षक उन सब में मिलें उन्हें चुन कर केवल उन्हीं को सीखा जाय। और जब उस विषय के जड और तने, अथवा उसके मुख्य सिद्धान्त मन मे दृढता से जम जाय, तो धीरे-धीरे विद्यार्थी की प्रगति के अनुसार उनमें शाखाएँ

जोड़ दी जायँ। इस सम्बन्ध में पाठकों को सावधान करना आवश्यक है, क्योंकि हमारी शिक्षा-प्रणाली में उपरोक्त नियम के विपरीत तरीके का ही अधिक प्रचलन है। अधिकांश लोग जब किसी पुस्तक को पढ़ने लगते हैं तो उसके पृष्ठ के पृष्ठ पढ़ डालते हैं, पर विषय के मूल और साधारण तत्वों में कोई भेद नहीं करते, और जब पुस्तक समाप्त हो जाती है तो फिर उसे दोहरा, तिहरा भी लेते हैं, पर इसी तरीके से। यह तरीका गलत है और इस तरह याद की हुई चीजें—महत्वपूर्ण और साधारण दोनों ही—बहुत शीघ्र विस्मृत हो जाती हैं।

किसी नये विषय का अध्ययन आरम्भ करने में निम्नांकित रीति की सिफारिश की जाती है, जिसमें व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तन भी किए जा सकते हैं। पहले एक छोटी—कोई १०० पृष्ठ की सुबोध पुस्तक को उठाइए। उसे ध्यान से पढ़िए और विषय के मूल तत्त्वों को हृदयंगम कर लीजिए। अथवा किसी अच्छे विश्वकोष में उस विषय के लेख को पढ़ जाइए। जब मूल तत्त्वों का ज्ञान हो जाय तब कोई और बड़ी पुस्तक शुरू करनी चाहिए, पर ऐसा तभी करना चाहिए जब विषय के मूलतत्त्वों पर पूरा अधिकार प्राप्त हो जाय। इसी तरह मुख्य सिद्धान्तों की सुदृढ़ नींव पर ही उस विषय के ज्ञान की इमारत धीरे-धीरे सावधानी से बढ़ाते जाना चाहिए।

६. दोहराने से स्मृति को सहायता मिलती है।

दोहराना स्मृति का एक विशेष साधन है। क्योंकि यह नियम है कि जितनी बार कोई बात दोहराई जाती है उतनी ही गहरी उसकी छाप होती जाती है और उतनी ही अधिक आशा उसके पुनराग्रहन की होती है। जिस मार्ग पर बहुत लोग चला करते हैं वहां पर पगडंडी बन जाती है। इसी तरह मस्तिष्क के भीतर

यदि एक मार्ग से संवेदन की धारा बराबर गुजरे तो वहाँ निशान गहरा हो जाता है। यह तो हम सभी जानते हैं कि बराबर पढ़ना याद करने की एक बड़ी प्राचीन विधि है।

साधारण बोल-चाल में रटने या घोटने का अर्थ यह होता है कि किसी चीज को परीक्षा या दूसरो प्रकार की आवश्यकता से जरा पहले बार बार पढ़कर, पर समझने की कोई विशेष कोशिश न करते हुए, याद कर लिया जाय। इस प्रकार के तोता रटन का दोष यह है कि मन को पाठ्य सामग्री को न तो पचाने और न पूर्वसंचित ज्ञान से जोड़ने का अवसर मिलता है। इसी कारण सीखने का यह ढंग दूषित है। इसके विपरीत; जो शिक्षार्थी पाठ्य विषय को भिन्न-भिन्न दिनों में और भिन्न-भिन्न अवसरों पर दोहराता है और अपने पिछले ज्ञान से उसका नाता जोड़ता है तो वह विषय को हृदयंगम कर लेता है। रटना कोई बुरा काम नहीं है, पर यह याद करने या सीखने का श्रेष्ठ ढंग नहीं है। क्योंकि चाहे देखने में भले ही यह तरीका मितव्ययी जान पड़ता हो, पर इसके फल ऊपरी और क्षणिक होते हैं। फिर भी यह मानना ही पड़ेगा कि प्रत्येक शिक्षा-प्रणाली मे रटने का कुछ न कुछ स्थान है। ज्ञान की प्रत्येक शाखा में कुछ नियम, तथ्य सूत्र, या सिद्धान्त ऐसे होते हैं जिन्हें कण्ठस्थ रखना हितकर होता है। इस के अतिरिक्त कुछ सुन्दर उद्धरण, कहावतें, चुटकुले, मजाक और दिल्लगी की कहानियाँ ऐसी होती हैं जिन्हें अच्छी तरह याद करके सुअवसर आने पर सुनाने से सुनने वालों पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है। रामायण के दोहे चौपाइयां, तथा अन्य लेखकों की प्रसिद्ध उक्तियां इसी कारण कण्ठस्थ करने योग्य हैं।

मुखाग्र करने के कुछ ढंग कुशल होते हैं और कुछ अकुशल। एक बड़े मनोवैज्ञानिक ने लिखा है कि हृदयस्थ करने की सर्वोत्तम रीति वाक्यों को ठोक ठोक कर मन के भीतर भरना नहीं है,

बल्कि यह कि उनका विश्लेषण करके उन पर मनन किया जाय। यदि काफी समय दिया जाय और विषय सामग्री के अर्थ और उसके विभिन्न खण्डों के पारस्परिक सम्बन्धों को समझ लिया जाय तो कण्ठस्थ करने की क्रिया बहुत सुलभ और उपयोगी बन सकती है।

७. सीखने के कालों का वितरण करना चाहिये।

केवल इतना कहना काफी नहीं कि बराबर दोहराने से याद करने में सहायता मिलती है। प्रश्न यह उठता है कि आवृत्तियों का किस प्रकार वितरण किया जाय। यदि किसी पद्य को याद करने के लिए उसे ३० बार दोहराने की जरूरत है, तो क्या इन ३० आवृत्तियों को एक ही बैठक या एक ही समय में किया जाय, या दोहराने के समय का विभाजन कर दिया जाय, अर्थात भिन्न-भिन्न समयों में दोहराया जाय?

इस प्रश्न का उत्तर मनोवैज्ञानिक यह देते हैं कि दोहराने का काम अलग अलग कई समयों में करना चाहिए और पूरे काम का लम्बे समय में सम्पादन करना ही सुखकारी है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सीखने या याद करने का काम बहुत जल्दी ही आरम्भ कर देना चाहिए, और जो विद्यार्थी साल भर पढाई को टालते जाते हैं और यह सोचते हैं कि परीक्षा के निकट घोट लेंगे वह बडी भूल करते हैं। सीखने की क्रिया फल पकने के समान है और उसके लिए समय चाहिए, प्रत्येक संस्कार को अधिक से अधिक तीव्र और एकाग्र अवश्य बनाना चाहिए। पर सारी आवृत्तियाँ को एक ही समय में केन्द्रित न कर डालना चाहिए। शिक्षा को स्थायी बनाने के लिए उस में एकाग्रता और छितरापन दोनों ही का अंश होना चाहिए।

अब प्रश्न यह उठता है कि आवृत्तियों के वितरण का सबसे अच्छा ढंग कौन सा है। कई वैकल्पिक प्रबन्ध सम्भव हैं। महीने

भर तक उस पद्य को नित्य एक बार पढ लिया करें। या एक पक्ष मे आराम करके दूसरे पक्ष में प्रति दिन दो बार या चौथे दिन दिन मे चार बार पढ लिया करें, इत्यादि। दोहराने का उद्देश्य यह होता है कि चीज को भूलने से रोका जाय इसलिए पुनरावृत्ति का सबसे अच्छा समय विस्मरण से जरा पहले होता है। मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा यह पता लगाया है कि याद की हुई सामग्री का बहुत बडा भाग पहले २४ घंटा में भूल जाता है और तीन दिनों बाद तो उसका बहुत थोडा-सा भाग ही याद रह जाता है। क्योंकि मितव्ययिता इसी में है कि जो सामग्री विस्मरण हो रही है उसे भूल जाने से पहले ही फिर स्मृति में जमा लिया जाय इसलिए कण्ठस्थ कर लेने के बाद ही पहले या दूसरे दिन सामग्री का पुनरावलोकन कर लेना बडा लाभदायक है, आरम्भ की मंजिला में, जब भूलने की गति बडी तीव्र होती है, विस्मरण की प्रवृत्ति का काट करने के लिए अधिक आवृत्तियों की आवश्यकता होगी। उदाहरण के लिए आप पद्य को पाच बार पढ कर सुस्ता सकते हैं, एक घन्टे विश्राम करके फिर पाच बार पढ सकते हैं और २४ घन्टे के अन्दर फिर पाच बार पढ सकते हैं; इस प्रकार १५ बार पढ़ लेने से सम्भवत: पद्य कण्ठस्थ हो जायगा। आपके पास अब भी ३० में से १८ आवृत्तिया शेष रहेंगी जिनका प्रयोग आप हर तीसरे दिन पद्य को दो बार पढकर पद्य को स्मृति में स्थिर रखने के लिए कर सकते हैं। इस विवेचन के आधार पर यह सामान्य नियम बनाया जा सकता है कि आरम्भ में आवृत्तियों के बीच कम अन्तर होना चाहिए और बाद में यह अन्तर क्रमश, गुणोत्तर श्रेणी के अनुसार बढते जाना चाहिए।

विस्मरण को रोकने का मुख्य उपाय यह है कि कण्ठाग्र करने के उपरान्त शीघ्र ही स्मृति की झाड़ पोंछ करली जाय। यदि आप कोई रोचक लेख पढ रहे हैं तो उसके पुनरावलोकन को कम

समय तक मत टालिए जब उसके सम्बन्ध में भाषण करने चलें। उसे स्मृति में जमाने के लिए पुनरावृत्ति करने का समय तो प्रथम संस्कार डालने के २४ घन्टे के भीतर ही है।

अपने अवकाश की घड़ियों को हाल में याद की हुई बातों का पुनरावलोकन करने में लगाइए, उनको मन ही मन दोहराइए। प्रातः सायं टहलते हुए या सवारी पर जाते हुए, जब भी आप को फुरसत मिले, अपनी हाल की याद की हुई वस्तुओं का पुनरावलोकन करने की आदत डालिए। ऐसी आदत के लिए शुरू में सक्रिय प्रयत्न की आवश्यकता होती है, पर जब एक बार काम आरम्भ कर दिया जाता है तो यह बड़ा सहज, रोचक और उपयोगी प्रतीत होने लगता है। ऐसा करने से आपको न केवल लाभदायक चीजों के याद रखने में सहायता मिलेगी बल्कि एकाग्रता का भी अभ्यास होगा।

दोहराने के समय में अन्तर देने का एक कारण और है। विश्राम काल में मन पढ़ी या सीखी हुई वस्तु से मानों खेलता रहता है, उस पर नया प्रकाश डालता है, उसको विभिन्न दृष्टिकोणों से देखता है, उसको पचाता है, और अपने पिछले अनुभवों और रुचियों में उसे सम्मिलित कर लेता है। इसलिए जो विद्यार्थी परीक्षा के निकट ही पढ़ते हैं उनकी शिक्षा संकुचित और अधूरी ही रह जाती है। नई सामग्री पर उनका स्थायी अधिकार नहीं हो पाता, और न उसकी मार्मिक बातें ही उनकी समझ में आती हैं। उनका ज्ञान छिछला और दुर्बल रह जाता है।

८. संस्कारों के बीच विश्राम

संस्कारों को एक दीर्घकाल में निरन्तर ही न करना चाहिए, बल्कि हर संस्कार के बाद मन को थोड़ासा विश्राम देना चाहिए। प्रयोगों द्वारा यह निश्चित हो चुका है कि आवृत्तियों के बाद

आराम करने मे उनकी जड़ स्मृति में और भी अच्छी तरह जम जाती है। धारण प्रधानतः अन्तश्चेतना ही की एक क्रिया है। जो अपना सर्वश्रेष्ट काम तभी करती है जब सचेत मन विश्राम करता है। जैसे फोटो के प्लेट पर पड़ी हुई छाप के जमने में कुछ समय लगता है,ऐसे ही मन पर पड़े हुए संस्कारों को भी स्थिर होने के लिए समय चाहिए। इसलिए यह बहुतआवश्यक है कि मन के भीतर तुरन्त ही किसी दूसरी वस्तु को न प्रवेश करने दिया जाय जो वहां जाकर नये संस्कारों में गड़बड़ी पैदा कर दे। किसी पद्य या गुर को सीखने के बाद तुरन्त ही किसी अन्य पद या गुर को याद करना न आरम्भ कर दीजिए, बल्कि किसी दूसरे मानसिक कार्य में हाथ लगाने से पहले अपने मन को कुछ मिनट पूर्ण रूप से आराम कर लेने दीजिए जिससे कि संस्कारों को जमकर ठोस हो जाने का अवसर मिल जाय।

९. अति-शिक्षा (OVER LEARNING)

मनोवैज्ञानिक अनुसधान से यह सिद्ध होता है कि जितने संस्कारों से पुनरावाहन मात्र हो सके उतने ही से सन्तुष्ट न हो जाना चाहिए बल्कि उससे अधिक संख्या मे संस्कार मन पर डालने चाहिए। यदि विषय सामग्री को दीर्घकाल तक सुरक्षित रखना है तो उस पर साधारण अधिकार, जो केवल तात्कालिक पुनरावाहन करा सकता है काफी न होगा। उसके लिए आवश्यक है कि मस्तिष्क पर और अधिक गहरी छाप डाली जाय। सीखने के इस सिद्धान्त का आधार यह है कि स्मृति के दो पृथक रूप होते हैं—एक तो तात्कालिक स्मृति और दूसरी दीर्घ कालिक स्मृति। पहली प्रकार की स्मृति में जो कुछ याद किया है उसका पुनरुद्भावन तुरन्त ही करना होता है। दूसरी प्रकार की स्मृति में कुछ समय बीत जाने पर पुनरुद्भावन करना होता है। उत्तम से उत्तम स्मृति होने पर भी मन पर डाले गये संस्कार समय बीतने के साथ-साथ

फीके पड़ते जाते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि दीर्घकालिक स्मृति के लिए तात्कालिक स्मृति की अपेक्षा अधिक बार संस्कार डालने की आवश्यकता होगी। इसलिए यदि आपको कुछ समय बाद ही सामग्री का पुनरावाहन करना है या उसे दीर्घकाल तक याद रखना है, अथवा स्थायी रूप से उसे अपने ज्ञान-भण्डार में सम्मिलित करना है, तो आप को अधिक से अधिक संख्या में संस्कार संचित करने चाहिए, जिससे यदि कुछ संस्कार मानस-पटल से मिट जांय तो भी आप के पास इतने संस्कार बच रहें जिससे अवसर आने पर आप पुनरावाहन में समर्थ हो सकें। आपको अतिशय सीखना चाहिए— इसका एक कारण और है। पुनरावाहन के वास्तविक समय के आने पर संभव है आप अपने को एक प्रतिकूल अवस्था में पावें या आपको शान्ति भंग करने वाली या घबरा देने वाली उलझनों का सहसा सामना करना पड़े। यदि वह एक सार्वजनिक भाषण का समय है तो हो सकता है आप कुछ घबरा जांय, या श्रोताओं में से कोई बीच में बोलकर विघ्न डाल दे या किसी नई बात का आप को उत्तर देना पड़ जाय। यदि पुनरुद्भावन किसी परीक्षा में करना है तो आपको समय की कमी हो सकती है। आपको ऐसी आकस्मिक घटनाओं के लिए पहले से तैयार रहना चाहिए और सामग्री को इतनी अच्छी तरह से याद करना चाहिए कि विघ्नों की उपस्थिति में भी आप की स्मृति आप का साथ न छोड़े। ऐसे संकट के समय पर संचित की हुई अतिरिक्त शक्ति ही आप के काम आयगी।

जो सामग्री केवल इतनी ही याद की गई है कि अगले दिन उसका पुनरुद्भावन हो सके, वह एक सप्ताह याद तभी रह सकेगी जब उसे अतिशय याद किया जाय या कोई दूसरा उपाय उसे भूलने से रोकने के लिए किया जाय। पढ़ाई करते समय ज्यों

ही कोई वस्तु कण्ठस्थ हो जाय त्यों ही उसका पढ़ना बन्द न कर देना चाहिए. बल्कि उसे थोड़ा और याद करना चाहिए। बहुत सा भूलना इसी कारण होता है कि हम न्यूनतम परिश्रम करके केवल इतना ही याद करते हैं जो कुछ घण्टों या कुछ दिनों के लिए ही यथेष्ट हो। अतिशय याद करने की आदत डालनी चाहिए। बहुत सी शिक्षा इसीलिए व्यर्थ चली जाती है कि विद्यार्थियों को अति-कण्ठाग्र करने का मूल्य नहीं बताया जाता। जो वस्तु केवल परीक्षा पास करने के उद्देश्य से याद की जाती है वह स्वाभावतः परीक्षा के बाद शीघ्र ही छिन्न-भिन्न होकर खो जाती है।

१०. पुनरावाहन के अवसर का ध्यान रखना चाहिए।

यह सभी जानते हैं कि विद्यार्थी स्कूलों और कालिजों में जो कुछ पढ़ते हैं उसका अधिकांश भाग परीक्षा के अनन्तर भूल जाते हैं। इसका एक कारण तो बताया जा चुका है—कि सामग्री इतनी अच्छी तरह याद ही नहीं की जाती कि वह चिर काल तक स्मरण रह सके। इस विस्मरण का दूसरा महत्वपूर्ण कारण यह है कि विद्यार्थियों का एकमात्र उद्देश्य वर्ष के अन्त में परीक्षा के अवसर पर, पठित विषय का पुनरावाहन कर देना होता है। उन की सारी पढ़ाई इस लक्ष्य की ओर संगठित हो जाती है, उनका उद्देश्य यह नहीं होता कि जानकारी को स्थायी रूप से ग्रहण करलें, उनके मस्तिष्क की सारी क्रियाएँ उनके ध्येय के अनुरूप और अधीन होती हैं, और ज्यों ही उनका मनोरथ चरितार्थ हो जाता है त्यों ही सीखी हुई सामग्री की छाप स्मृति में फीकी पड़ने लगती है।

मनोवैज्ञानिकों ने यह भी प्रमाणित किया है कि चिरकाल तक कण्ठस्थ रखने का संकल्प मात्र भी अच्छे प्रकार से और दीर्घकाल तक स्मरण रखने में सहायक होता है। दो *विद्यार्थी*-समूहों से अर्थ रहित शब्द-खण्डों को याद करने के लिए कहा

गया। एक समूह को यह बताया गया कि स्मरण कार्य का अन्त होते ही उन्हें पठित शब्द-खण्डावली सुनानी पड़ेगी और दूसरे समूह से कहा गया कि उनकी परीक्षा दो सप्ताह बाद होगी। याद कर लेने के बाद दोनों समूहों की परीक्षा हुई तो उनमें प्रायः कोई अन्तर नहीं पाया गया। दो सप्ताह बाद उन दोनों समूहों से फिर यह शब्द-खण्ड सुने गये तो देखा गया कि दूसरे समूह को २०% अधिक शब्द-खण्ड° याद थे। समान प्रयास के विभिन्न फल इसलिए हुए कि दोनों समूहों के सीखने के उद्देश्य विभिन्न थे। इससे यह निष्कर्ष निकला कि अल्प या दीर्घ काल तक याद करने के अभिप्राय से सीखी हुई सामग्री न्यून या अधिक समय तक याद रहती है।

इसमें यह उपयोगी नियम निकला है कि जब कभी आप कोई चीज याद करें तो उस भावी अवसर का ध्यान रक्खें जब आप को उस वस्तु का प्रयोग करने की आवश्यकता पड़ेगी। हो सकता है कि यह अवसर बिलकुल निश्चित और निकट भविष्य में ही हो। स्कूल या कालेज के विद्यार्थियों के लिए तो यह अवसर परीक्षा काल ही होगा। शायद आप को एक व्याख्यान देना है या किसी महत्वपूर्ण सम्मेलन में कुछ तथ्य या आँकड़े प्रस्तुत करने हैं, या कचहरी में कानूनी बहस करने के लिए किसी मुकदमे की तैयारी करनी है। जो कुछ भी सामग्री आप को हृदयस्थ करनी हो, अगर आप को किसी निश्चित समय पर उसका पुनरुद्धावन करना है, तो याद करते समय उस अवसर का ध्यान में रखिए। निपुणता का यह एक रहस्य है। इसमें शीघ्रता, विश्वास और न्यूनतम परिश्रम से याद करने में सहायता मिलती है। इसके द्वारा जो कुछ आवश्यकता हो और जब आवश्यकता हो उसे आप प्राप्त कर सकते हैं। और यदि आप को दीर्घकाल के लिए याद करना है तो इस बात को भी याद करते समय ध्यान में

रखना चाहिए। बाइसिकिल पर चढ़ना तैरना या इसी प्रकार के अन्य शारीरिक हुनरों को सीखते समय यह नियम शायद अचेतित ढंग से प्रयोग कर लिया जाता है, जिसके कारण बहुत दिनों तक अभ्यास छूट जाने पर भी मनुष्य ऐसी निपुणताओं को नहीं भूलता। पर मानसिक क्षेत्र में यह बात आप से आप नहीं होती, और यदि जानकारी को स्थायी रूप से याद करना है तो इससे लिए सचेत ढंग से और जान बूझकर इस लक्ष्य को अपने समक्ष रखना पड़ेगा।

अस्थायी उपयोगिता वाले ज्ञान के लिए तो नोट बुक या (Engagement Card) ही अच्छा है। जो भार कागज़ पर डाला जा सके वह स्मृति पर क्यों रखा जाय? पर यह सिद्धान्त न भूलना चाहिए कि जब कभी कोई बात दीर्घ काल तक याद रखनी हो, तो इसके लिए एक दृढ़ संकल्प से बहुत लाभ होता है। दीर्घ-कालिक और अल्पकालिक धारणा की क्रियाएं बिलकुल भिन्न होती हैं, और सर्वोत्कृष्ट फलों की प्राप्ति के लिए यह परमावश्यक है कि पठित सामग्री भावी उपयोग का विशेष ध्यान रक्खा जाय।

———

दसवाँ अध्याय

स्मृति और उसका विकास (२)

१. स्मृति के अन्य सहायक

(१) सामग्री को इकट्ठा याद करना चाहिए न कि टुकड़े करके।

मान लीजिए कि आप को एक पद्य कंठस्त करना है, या गणित के एक सूत्र, वैज्ञानिक सिद्धान्त या किसी आदेश माला पर प्रभुत्व पाना है, या किसी व्याख्यान या सम्मेलन के लिए तैयारी करनी है, तो सामग्री को टुकड़े टुकड़े-करके याद करना श्रेयस्कर होगा या कुल को बारम्बार पढ़ना यहां तक कि वह भली भांति हृदयस्थ हो जाय ?

मनोवैज्ञानिक इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि "सम्पूर्ण" विधि ही उत्तम है। इसके अनुसार याद करने से खण्ड विधि की अपेक्षा समय और बल का कम व्यय होता है और सामग्री भी अधिक और देर तक याद रहती है।

आगे चल कर "अर्थ और स्मृति" सम्बंधी शीर्षक में दिये हुए परीक्षा-फलों से यह प्रत्यक्ष होगा कि लम्बे प्रकरणों को याद करने में मितव्ययता है। यह भी सिद्ध हो चुका है कि जो बात बड़ी इकाइयों में कंठस्थ की जाती है, वह अपेक्षाकृत अच्छी तरह याद रहती है क्योंकि २० घंटों के बाद बड़े प्रकरणों को पुनः कंठाग्र करने में छोटे प्रकरणों की अपेक्षा किफ़ायत होती है।

अगर 'खण्ड' रीति कम उपयोगी होते हुए भी इतनी प्रचलित है तो इसका कारण यह है कि जो लोग अपनी शिक्षा की समुचित योजना नहीं बना लेते और यथेष्ट समय रहते याद करना आरम्भ नहीं कर देते, उनके लिए केवल इसी रीति का सहारा रह जाता है। अगर आप अपनी सारी पढ़ाई को अन्तिम मास के लिए छोड़ देते हैं, अगर आप ऐन मौक़े से पहले की रात को सब कुछ रट लेने ही की आदत डाल लेते हैं, तो आप "सम्पूर्ण" विधि का सफलता से उपयोग नहीं कर सकते। अगर आप का उद्देश्य सच्ची निपुणता और प्रभुत्व न होकर केवल ऐसी अल्पकालिक योग्यता प्राप्त करना है जिससे एक विशेष अवसर के लिए छूटी हुई चीज़ का पुनरुद्भावन मात्र कर सकें तो दूसरी बात है। "खण्ड" विधि कामचलाऊ भले ही हो, पर यदि आप अपनी शिक्षा को, टिकाऊ और गुणकारी बनाना चाहते हैं तो उसके लिए बुद्धिमानी से समय का वितरण कीजिए और "सम्पूर्ण" रीति का अवलम्बन कीजिए।

सम्पूर्ण विधि शीघ्र कण्ठस्थ करने और देर तक धारण करने के लिए सर्वोत्तम है, पर कुछ बातें, जो इसकी उपयोगिता को परिमित करती है, ध्यान में रखनी चाहिए। जो सामग्री हृदयस्थ करनी है वह इतनी लम्बी हो सकती है कि इस विधि को उपयोग करने में कठिनाई हो, पर प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि २४० पंक्तियों तक के काव्य को याद करने में सम्पूर्ण रीति ही श्रेयस्कर है। दूसरी बात यह है कि विषय सामग्री प्रायः समान कठिनाई की होनी चाहिए। अगर कहीं-कहीं के भाग विशेष रूप से कठिन हैं, तो निस्सन्देह यह हितकर होगा कि पहले उन कठिन भागों पर अधिकार प्राप्त कर लिया जाय। तीसरे, विषय सामग्री में कुछ न कुछ एकता और क्रम होना चाहिए। ढेर की ढेर संख्याएँ विदेशी शब्दों या अर्थहीन शब्द-खण्डों की सूचियां, सम्पूर्ण विधि

से कण्ठाग्र करने के लिए अनुपयुक्त सामग्री है। चौथे, शिक्षार्थी को उस काम या विषय से बिल्कुल अपरिचित न होना चाहिए, वरन् साधारण बुद्धि के साथ-साथ उसे उस प्रकार की सामग्री को याद करने का कुछ अभ्यास या अनुभव भी होना आवश्यक है।

(७) शिक्षा को परीक्षण क्रिया समझना चाहिए और समय समय पर अपनी जांच करके देखना चाहिए कि कहां-कहां असफलता हुई और किन-किन दशाओं में सफलता प्राप्त हुई।

शारीरिक हुनर सीखने की सारी क्रिया ही परीक्षण क्रिया है। जिससे शिक्षार्थी लगातार अपनी परीक्षा करता रहता है और उसे यह पता चलता रहता है कि उसने अब तक जो निपुणता प्राप्त की है उसमें मजबूत और कमजोर जगहें कौन सी हैं और किन जगहों को और मजबूत बनाने की जरूरत है। ऐसी ही परीक्षाएं स्मरण कार्य में भी, समय-समय पर, करनी चाहिए। यदि आप एक पद्य को पूर्ण रीति से याद कर रहे हैं और चार दिन तक प्रतिदिन तीन बार पढ़ चुके हैं और आप को ऐसा ज्ञान पड़ता है कि वह कुछ-कुछ आपके मन में जमने लगा है, तो पांचवें दिन उसे पुनः पढ़ने से पहले, अपनी परीक्षा करके देखिए कि आप कितने हिस्से का पुनरावाहन कर सकते हैं। इस प्रकार आप न केवल स्मृति को काम करने के लिए बाध्य करेंगे वरन् यह भी पता लगा सकेंगे कि पद्य के कौन से भागों को स्मृति ने अभी तक ग्रहण नहीं किया है। और इस तरह असमृत स्थानों का पता लगा कर अगली पुनरावृत्तियों को अधिक लाभदायक बना सकेंगे और इन भागों को अलग से भी दोहरा सकेंगे।

साधारणतः परीक्षाएं पढ़ाई की समाप्ति पर होती हैं। यह शिक्षण-क्रिया का अन्त समझी जाती है न कि उसका एक महत्त्वपूर्ण अंग। उपर्युक्त आत्म- परीक्षाएं शिक्षण-क्रिया का एक आव-

श्यक अंश है, क्योंकि वे हमारी अगली शिक्षा के लिए पथ प्रदर्शक का काम करती हैं और उनके बिना शायद हमको अन्त में यह पता चले कि हमारे परिश्रम का बहुत-सा भाग या तो अनावश्यक था या गलत दिशा में लगाया गया था। अगर किसी किताब में कोई चीज कण्ठस्थ करनी है तो थोडी थोडी देर बाद अपनी जाच करके देखते रहिए कि याद करने का काम कैसी प्रगति कर रहा है। अगर किसी अनजान मनुष्य से आप का परिचय कराया गया है तो उससे बात चीत करने के उपरान्त ज्यों ही अवसर मिले यह देखिए कि आप उसका नाम बता सकते हैं या नहीं, उसके नाम का पुनरुद्भावन करने का एक से अधिक प्रयत्न कीजिए। यदि आप एक सम्मेलन में भाग ले रहे हैं तो ज्यों ही बात चीत का प्रवाह हलका पडे अपने विचारों को इधर उधर न बहक जाने दीजिए, वरन् जो कुछ वार्तालाप हुआ है उसका शीघ्रता से पुनरावाहन कर जाइए और देखिए कि उसमें से कितना आपको याद है।

अब प्रश्न यह उठता है कि शिक्षण क्रिया के बीच में किस समय ऐसी परीक्षाए आरम्भ करनी चाहिए। मनोवैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि उनको न तो बहुत जल्दी और न तो बहुत देर से आरम्भ करना चाहिए। वरन अधिकतम लाभ पाने के लिए उन्हें उस समय शुरू करना चाहिए जब स्मृति में सामग्री प्रायः आधी जम चुकी जान पडे। प्रयोगों द्वारा यह भी सिद्ध हो चुका है कि अगर ऐसा आत्म परीक्षाए याद करने की क्रिया के बीच में वितरित कर दी जाती है तो उन के कारण कण्ठाग्र करने में लगने वाले समय और आवृत्तियों की सख्या में बडी बचत हो जाती है।

३. अनेक ज्ञानेन्द्रियों द्वारा मन पर छाप डालनी चाहिए

यों तो सभी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा मन पर सस्कार पडते हैं पर आख और कान इन में प्रमुख हैं। देखा गया है कि सभी लोग

सब इन्द्रियों को समान दक्षता से काम में नहीं ला सकते। अधिकांश लोग आखो देखी चीजें ज्यादा याद रखते हैं और कुछ लोग कान से सुनी हुई बातो को। ऐसे व्यक्ति विरले ही होते हैं जो सारी ज्ञानेन्द्रियों का समान निपुणता से उपयोग कर सके। अतएव हर व्यक्ति को जांच पड़ताल करके यह पता लगा लेना चाहिए कि उसकी कौन सी इन्द्रिय सबसे कुशल है। उसी इन्द्रिय का प्रयोग सब से अधिक होना चाहिए, पर साथ ही साथ अन्य इन्द्रियों की भी सहायता आवश्यकतानुसार लेनी चाहिए और उन्हें बिल्कुल व्यर्थ न छोड़ देना चाहिए।

४. अर्थ और स्मृति

श्री डी० ओ० लियन (D. O Lyon) ने दो व्यक्तियों से एक ही बैठक मे कुछ दोहे याद करने को कहा तो निम्नांकित फल प्राप्त हुए :—

शब्द संख्या का औसत ६५ १५० ३०० ७८० १००-
याद करने के लिए

आवश्यक आवृत्ति ६ १५.५ १७.५ १९ २६.५
संख्या का औसत

इसके विरुद्ध बड़े कुशल याद करने वाले (Effingham) और (Meumann) को ३६ निरर्थक शब्द खण्डों को याद करने के लिए ५५ और ३३ बार रटने की आवश्यकता पड़ी। सार्थक और निरर्थक सामग्री को याद करने मे लगी आवृत्तियों के इस महान अन्तर से यह महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलता है कि सार्थकता सीखी हुई बात को स्मरण रखने में बड़ी सहायता देती है। यदि किसी शब्द, नाम या तथ्य का अर्थ लगा लिया जाय तो उसे याद करना सुगमतर हो जायगा और जितनी अच्छी तरह किसी शब्द या प्रकरण का अर्थ समझ लिया जायगा उतनी ही आसानी से वह कण्ठस्थ किया जा सकेगा।

इस लिए हर प्रकार के सीखने या याद करने में जो कुछ याद करना हो उसके तात्पर्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए। किसी भी चीज को भली भांति समझे बिना कण्ठाग्र करने का प्रयत्न न कीजिए। स्मरण ला का एक गुर यही है कि आप अपने अनुभवों को सार्थक बनायें। आपको जो कुछ भी स्मरण करना हो चाहे नया शब्द या नया चेहरा या नया तथ्य-यदि आप उसे अपने लिए सार्थक बना लें तो उसे अच्छी तरह याद कर सकेंगे।

भावार्थ को याद करके अपनी स्मृति को एक और सहारा दीजिए। क्या आप इसे याद कर सकते हैं, स्मृति को सहायता देने के लिए अर्थ का प्रयोग कीजिए? क्या आप इसे भी कण्ठाग्र कर सकते हैं कीजिए को का के अर्थ स्मृति सहायता प्रयोग लिए देने"? पहले को याद कर लेना आसान है क्योंकि इसमें अर्थ है; दूसरे में शब्द वही हैं पर उसे याद करना दुष्कर है क्योंकि वह अर्थ विहीन है।

यदि आप आशय की खोज करेंगे तो स्मरण कार्य में समय और प्रयास का व्यय कम होगा, और जब आप अर्थ भी याद कर लेंगे तो सामग्री को अधिक काल तक स्मरण रख सकेंगे। केवल शब्दों का कण्ठस्थ करना काफी नहीं; उनके अर्थों को शब्द कोष द्वारा भली भांति समझने का प्रयत्न कीजिये। यदि किसी प्रकरण का तात्पर्य स्पष्ट नहीं है तो उसे फिर पढ़िए यहां तक कि उसका मतलब समझ में आजाय। पत्र-पत्रिकाएं पढ़ते समय शब्दों पर उतना ध्यान न दीजिए जितना उनके अर्थों पर; वार्तालाप और व्याख्यानों में भी इसी बात का ध्यान रखिए। जो कुछ आप पढ़ते या सुनते हैं उसके शब्दों को हृदयस्थ कर लेना तो आपके लिये सम्भव नहीं, पर उसके तात्पर्य को आप सुगमता से याद रख सकते हैं।

५. बातचीत करके स्मृति को पुष्ट कीजिए

क्या आपने अपनी स्मृति को पुष्ट करने की आदत डाली है? जब कोई मामला याद करनी होती है तो क्या आप सिर्फ उसकी ओर देखते रहते हैं या उसे मन में दोहराते भी हैं? क्या उसे लिखकर आप उसपर कुछ देर सोच विचार करते हैं? यदि आप उसकी ओर देखकर अपने मन में कहें, "कितनी दिलचस्प चीज़ है; इसे अवश्य याद करना चाहिए" तो इस प्रयत्न से भी आप अपनी स्मृति की सहायता करेंगे। पर वह सहायता पर्याप्त न होगी।

स्मृति को पुष्ट करने का एक उत्तम तरीका यह है कि जिन अनुभवों, घटनाओं या तथ्यों को आप कण्ठस्थ करना चाहें उन के सम्बन्ध में बातचीत कीजिए। यदि कोई रोचक कहानी, सुन्दर चुटकुला, चमत्कार पूर्ण वाक्य या उपयोगी सीख पढ़ी या सुनी है तो समय समय पर उसे बात चीत में प्रयुक्त कीजिए और अवसर पाकर अपने मित्रों को सुनाइए। इससे आपकी स्मृति को बहुत लाभ होगा।

कुछ प्रयोग किये गए जिससे यह सिद्ध हुआ कि अगर वस्तुएं देखी और सुनी जांय तो एक सप्ताह बाद वह उस दशा की अपेक्षा १५ प्रतिशत अधिक याद रहती है जब कि वह केवल देखी ही जाय। इस लिए जिन चीज़ों को याद करना है अगर उन्हें लिख लेने की आदत आपने डाल ली है तो अच्छा ही किया। पर इस से भी अधिक सहायता आपकी स्मृति को मिल सकती है यदि ऐसी चीज़ों को दूसरों को सुनाने और उनके सम्बन्ध में बात चीत करने की आदत आप डाल लें। इस सरल उपाय से आपकी स्मरण शक्ति की बड़ी उन्नति होगी।

कुछ लोगों का कहना है कि किसी पढ़ी या सुनी हुई कहानी या चुटकुले को सदा के लिए हृदयंगम करने का सब से अच्छा

तरीका यह है कि जो प्रथम तीन व्यक्ति मिले उन्हें उसे सुनाया जाय। यह बात नहीं कि तीन बार दोहराने ही से स्मृति पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा। पर महत्व की बात यह है कि कहानी या चुटकुले को सुनाने के लिए अवसर ढूंढ़ निकालने में आप को काफी सोच विचार करना पड़ेगा। जब तक आप उस कहानी को सुनाने के अवसर की प्रतीक्षा में रहेंगे तब तक वह आप के मस्तिष्क के भीतर मंडराती रहेगी और स्मृति से जमती जायगी। इसका एक लाभ यह भी होगा कि आप दूसरे लोगों को अपनी बात चीत से ऊबाने वाले न होकर एक अच्छे वार्तालाप करने वाले बन जायेंगे। बात चीत करने से केवल याद करने ही में नहीं; बल्कि धुंधले विचारों को स्पष्ट करने विषय को समझने और नये विचारों के निर्माण में भी मदद मिलेगी।

(६) विचारों का सम्बन्धीकरण

जो भी नया अनुभव, विचार या तथ्य प्राप्त हो उसे अपने पूर्व अनुभव या ज्ञान में सम्मिलित कर दीजिए और यथा सम्भव अधिक संख्या में और भिन्न भिन्न प्रकार के सम्बन्धों का सृजन कीजिए। नये अनुभव या विचार को उसके पूर्ववर्ती सजातीय से सम्बन्धित करा दीजिए। इस प्रकार के मानसिक संसर्गों के बिना अकेली छाप फीकी पड़कर लुप्त हो जायगी। या यदि याद भी रही तो उसका पुनरावाहन कठिन हो जायगा। ये विचार-सम्बन्ध ही अच्छी स्मृति का रहस्य हैं। किसी अनुभव के सिलसिले में आप जितने अधिक सम्बन्ध अपने मन में बनायेंगे उतने ही दीर्घ काल तक स्मरण रखने की क्षमता आप प्राप्त कर सकेंगे।

पर यह मानसिक सम्बन्धीकरण क्या है? यह उस पदार्थ के विषय में तार्किक ढंग से सोचना है। जिन अनुभवों को आप स्मरण रखना चाहते हैं उन पर जितना ही सोच विचार कीजिएगा उतनी

ही अधिक सम्बन्ध लड़ियाँ उनको बन जायंगी और एक की सहायता से दूसरे का पुनरावाहन करना उतना ही सुगम हो जायगा। दो व्यक्तियों में जिन के बाह्य अनुभव एक से हों, उसी की स्मरण शक्ति अच्छी होगी जो अपने अनुभवों पर मनन करता है और उनका परस्पर सम्बन्धीकरण करता है।

बारबार दोहराना स्मृति का सहायक तो अवश्य है, पर इसका अर्थ है यंत्रवत काम करना और यदि केवल इसी तरीक़े का अवलम्बन किया जाय तो हमारी शिक्षा प्रणाली रटन्त से ऊंची न उठ सके गी। पर यह सभी जानते हैं कि रटने में कितनी मेहनत करनी पड़ती है और फल अपेक्षा कृत कितना कम मिलता है। मनोविज्ञान ने और अच्छा उपाय बताया है जो मितव्ययी होते हुए अधिक लाभप्रद भी है। यह तरीका है तार्किक सम्बन्धीकरण का जिस में नये तथ्य को किसी ऐसी चीज़ से जोड़ देते हैं जो मस्तिष्क में पहले से विद्यमान हो। मन के भीतर की पुरानी सामग्री चुम्बक का काम करती है और याद में आवश्यकता पड़ने पर नई बात को फिर चेतना में खींच लाती है। साधारण रूप से यह कहा जा सकता है कि किसी विषय की जितनी अधिक सामग्री मस्तिष्क में होगी उतनी ही आसानी से उस विषय की नई बातें याद रखी जा सकेंगी।

किसी चीज़ पर विचार करने और पुराने अनुभवों से उनके संसर्ग स्थापित करने के बहुत से तरीके हैं। नये तथ्य पुराने तथ्यों से सादृश्य, कार्य और कारण, सम्पूर्ण और अंश, वैरोध्य, वस्तु और गुण, सामान्य और विशेष इत्यादि के सम्बन्ध द्वारा जोड़े जा सकते हैं। उदाहरणार्थ, किसी नये शब्द को याद करना है। उसके विभिन्न अर्थों को सीखिए, उसके पर्यायवाची और विरोधार्थक शब्दों का पता लगाइए, उसका सही प्रयोग, उसका उच्चारण और हिज्जे सीखिए, और जल्द से जल्द किसी पत्र में या किसी

अन्य लेख में उसका प्रयोग कीजिए। यदि कोई नवीन विचार याद करना है तो उसको केवल दोहराते ही न रहिए, बल्कि यह सोचिए कि उससे आप के पूर्ववर्ती विचारों या काम काज पर क्या प्रभाव पड़ेगा। अपने अन्य विचारों से उस की तुलना कीजिए—वह किन विचारों के समान है, किन के विरुद्ध है। उसकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई, उस से क्या क्या परिणाम निकलते हैं, इत्यादि। क्या उस विचार के व्यक्तीकरण या प्रतिपादन को आप किसी प्रकार सरल या उत्तम बना सकते हैं? नये विचार पर इस तरह सोच-कर और उसका विश्लेषण करके आप न केवल उसे अच्छी तरह समझ सकेंगे बल्कि अच्छी तरह याद भी कर सकेंगे।

मानसिक सम्बन्धों को उसी क्रम से बनना चाहिए जिसमें उन्हें प्रयोग करना होगा। उदाहरणार्थ, किसी शब्द के हिज्जों में अक्षरों का एक बंधा हुआ क्रम होता है, किसी काव्य के छंद और पद भी एक निश्चित क्रम से एक दूसरे के आगे पीछे आते हैं। हर बात के सीखने में यह नितान्त आवश्यक है कि शुरू ही से अधिक से अधिक शुद्ध सम्बन्ध स्थापित हों और कम से कम गलत सम्बन्ध। यदि किसी शब्द के हिज्जे याद करने हों तो प्रारम्भ ही से उसके हिज्जे ठीक ठीक लिखने का प्रयत्न कीजिए और उसके अक्षरों का अपने मस्तिष्क में कोई गलत सम्बन्ध न बनने दीजिए। यदि आप टाइप करना सीख रहे हैं तो शुरू ही से शुद्ध रीति से, और अक्षरों के सही सिलसिले को ध्यान में रखते हुए, सीखिए। इन सब चीजों को इस प्रकार याद करना चाहिए कि हर अक्षर, पंक्ति या तर्क का अपने पिछले और अगले से संसर्ग स्थापित हो जाय, जिस से बाद में गलत सम्बन्धों को तोड़ने या सीखी हुई चीज़ को भुलाने की आवश्यकता न पड़े। इसमें कोई संदेह नहीं कि बहुत सी मानसिक और शारीरिक अयोग्यता इस कारण होती है कि सीखने के आरम्भ काल में

बहुत से अशुद्ध सम्बन्ध स्थापित कर लिए जाते हैं, जिन्हें बाद में तोड़ना पड़ता है।

जितने अधिक शक्तिमान विचार-सम्बन्ध होंगे उतनी ही सुगमता से पुनरावाहन होगा। अतएव जिन बातों से मानसिक सम्बन्ध सुदृढ़ होंगे उनसे पुनरावाहन में सुविधा होगी। सम्बन्धों को अधिक मज़बूत और गहरा बनाने के तीन मुख्य उपाय हैं— उनका पुनरावलोकन, ज्ञान का वर्गीकरण और शृङ्खलाबद्धीकरण, और ज्ञान की विभिन्न शाखाओं की परस्पर तुलना।

(७) संसर्गों का पुनरावलोकन

स्मृति को परिष्कृत करने का एक महत्वपूर्ण साधन यह है कि मानसिक सम्बन्धों को समय समय पर पुनरावृत्ति की जाय। मानसिक सम्बन्धों को दोहराते रहना और समय समय पर उनका पुनरावलोकन करना स्मरण क्रिया के आवश्यक अंग हैं। यह ध्यान देने योग्य बात है कि सीखी हुई सामग्री, अथवा उसके संस्कारों ही को दोहराना काफी नहीं, बल्कि संस्कारों के पारस्परिक सम्बन्धों का भी पुनरावलोकन करना आवश्यक है। अर्थात् उस विचार क्रिया को दोहराना चाहिए जिसके द्वारा वे सम्बन्ध शुरू में स्थापित हुए थे।

(८) संस्कारों का वर्गीकरण

संस्कारों को जातियों में विभाजित कर लेने से उनके बीच संसर्ग स्थापित करने और उन्हें सुदृढ़ बनाने में सहायता मिलती है। किसी नये पदार्थ या तथ्य को लेकर जितने विचार मिल सकें इकट्ठा कर लेने के पश्चात उन्हें तार्किक श्रेणियों में विभाजित करने का प्रयत्न करना चाहिए। पहले तो विचारों को एक जगह रखिए, फिर उनके गुणों और विशेषताओं को खोज निकालिए, और उनकी समानता और असमानता की तुलना कीजिए। इस,

के बाद रंग रूप, आकार, मात्रा, कार्य और कारण, पूर्ण और अंश के आधार पर उनका व्यूहन कीजिए। इस प्रकार अपने विचारों को समूहों में एकत्र करके कबूतर जैसे दर्बों में रख लीजिए। यदि नई सीखी हुई बातों का वर्गीकरण न किया जाय बल्कि उनको एक ढेर के समान मस्तिष्क में डाल लिया जाय, तो उनका अधिकांश भाग शीघ्र ही विस्मृत हो जायगा क्योंकि उसके मानसिक संसर्ग दुर्बल होंगे। इसका परिमाण यह होगा कि सीखने में कठिनाई होगी और इसके अतिरिक्त नये विचार भी बहुत धीरे धीरे ही मन में प्रकट होंगे। अगर मन अव्यवस्थित हो और उसके भीतर विचार और विश्वास, उमंगें और कामनाएं, तथा चेतना की सभी वस्तुएं तितर बितर पड़ी रहें जिससे आवश्यकता पड़ने पर यह पता न चले कि किस वस्तु को कहाँ ढूँढें, तो उसके ऐसे ही दुष्परिणाम होंगे। व्यूहन से मानसिक जीवन में क्रम का समावेश होता है जिससे हर चीज के लिए दिमाग में एक जगह नियत हो जाती है और हर चीज अपने निर्दिष्ट स्थान पर ही रहती है।

मानसिक संसर्गों को बनाना ही यथेष्ट नहीं। उन्हें लोप हो जाने से रोकने के लिए भी एहतियात करना चाहिए और इसके लिए संसर्गों के पुनरावलोकन के साथ साथ वर्गीकरण भी आवश्यक है। जितना ही गहन विषय हो उतनी ही अधिक आवश्यकता व्यूहन की होती है। मन की सुव्यवस्था और विषयों के उचित शीर्षकों में विभाजन कर देने से बड़ा सहारा मिलता है। किसी ने बहुत सच कहा है कि किसी वर्ग को भली भांति जान लेने से उसके हर व्यक्ति के चरित्र के प्रधान लक्षणों का पता चल जाता है। ऐसा करने से स्मृति का बोझ बहुत कुछ हलका हो जाता है।

(९) ज्ञान की शाखाओं की परस्पर तुलना।

अलग अलग तथ्यों और विचारों को दर्वों में रख देने के बाद ससर्गों की पुष्टि के लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न दर्वों की सामग्री की परस्पर तुलना की जाय और उनके बीच भाँति के विचार-सम्बन्ध स्थापित किए जाय। इसका तात्पर्य है विद्याओं और विषयों के बीच सादृश्य और विरोध की बातों को ढूँढ निकालना, तथा अन्य प्रकार के पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करना। इस प्रकार पिछले ज्ञान के तरीके, सिद्धान्तों और अनुभवों का उपयोग वर्तमान शिक्षा में होता है।

विभिन्न विषयों की तुलना कीजिए तो वे एक दूसरे पर प्रकाश डालकर और भी अधिक आलोकित हो जाते हैं। एक विद्या में लागू होने वाले सिद्धान्त अगर किसी अन्य विषय में लगाए जाय तो वे उस पर बिल्कुल ही नया प्रकाश डालेंगे। जो विषय या विचार देखने में बिल्कुल असम्बद्ध ज्ञान पड़ते हैं, उनमें भी खोजने पर छिपे हुए साम्य मिल सकते हैं। उनको ढूढने से न केवल वर्तमान ज्ञान को सीखने में बल्कि नई बातों के अनुसंधान करने में भी सहायता मिलेगी। सोचने या सीखने की क्रियाओं को अलग अलग खानों में न बन्द कर देना चाहिए, वरन ज्ञान की विभिन्न शाखाओं का परस्पर मिलान और एकीकरण करना चाहिए। जो कुछ सीखा जाय पहले उस का वर्गीकरण करना और फिर वर्गों का एकीकरण-यह याद करने का एक उत्तम उपाय है और इससे कल्पना शक्ति को भी उत्तेजन मिलता है।

(१०) पाठ्य सामग्री विस्तृत होनी चाहिए न कि संक्षिप्त

किसी तर्क या विचार श्रृंखला पर अधिकार पाने के लिए उसको संक्षेप में पढ़ना श्रेयस्कर है अथवा विस्तार के साथ? संक्षेप में पढ़ने के अपने गुण हैं। आरम्भ में विषय के निचोड़ को

पढ़ लेने से उसकी रूपरेखा समझ में आजाती है, जिससे आगे का कार्य सरलतर हो जाता है, मन में उत्तेजना उत्पन्न होती है दिलचस्पी जाग्रत हो जाती है और विषय के प्रधान तत्वों की यथेष्ट जानकारी हो जाती है। इसके अतिरिक्त, यदि थोड़े समय के लिए शीघ्र ही कन्ठाग्र कर लेना है तो संक्षेप में पढ़ना लाभप्रद होगा।

इसके विपरीत, यदि उद्देश्य यह है कि विषय को भली भांति समझ लिया जाय या उसे दीर्घ काल तक याद रखा जांय, तो विस्तृत रूप से पढ़ना ही श्रेयस्कर होगा। जब कोई लेखक संक्षेप में लिखता है तो उसे केवल मुख्य मुख्य सिद्धान्तों और तथ्यों तक ही अपने को सीमित रखना पड़ता है। प्रधान मार्ग छोड़ कर गली कूचों में विचरने का अवसर उसे नहीं मिलता, चाहे वे कितनी ही आकर्षक हों। विषय सामग्री को न्यूनतम शब्दों में संक्षिप्त करने के कारण उसे उन सब सुझावों अलंकारिक उपमाओं, दृष्टान्तों आदि को छोड़ देना पड़ता है जो विषय को स्मृति में जमाने के लिए आवश्यक हैं। किसी पुस्तक के सार में भले ही मुख्य कृति की सब महत्वपूर्ण बातें दी हों, पर उसके पढ़ने से आप के मन पर लेखक के अभिप्राय की वैसी ही टिकाऊ या यथेष्ट छाप कदापि नहं पड़ सकती। इस लिए यदि स्थायी धारणा की इच्छा है तो पाठ्य सामग्री विस्तृत होनी चाहिए न कि संक्षिप्त। यह बात अनुसंधान द्वारा प्रमाणित हो चुकी है।

विस्तृत अध्ययन से सामग्री अधिक काल तक यांद तो रहती ही है, साथ ही उसपर आप को प्रभुत्व भी प्राप्त हो जाता है, जिस से, आवश्यकता पड़ने पर, आप सुगमता से उसका प्रयोग कर सकते हैं। जब कोई गहन वाद विवाद समझना हो या भाषण के लिये सामग्री एकत्रित करनी हो या किसी विषय की मोटी मोटी आवश्यक बातों को याद करना हो, तो विस्तृत अध्ययन करना

चाहिए। इससे आप अधिक मात्रा में नये विचार संचित कर सकेंगे और विषय को भी अच्छी तरह समझ सकेंगे।

(११) स्मृति के कृत्रिम सहायक।

आज कल कितनी ही ऐसी किताबें हैं जिन में स्मृति की उन्नति करने के लिए कृत्रिम उपायों का सुझाव किया गया है। कुछ लेखकों ने नाम, चेहरे, तिथियां आदि स्मरण रखने के लिए अनेक संकेत लिखे हैं। निर्बल स्मृति को पुष्ट करने के उपाय भी लिखे गए हैं। पर यह सब कृत्रिम साधन वैज्ञानिक रीति से किए गए प्रयत्न का स्थान नहीं ले सकते; जैसे कामियागरी रसायन शास्त्र का स्थान नहीं ले सकती। किन्तु कृत्रिम उपायों का भी उपयोग है। इस तरह का एक उत्कृष्ट उदाहरण अंगरेजी का अर्थशून्य शब्द (vilggyor) है, जिसके अक्षर सूर्य प्रकाश के सातों रंगों के नामों की ओर क्रमशः संकेत करते हैं। इन रंगों के नाम अंगरेजी में (violet, Indigo, Blue Green, Yellow, Orange) और (Red) हैं और इन प्रथम अक्षरों को लेकर ही (vibgoyr) शब्द बनाया गया है जिससे सातों रंग क्रमानुसार स्मरण हो आते हैं। इसी प्रकार का एक शब्द है "सितोपलादि"। यह एक विख्यात औषधि का नाम है जो पांच चीजों से बनाई जाती है सितोपल (मिस्री), तुगाक्षीरी (वंशलोचन), पीपल (इ) लायची और दारचीनी।

इन कृत्रिम उपायों के और भी उदाहरण दिये जा सकते हैं। जैसे किसी काव्य में छन्दों की संख्या या किसी आदेश माला में आदेशों की संख्या को याद करने के लिए अंकों का प्रयोग किया जाता है।

स्मृति के कृत्रिम सहायक, यदि बुद्धिमता से काम में लाए जायं तो उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं और इस हद तक उन्हें स्मरण कार्य का एक महत्वपूर्ण अंग समझना चाहिए। एक विद्वान् ने इस

विषय में बड़ी अच्छी सलाह यह दी है कि आत्म-परीक्षण द्वारा कमजोर स्थानों का पता लगा लेना चाहिए और उन कमजोर जगहों को मज़बूत करने के लिए ही समझ बूझ कर बनाए हुए सकेतों और दूसरे कृत्रिम साधनों का सहारा लेना चाहिए।

२. पुनरावाहन

स्मृति का तीसरा अंग पुनरावाहन है। जिस वस्तु की छाप मन पर डाली गई थी और जिसे स्मृति ने सुरक्षित रखा है उसे अवसर पर पुनः स्मरण कर लेना ही पुनरावाहन है। अभी तक मनोवैज्ञानिकों को यह ठीक ठीक पता नहीं चला है कि पुनरावाहन के समय मस्तिष्क में वास्तव में क्या होता है। पर हम यह जानते हैं कि पुनरावाहन के समय हमारे मन की दशा एक विचित्र प्रकार की होती है जो कि अंकन के समय से बिल्कुल विभिन्न होती है। अंकन के समय मन को बाहरी छाप पर केन्द्रित किया जाता है और बाहर से संस्कारों को भीतर ले जाया जाता है। पर पुनरा-वाहन के समय मन के भीतर संचित प्रतिमाओं में खोज की जाती है, और साथ ही साथ कुछ बाहरी क्रियाएं भी होती रहती हैं जैसे बोलना या लिखना। स्मृति का अन्तिम लक्ष्य ही यह है कि आवश्यकता पड़ने पर वांछित तथ्य या विचार चेतना में फिर से बुलाया जा सके। ऊपर लिखी सारी साधना इसी उद्देश्य से की जाती है। क्या कोई ऐसी भी युक्तियां हैं जिनसे पुनरावाहन के काम में मदद मिले?

पुनरावाहन को सुगम बनाने के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं।

(अ) समय समय पर पुनरावाहन का अभ्यास करते रहिए। क्यों कि पुनरावाहन एक विचित्र प्रकार की मानसिक अवस्था है, इस लिए हमें पुनरावाहन का अभ्यास करके उसके लिए तैयारी

करनी चाहिए। यह हम पहले ही बता चुके हैं कि पुनरावाहन के प्रयोगों से कमजोर जगहों का पता चल जाता है जिससे उन्हें दृढ करने के लिए हम विशेष प्रयत्न कर सकें। ऐसे प्रयोगों का एक दूसरा लाभ यह होता है कि हम स्मृति को काम करने के लिए वाध्य करते हैं। इस लिए पुनरावाहन का अभ्यास करना ही पुनरावाहन सीखने का सब से अच्छा तरीका है। स्मृति को सहायता देने में पुनरावाहन का बड़ा महत्व है और एक मनोवैज्ञानिक ने तो यहा तक कहा है कि स्मरण क्रिया में आधे से अधिक समय पुनरावाहन का अभ्यास करने में लगाना चाहिए।

स्मृति का शिक्षित करने के लिए उसे दैनिक जीवन में यथा सम्भव हर अवसर पर प्रयोग करने की आदत डालिए और ऐसे साधनों का आसरा न लीजिए जो स्मृति को आलसी बनाते। अगर कोई किताब पढ रहे हैं तो जिस स्थान पर पढना छोड़ा था उसे बिना निशान लगाए या पन्ना मोड़े ही याद रखने की कोशिश कीजिए। छोटी छोटी बातों में अपनी स्मृति की परीक्षा करते रहिए, जैसे नामों, चेहरों, अपने दैनिक कार्य क्रम या बीते हुए दिन की मन से महत्व पूर्ण अथवा रोचक घटनाओं को याद रखना। पर इस का यह अर्थ नहीं है कि स्मृति पर व्यर्थ का बोझा लाद दिया जाय।

(आ) अपनी स्मृति पर विश्वास कीजिए।

स्मृति मनमाने ढग से काम नहीं करती बल्कि नियमों के अनुसार। उसके काम करने के लिए कुछ शर्तों का पूरा होना लाजिमी है और जब उनको पूरा कर दिया तब शेष काम और फलों को प्रकृति के नियमों पर छोड देना चाहिए और अपनी स्मृति पर भरोसा करना चाहिए। मानसिक शक्तियों से पूरा लाभ आप तभी उठा सकेंगे जब आप उन पर विश्वास रखेंगे। चिन्ता

या डर पुनरावाहन के लिए घातक है। यह दोनों मन को साधारण कार्यवाही में गड़बड़ डाल देते हैं, निचारों के प्रवाह को रोक देते हैं, और उन संसर्गों को दबा देते हैं जो पुनरावाहन में आप की सहायता करते हैं। भय का कुप्रभाव विशेषकर उन लोगों में देखा जाता है जिन्हें दर्शकों के सामने व्याख्यान देना होता है या नाटक खेलना होता है। कितने ही वक्ता अपने वक्तृत्व की सुन्दर रूप रेखा और मजेदार चुटकुले मुखाग्र करके आते हैं, पर श्रोतागण को देखकर भयके कारण, यह सब के सब एक दम काफूर हो जाते हैं और वक्ता को अपने व्याख्यान का उत्तम भाग बोले ही बिना, मंच से वापिस चला जाना पड़ता है।

कुछ लोग अक्सर यह कहा करते हैं कि "मैं अवश्य ही इसे भूल जाऊंगा" मेरा मस्तिष्क चलनी के समान है", "मैं अपनी स्मृति पर विश्वास नहीं कर सकता" इत्यादि। ऐसी बातें कहकर और ऐसे विचार मन में बारम्बार लाकर ये लोग अपनी स्मृति को बड़ी हानि पहुँचाते हैं, क्योंकि जितना अविश्वास हम अपनी स्मृति पर करते हैं उतनी ही दुर्बल वह होता जाती है।

कभी कभी ऐसा होता है कि जिस चीज को हम अपने स्मृति कोष में सुरक्षित रखा हुआ समझते हैं, वह मौके पर याद नहीं आती—जुबान पर रक्खी सी लगती है पर निकलती नहीं। ऐसी दशा में जल्दबाजी करना या मस्तिष्क पर अत्यधिक जोर डालना ठीक नहीं, बल्कि दो एक मिनट प्रतीक्षा करनी चाहिए जिससे वह चीज स्वयं ही याद आजाय।

(इ) आत्म-सूचना।

चिन्ता और भय पर विजय पाने के लिए, घबराहट को दूर करने के लिये, और आत्म-विश्वास के जागरण और विकास के लिये आत्म-सूचना से बढ़कर दूसरा उपाय नहीं। इसका विस्तार पूर्वक विवेचन एक पिछले अध्याय में किया जा चुका है।

३. याद करने में मितव्ययी होना चाहिए।

दुनिया के हर काम में न्यूनतम श्रम का सिद्धान्त लागू होता है। इसी तरह याद करने के काम में भी मितव्ययता का सदा ध्यान रखना चाहिए। इससे केवल प्रयास की ही बचत नहीं होती. वरन जो बातें वास्तव में स्मरणीय हैं उन्हें ज्यादा अच्छी तरह याद भी रखा जा सकेगा। स्मृति की सहायता के लिए कोष इत्यादिक पुस्तकें हैं और साधारण बातें नोट बुकों में दर्ज की जा सकती हैं, जिससे भूल जाने पर भी उनका पुनरावाहन किया जा सकता है। पहले यह निर्णय कर लेना चाहिए कि कौन सी चीजें याद करने योग्य हैं और कौन सी नहीं। जो वास्तव में याद करने योग्य हों उन्हीं को याद करने का प्रयास करना चाहिए। इस सलाह को कि स्मृति को उपयोग करने में मितव्ययी होना चाहिए, शुद्ध और स्पष्ट कर देना अच्छा होगा।

थोड़ा सा विचार करने से यह प्रत्यक्ष हो जायगा कि किसी वस्तु को स्मरण करने के तीन उद्देश्य हो सकते हैं-उसका पुनरावाहन करना, उसको पहचानना या उसको फिर से सीखना। सीखने का ढंग और किस दर्जे तक आप सामग्री को याद करेंगे यह दोनों बातें इस पर निर्भर करती हैं कि आप किस उद्देश्य से सीख रहे हैं। और यदि आप अपने वास्तविक उद्देश्य को न जानकर किसी दूसरे ही उद्देश्य से सीखते हैं, तो इसमें या तो प्रयास व्यर्थ जायगा या अपर्याप्त होगा।

४. पुनरावाहन के लिए सीखना

कितनी ही चीजें हैं जिन्हें आप इस आशय से याद करना चाहते हैं कि बाद में उन्हें या उनके सारांश को जबानी बिना किसी सहायता के सुना सकें, जैसे कोई पद्य, व्याख्यान, या किसी नाटक में आपका पार्ट। यहां आपका ध्येय पुनरावाहन होता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि पुनरावाहन के लिए याद करने में ही सबसे अधिक परिश्रम करना पड़ता है। अगर आपके सामने एक समूह में २० आदमी हों तो सम्भव है उन्हें देखकर आप पहचान सकें और उनमें से हर एक का नाम बता सकें। पर यदि आप से उन सब के नाम, बिना उन्हें देखे हुए बताने को कहा जाय, तो यह बिल्कुल दूसरी प्रकार का और कहीं कठिन काम होगा।

यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि पुनरावाहन के लिए याद करना बड़ा कठिन होता है। इसलिए जब तक आप को नितान्त आवश्यक न हो, अपनी स्मृति पर इस प्रकार का भार न डालिए।

५. पहचानने के लिए सीखना

बहुत सी चीजें ऐसी हैं जिन्हें पुनरावाहन के लिए नहीं बल्कि पहचानने के लिए सीखा जाता है। उदाहरणार्थ, लोगों के नाम या उनकी शक्लें याद करने में उद्देश्य इतना ही होता है कि किसी व्यक्ति को देखकर उसका नाम स्मरण हो आये या उसका नाम देख या सुन कर उसकी सूरत याद आजाय। इसी प्रकार यदि आपको मोटर से कोई लम्बी यात्रा करनी है और यात्रा के नक्शे का आप अध्ययन कर रहे हैं तो यह कोशिश न कीजिए कि मार्ग की हर वस्तु को इस प्रकार याद करलें कि उसका क्रमानुसार पुनरावाहन कर सकें। न इसकी आवश्यकता है और न यह लाभदायक ही होगा। आप को तो इतना ही याद करना चाहिए कि कहां कहां पर मुड़ना या रुकना होगा, और उन स्थानों पर जब पहुँचें तो उन्हें किन चिन्हों से पहचानें।

जिस वस्तु की केवल पहचानने के लिए आवश्यकता है उसे पुनरावाहन के लिए याद करना समय और प्रयास का अपव्यय

है। पुनरावाहन के लिए सीखना केवल कठिन ही नहीं होता, वरन यह पहचानने के लिए सदैव उपयोगी भी नहीं होता। हर महीने में दिनों की संख्या बताने वाला अंगरेजी में एक प्रसिद्ध छन्द है जो कितने ही लोगों के लिए बड़ा उपयोगी है, पर यदि उन्होंने उसे पहचानने के बजाय पुनरावाहन के लिये याद किया है तो अक्तूबर शब्द उन्हें तुरन्त ही ३१ दिन का स्मरण न करा सकेगा बल्कि सारे छन्द को दोहराना पड़ेगा और उसके अन्तिम पद पर पहुँचने पर ही यह पता चलेगा कि अक्तूबर मास में ३१ दिन होते हैं। इसी प्रकार अगर किसी बालक से पूछा जाय कि पाँच सते कितना होता है तो कदाचित उसे ५ का पूरा पहाड़ा शुरू से पढ़ना पड़ेगा और पांच सते पर पहुँचने ही पर उसे ३५ याद आयगा।

ऊपर दिये हुए सामान्य नियमों के अतिरिक्त नीचे लिखे हुए विशेष संकेतों से पहचानने के लिए सीखने में सहायता मिल सकती है।

(क) जब ऐसी सामग्री से काम पड़े जो सब की सब नई है तो पहचानने की क्रिया को सदा उसी दिशा में सीखना चाहिए जिसमें आप उसे अग्रसर होना चाहते हैं। इलाहाबाद से लखनऊ जाने में जिन चिन्हों की जानकारी उपयोगी होगी उनसे उलटी दिशा की यात्रा में काम न चलेगा। किसी मनुष्य का नाम सुनकर आप को उसकी सूरत याद आ सकती है पर यह जरूरी नहीं कि उसकी सूरत देखकर उसका नाम आप को स्मरण हो आये। इसका कारण वह क्रम या दिशा है जिसमें आपने इन वस्तुओं को याद किया है। अगर च और छ दो मिली हुई वस्तुएं हैं तो आपकी यह इच्छा हो सकती है कि च को देखकर आपको छ की याद आजाय। अगर ऐसा है तो इस सामग्री को इसी ढंग से याद कीजिये कि च को देखने से आप को छ का स्मरण हो आये।

(ख) यदि ऐसी सामग्री याद करनी है जिसका कुछ अंश परिचित और कुछ अपरिचित है, तो अपरिचित से शुरु कर के परिचित की ओर चलना चाहिए जिससे अपरिचित को देखकर परिचित की याद आजाय। उदाहरणार्थ, किसी विदेशी भाषा के शब्दों को सीखने में पहले मातृ भाषा के शब्द को देखकर और तब विदेशी भाषा का उसका पर्याय देखने की अपेक्षा यह श्रेयस्कर है कि पहले विदेशी भाषा का शब्द देखा जाय और उसके बाद में अपनी भाषा का तुल्यार्थक शब्द। यदि किसी ऐतिहासिक घटना के विषय में आप को कुछ जानकारी है और उसकी तिथि को याद करना चाहते हैं तो तिथि से आरम्भ कीजिए और उस से घटना को जोड़ दीजिए।

(ग) यह जानने के लिए याद करने में स्मृति के अन्य नियम तो लागू होते ही हैं पर संकेत और इशारे बनाने का विशेष अवसर रहता है। नोटों से भाषण देते समय प्रत्येक नोट को देखकर आप को यह स्मरण हो आता है कि आगे क्या कहना है। इसी प्रकार आप अपनी (Engagement Book) में जो बातें संक्षेप में लिख लेते हैं वह आपकी मुलाकातों और दूसरे कार्य-क्रम की याद दिलाती हैं। ऐसे संकेतों और चिन्हों का बनाना एक कला है। वह न तो बहुत लम्बे और न बहुत छोटे होने चाहिए।

(६) फिर से सीखने के लिए याद करना

कुछ चीजों को याद करने में यह उद्देश्य नहीं रहता कि उन्हें या उनके सारांश को कण्ठाग्र कर लिया जाय, बल्कि केवल इतना याद करना ही अभीष्ट रहता है कि उन्हें पहले कभी पढ़ा था और कहाँ पढ़ा था, ताकि अगर बाद में जरूरत हो तो उन्हें फिर से सीखा जा सके या पुस्तक में ढूंढा जा सके। इस प्रकार की मानसिक दक्षता पर प्रायः बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है।

हमारे अनुभव का बहुत थोड़ा सा भाग ऐसा होगा है जिसका हम कभी भी साफ़ साफ़ पुनरावाहन कर सकें। हमारे अनुभव के अधिकांश भाग की स्मृति तो धुंधली और अनिश्चित ही रहती है। पर ऐसे अनुभव या ज्ञान को भी, जिसका हम ठीक ठीक पुनरुद्भावन न कर सकें व्यर्थ न समझना चाहिए, क्योंकि उस सभी से हमारी आदतों, हमारे चरित्र, और हमारे मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

अगर अपने पुराने अनुभव और पूर्व संचित ज्ञान को पूरी तरह से याद रक्खा जा सके तो निस्सन्देह ही वह बड़ा उपयोगी हो पर अधिकांश लोगों के लिए तो उनकी शिक्षा का मुख्य फल इतना ही होता है कि उन्हें अस्पष्ट ढंग से यह याद रहे कि अमुक विषय को पहले कभी पढ़ा था और उसकी अमुक बात कहाँ पर मिल सकती है। इस प्रकार की धुंधली स्मृति साधारण शिक्षा ही में नहीं बल्कि उस विशेष शिक्षा में भी उपयोगी होती है जो विद्यार्थी को विशेष पेशों के लिए तैयार करती है। एक कुशल वकील या डाक्टर भी हर मामले में अपनी राय तुरन्त ही नहीं दे सकता। दूसरे वकीलों या डाक्टरों पर उसकी श्रेष्ठता इस कारण नहीं होती कि उसे हर प्रश्न का उत्तर, या हर समस्या का समाधान, ज़बानी याद है जो तुरन्त ही काम में लाया जा सकता है, वरन इस बात से कि उसमें यह योग्यता है कि वह थोड़ी सी देर में उस सामग्री को निकाल सकता है जिसकी आवश्यकता उसे मामले में अपना निर्णय देने में है, जब कि दूसरे डाक्टर या वकील उस सामग्री से अपरिचित हैं और उन्हें यह पता ही नहीं कि वह किस किताब या पत्रिका से मिल सकती है।

हो सकता है कि एक किताब को पढ़ते समय उसके कुछ हिस्से आप को दिलचस्प लगें पर आप उन्हें इतना महत्वपूर्ण न समझें

कि उन्हें याद कर लिया जाय या स्मरण—पुस्तक (Common Place Book) में ही लिख लिया जाय। पर सम्भव है कि वर्षों बाद आप को उस सामग्री की आवश्कता पड़े और आप उसे पुनः प्राप्त करना चाहें। इसका उपाय यह है कि विषय सामग्री की धुंधली स्मृति के साथ उसके मिलने की जगह की स्पष्ट और निश्चित स्मृति जोड़ दी जाय।

जब आप कोई किताब पढ़ें तो उसके और उसके लेखक के नाम को सावधानी से देखिए। पुस्तक की भूमिका और नाम पत्र से लेखक के सम्बन्ध में जो कुछ मालूम हो सके उसे भी ध्यानपूर्वक पढ़िए। जब किसी किताब में कोई चित्ताकर्षक वस्तु मिले तो केवल उसी को नहीं बल्कि लेखक और पुस्तक के नाम को भी याद रखने की कोशिश कीजिए। विषय सामग्री स्वयं भूल जाने पर भी उसके मिलने का पता तो याद रहेगा ही और उसके द्वारा वह सामग्री आवश्यकता पड़ने पर फिर संकलन की जा सकेगी। यह युक्ति मानसिक दक्षता के लिए अत्यन्त गुणकारी है पर इसका प्रयोग बहुत कम किया जाता है। ऐसी जानकारी जिसके मिलने का पता मालूम है ऐसी जानकारी की अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी है जिसका पता नहीं मालूम।

७. अच्छी स्मृति के लक्षण

(क) अच्छी स्मृति अपनी सामग्री को विवेक पूर्वक छांट लेती है। पुराने सभी अनुभवों को धारण करने वाली स्मृति का उत्कृष्ट होना आवश्यक नहीं। हमारे अनेकों अनुभव ऐसे होते हैं जिनके पुनरावाहन की ज़रूरत भविष्य में नहीं पड़ती। किसी समय उनकी उपादेयता रही होगी, पर बाद में वह बिलकुल बेकार हो गये। काम निकल जाने के बाद उनको भूल जाना ही अच्छा है। यदि वह चेतना तल पर आते रहें तो कूड़े कचड़े के समान होंगे।

फिर हमारे अनुभवों का बड़ा भाग होता है हमारी क्षुद्र ईर्ष्याएँ, दुःख, कष्ट, भूलें, खेद और पश्चाताप। इन्हें तो जितनी जल्दी हो सके भूल जाना चाहिए। जब तक वह याद रहते हैं दुःख और शोक के बीज बोया करते हैं, हमारी शक्ति को क्षीण करते हैं, और हमारे सुख का अपहरण करते रहते हैं। आप को बहुधा ऐसे व्यक्ति मिले होंगे जो कोई बात कहने लगते हैं तो आदि से अन्त तक सभी आवश्यक और अनावश्यक बातें ब्यौरेवार सुनाकर दिमाग चाट जाते हैं। उनकी स्मृति गेहूँ से भूसे को अलग नहीं कर सकती और सारा बोझ ढोकर वह सुनने वालों के कानों पर पटक देते हैं।

डाक्टर कारपेंटर ने पार्लिमेंट के एक सदस्य की बहुत सुन्दर उदाहरण लिखी है, जिन्हें एक बार पढ़ लेने से लम्बे-लम्बे कानून और पार्लियामेन्ट के ऐक्ट याद हो जाते थे। इस अद्भुत योग्यता के लिए जब उनकी प्रशंसा की गयी तो उन्होंने कहा कि वह शक्ति उनके लिए वरदान न होकर एक अभिशाप हो गयी थी क्योंकि उन्हें, जब अपने पढ़े हुए किसी कागज में से किसी बात का पुनरुद्भावन करना होता था तो उन्हें शुरू से लेकर मनोवांछित स्थान तक सारी पठित सामग्री को दोहराना पड़ता था। कोई स्मृति श्रेष्ठ नहीं हो सकती यदि वह मतलब की बात को छांट कर याद न सके।

(ख) अच्छी स्मृति के लिए काफी सोच विचार करना चाहिए। जैसा कि पहले बता चुके हैं स्मरण काल का रहस्य सोचना ही है और तोते की तरह दोहरा देने वाली स्मृति को अच्छा नहीं कहा जा सकता।

(ग) स्मृति को विशेषोन्मुख होना चाहिए। स्मृति अच्छी उसी को है जो उससे अच्छी सेवा ले सके। गणित के अध्यापक के लिए गणित के सूत्र महत्त्वपूर्ण हैं, व्यापारी के लिए अपने ग्राहकों

के नाम और चेहरे। एक वकील के लिए अपने मुकद्दमे का व्योरा याद रखना इतिहास की प्रसिद्ध तिथियाँ याद रखने की अपेक्षा कहीं अधिक आवश्यक है। आपकी स्मृति शुद्ध ही नहीं होनी चाहिए वरन् उसे ठीक प्रकार की सामग्री धारण करनी चाहिए। जो कुछ भी आपका कारोबार हो उसके सम्बन्ध की बातें याद रखने की क्षमता आपमें होनी चाहिए।

(घ) याद करने की गति और यथार्थता। यह विचार भ्रम मूलक है कि जो कुछ जल्दी से याद हो जाता है वह जल्दी भूल भी जाता है और जो देर में याद होता है वह दीर्घ काल तक याद रहता है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है मस्तिष्क के साम्राज्य में गति और यथार्थता में परस्पर कोई विरोध नहीं। प्रायः यह देखा जाता है कि जिसे देर में याद होता है वह शीघ्र ही भूल जाता है और भूलें भी ज्यादा करता है। स्मरण कार्य में फुर्ती और शुद्धता साथ साथ चलती हैं और मन्द गति मानसिक लद्धडपने की निशानी है।

८. नियमों का प्रयोग करने की आदत चाहिए

स्मृति सम्बन्धी सिद्धान्तों का जानना ही पर्याप्त नहीं। उनका प्रयोग करना सीखिए। निरीक्षण अध्ययन और विचार करने की अपनी आदतों में उनका समावेश कीजिए। स्मरण कार्य में सुविधा तभी प्राप्त हो सकती है जब अच्छे नियमों और उपायों का व्यवहार करना आपके स्वभाव का रूप धारण करले। स्मृति की दक्षता के लिए अभ्यास नितान्त आवश्यक है, कोई उपयोगी और प्रिय विषय चुन लीजिए और ऊपर बताए हुए नियमों के अनुसार उसका गहन अध्ययन कीजिए। आपका जितना समय और प्रयास उस में व्यय होगा वह व्यर्थ नहीं जायगा। उस से आपकी स्मृति का विकास और मानसिक दक्षता का उत्कर्ष होगा।

ग्यारहवाँ अध्याय
सोचने की कला
१ सोचने का महत्व

मनुष्य के मन का क्रियाएँ मुख्यत विचार के रूप मे प्रकट होती हैं। अधिकाश समय हम कुछ न कुछ सोचते ही रहते हैं। और सच पूछिए तो सोचना ही बौद्धिक जीवन का सार है। मनुष्य मन की पशु-मन पर श्रेष्ठता का प्रधान कारण यही है कि केवल मनुष्य ही के पास विचारने की शक्ति है, स्पष्टता शीघ्रता और प्रबलता से विचार करने की योग्यता मानसिक प्रवीणता का एक महत्त्वपूर्ण अग है अधिकाशत अच्छे विचारक ही जाति के कुशल व्यक्ति होते हैं। विचार द्वारा व्यक्ति न केवल अपने को अपनी परिस्थितियों के अनुकूल बना लेता है, वरन अपने वातावरण को भी, उसमे बडे बड परिवर्तन कर के अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप बना लेता है। महापुरुष तो अपने मौलिक विचारों द्वारा अपनी परिस्थितियों में सुधार ही नहीं कर लेते, बल्कि ससार मे क्रान्ति पैदा कर देते हैं, पशु ऐसा करने मे असमर्थ हैं। सभ्यता, सस्कृति और शिक्षा का आधार विचार ही है। मानव जाति को जगली अवस्था से आज के उच्चपद तक पहुँचाने का श्रेय बहुत कुछ विचार ही को है। भली प्रकार सोचना ही उन महा प्रबल शक्तियों में से है जो व्यक्तियों को जीवन मे सफलता तथा श्रेष्ठता प्राप्त करने मे सहायक होता हैं।

मन शरीर का राजा है और विचार द्वारा मनुष्य के शरीर और चरित्र दोनो ही पर विलक्षण प्रभाव डाला जा सकता है।

सोचना शिक्षा और मानसिक विकास का आधार है, सीखने के प्रयत्न तभी फलीभूत होते हैं जब वे विचार द्वारा प्रदीप्त और निर्दिष्ट किये जाते हैं।

विद्वान ने विचारों की उपमा फूलों से दी है, विचारों को संग्रह करना मानो फूल जमा करना है, उन विचारों पर सोचना मानों फूलों को गूँधकर माला बनाना है, विचारने के पर्यायवाची शब्दों में शायद ही कोई इतना उपयुक्त हो जितना कि गूँधना। गूधने का अर्थ यह होता है कि अवलोकन, अध्ययन, वार्तालाप अनुभव तथा पर्यटन द्वारा मिली हुई उत्कृष्ट सामग्री से मनुष्य अपनी इच्छानुसार नई और सुन्दर वस्तुएं तैयार करे। हमारे पास फूल तो बहुत है, हमें हार और गजरों की आवश्यकता है। हमारे पास पुस्तकालय, पुस्तकें तथा समाचारपत्र आदि कम नहीं हैं, परन्तु हमें तो सोचनेवालों की आवश्यकता है।

मानसिक कार्यक्षमता की परिभाषा, थोड़े से शब्दों में यह है कि तथ्यों का जमा करना और उनके सम्बन्ध में सोचना, संसार में जितनी भी उपयोगी चीजें हैं, सभी तथ्यों को इकट्ठा कर के और उन पर विचार कर के पैदा की गयी हैं।

सोचना ही मन के यंत्रालय में माल को तैयार करना है। तथ्य मन के कारखाने के लिए कच्चा माल है और वहाँ पर जो नया सामान बनता है वह विचार, विधियां, और वस्तुएं है। मनुष्य की सभ्यता में जितनी उन्नति हुई वह सब पहले किसी मनुष्य के मन में विचार के रूप में प्रकट हुई थी।

हर एक जाति, व्यवसाय और छोटी सी दुकान तक की उन्नति अधिकांशतः विचारों पर ही निर्भर करती है। हमारी शिक्षा को चाहिए कि विचारक उत्पन्न करे, हर प्रगतिशील व्यक्ति का कर्तव्य है कि दिन में थोड़ा-सा समय सोचने-विचारने के लिए निकाल रखें।

एडिसन ने अपनी प्रयोगशाला की दीवार पर यह संकेत लटका रखा था. . . . . . बड़े आश्चर्य की बात है कि सोचने से बचने के लिए मनुष्य किन-किन युक्तियों का सहारा लेता है।

किसी विद्वान ने क्या खूब लिखा है कि हममें से थोड़े से लोग विचार करते हैं, बहुतों का केवल विचार रहता है कि वे विचार करते हैं, और अधिकांश मनुष्य तो विचार करने का कभी विचार तक नहीं करते।

२. सोचना एक कला है

सोचना एक कला है, न कि विज्ञान ऐसे नियमों या उपायों का अभी तक पता नहीं चला है जिनके द्वारा नये विचार मनरूपी कार्यालय की आवश्यकतानुसार पैदा किये जा सकें। प्रभावशाली सोचना तर्कशास्त्र पर ही निर्भर नहीं करता। तर्कशास्त्र से इतनी सहायता अवश्य मिल सकती है कि वह विचारने के निष्कर्षों की जांच करे और हमारे तर्क को त्रुटियों और अशुद्धियों से बचावे, पर महत्व की बात तो है विचारों का उत्पन्न करना और तर्क शास्त्र विचारों की सृष्टि करने में उसी तरह असमर्थ है जैसे व्याकरण काव्य की रचना करने में। विचार या तो अनुभव या आन्तरिक ज्ञान या बोध (Intuition) से पैदा होते हैं और यह दोनों ही तर्क शास्त्र के परे की वस्तुएं हैं। वास्तव में मनोविज्ञान भी ऐसे गुर नहीं बता सकता जिनके द्वारा मनुष्य जब चाहे और जैसे चाहे विचार कर सके। हाँ, मनोविज्ञान कुछ ऐसी युक्तियों का अवश्य सुझाव कर सकता है जो सोचने की कला में सहायक हों।

३. विचार विभाग

जो विचार सामान्यतः अनुभव में आते हैं उनके पाँच विभाग किये जा सकते हैं :—

एक. अकस्मातो या निकम्मे विचार जो हमारे मन में उठते

लगते हैं यदि हम अपने विचारों को बिना किसी उद्देश्य या नियंत्रण के इधर उधर भटकने दें। न केवल बेकारी के वक्त वरन् गम्भीर काम के समय भी मन भटककर ऐसे विचारों में व्यस्त हो जाता है। ऐसे विचारों को हम अललटप्पू विचार कहेंगे।

दूसरा, असमालोचनात्मक विश्वास के रूप में सोचना। इस प्रकार के सोचने में हम दूसरों के विचारों को उधार लेकर अपना मान लेते हैं। इस क्रिया में तर्क के बजाय विश्वास या अंधश्रद्धा ही का हाथ रहता है, अगर हम जाँच करें तो यह जानकर आश्चर्यचकित हो जाँयगे कि धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक मामलों के सम्बन्ध में हमारे जो विचार हैं उनका कितना बड़ा भाग केवल विश्वास ही पर आधारित है।

तीसरा, ग्रहणात्मक सोचना जिसका उद्देश्य रहता है दूसरों के विचारों को ग्रहण करना या पचाना या किसी विद्या या हुनर को सीखना। यदि ग्रहणात्मक सोचने द्वारा अध्ययन को सहारा न दिया जाय तो केवल पढ़ने या बार-बार के पढ़ने से ही विद्या पर अधिकार नहीं प्राप्त हो सकता।

चौथा, निर्णयात्मक सोचना या तर्क वितर्क करना। इस प्रकार के सोचने द्वारा मनुष्य अपने दैनिक जीवन की समस्याओं को देख लेता है और उनका समाधान ढूंढ निकालता है। इसका अर्थ होता है किसी प्रश्न के पक्ष और विपक्ष की बातों और बारीकियों पर विधिपूर्वक मनन और चिंतन करना, जब तक कि उसका हल न मिल जाय।

पाँचवा, रचनात्मक या उत्पादक सोचना। यह सब से ऊँची कोटि का सोचना है। इसका उद्देश्य प्रकृति के रहस्यों का अनुसंधान, या नये यंत्रों या पदार्थों का निर्माण अथवा कला या कल्पना की मौलिक कृतियों की रचना करना होता है।

४. निरर्थक या अललटप्पू विचार

जब हम अपने मन को बेलगाम छोड़ देते हैं, जब हम अपने विचारों को निरुद्देश्य जिधर चाहे उधर भटकने देते हैं, जब हम उन्हें नियंत्रित करने का कोई प्रयास नहीं करते, तो हमारे मन में भांति-भांति के, निरर्थक, अललटप्पू विचार आपसे आप उठने लगते हैं, जागृत अवस्था में यदि हम अपने मन को थोड़ी देर के लिए किसी निश्चित काम पर न लगायें या किसी विशेष बात के सम्बन्ध में विचार न करें तो इसी प्रकार के विचार उत्पन्न होने लगते हैं, क्योंकि ऐसी दशा में विचारधारा न्यूनतम प्रतिरोध का मार्ग ग्रहण कर लेती है और किसी उचंग, तात्कालिक रुचि, क्षणिक आवेग या हमारे वातावरण की सूचना का अनुसरण कर के इधर-उधर विचरने लगती है, स्वप्न की अवस्था में जो विचार मन में उठते हैं वह भी इसी श्रेणी के होते हैं, पर यह न समझना चाहिए कि ऐसे व्यर्थ के विचार केवल बेकारी या निद्रा की ही अवस्था में उत्पन्न होते हैं, क्योंकि वे उस समय भी चेतना-क्षेत्र में घुसकर मन में व्यर्थ की विचारधारा प्रवाहित कर देते हैं, जब कि हम गम्भीर विचारों में मग्न रहते हैं, या कम से कम रहना चाहते हैं, निम्नश्रेणी के और अशिक्षित मनवाले, अर्थात मानसिक बालक, इस प्रकार के अनुपजाऊ स्तर के ऊपर कदाचित् ही उठ पाते हैं, पर हममें से जो बहुत श्रेष्ठ हैं, उन्हें भी यह जानकर आश्चर्य होगा....यदि कोई आदमी उन के मन के भीतर उठने वाले विचारों का हिसाब रक्खे, कि हमारे जीवन का कितना बड़ा भाग निकम्मे विचारों में व्यर्थ जाता है, एकाग्रता का कमी या मानसिक विक्षेप, एक बहुत ही व्यापक रोग है, और कितने लोग १६ वर्ष की आयु पर ही अपना मानसिक जीवन व्यतीत कर देते हैं।

५. असमालोचनात्मक विश्वास

बहुधा जब हम किसी विषय या वस्तु पर अपने विचारों को प्रकट करते हैं तो वह विचार हमारे स्वयं के सोचे हुए नहीं होते, बल्कि दूसरों से, बिना सोचे-समझे लिए हुए होते हैं। लार्ड कर्जन ने एक बार कहा था कि हम अपने विचार एक आने में मोल ले लेते हैं, क्योंकि उस समय सभी बड़े-बड़े समाचार पत्र एक आने में बिकते थे और उन्हीं की सम्मतियों से प्रभावित होकर जन-साधारण अपना मत स्थिर करते थे। आज भी इस कथन में बहुत कुछ सत्य है, धर्म, समाज, राजनीति, अर्थशास्त्र आदि विषयों पर जो हमारे मत होते हैं वे अधिकांशतः हमारे माता-पिता, मित्रों तथा समाज से उधार लिए हुए, असमालोचनात्मक विश्वास ही होते हैं। जो लोग अपने को बुद्धिवादी कहते हैं और समझते हैं कि उनकी सब सम्मतियाँ उन के स्वतंत्र विचार का ही फल है, उन्होंने भी जानकर या अनजान में दूसरों के अनेकों मत बिना समालोचन या सन्देह के ग्रहण किए होते हैं। कारण स्पष्ट ही है... असमालोचनात्मक विश्वास हमें तैयार कपड़ों की भाँति बने बनाए विचार दे देता है और हमें स्वयं मानसिक परिश्रम करने से बचाता है।

६. विचारने के साधारण सहायक

शेष तीनों प्रकार के विचारने में सहायता देने के लिए कुछ विशेष सुझाव हैं पर उनका अलग-अलग उल्लेख करने से पहले यह अच्छा होगा कि हम कुछ ऐसे संकेतों को दे दें जो सभी प्रकार के निर्दिष्ट या उद्देश्यपूर्ण विचार में सहायक होंगे।

क. अपने मन को ज्ञान और अनुभव से सम्पन्न कीजिए

शून्य में से कोई वस्तु पैदा नहीं हो सकती। अतः प्रश्न उठता है कि विचार कहां से आते हैं? वे तथ्यों से और तथ्यों के

साथ हमारे संसर्गों से उत्पन्न होते हैं। यही वह कच्चा माल है जिससे हमारे मन का कारखाना अपना माल तैयार करता है, यही जो जानकारी आपको है और जो ज्ञान तथा अनुभव आपने पहले से जमा कर रखा है, यही आप के सोचने की सामग्री है और उसी से आप नये विचारों का निर्माण करते हैं, पूर्वसंचित तथ्यों और विचारों के समान मन को दूसरी कोई भी चीज सोचने के लिए प्रेरित नहीं करती, जब कोई विचारक अपने सोचने की गाड़ी को विचारों के अभाव के कारण रुकना-सा देखता है तो वह फिर अपने तथ्यों की ओर मुड़ता है, उनका पुनरावलोकन करता है, मन के भीतर उन्हें फिर उलटना-पलटता है, और ऐसा करने में आशा यही होती है कि मनोवांछित विचार शीघ्र ही उस के मस्तिष्क में चमक उठेगा।

सोचने में दक्षता प्राप्त करने के लिए मन को यथासाध्य परिपूर्णता तथा विभिन्नता से सुसज्जित कीजिए, जिस क्षेत्र में विचार करना है उसका ब्योरेवार विशेष ज्ञान प्राप्त कीजिए; विषय-ज्ञान का पंडित होना, सोचने में सुगमता और चतुरता तथा मौलिकता प्राप्त करने की जरूरी शर्त है, पर यह न समझ लेना चाहिए कि अपने चुने हुए विषय की विशेष जानकारी से ही निपुणता से सोचने के लिए यथेष्ट सामग्री मिल जायगी, उस को भाँति भाँति के सामान्य अनुभव से जहाँ तक हो सके परिवर्द्धित करना चाहिए। आप के उद्योग का क्षेत्र कुछ भी हो, यदि आप अच्छे विचारक बनना चाहते हैं तो आप का यही प्रयास होना चाहिए कि आप के संसर्ग और अनुभव की सम्पत्ति अधिक से अधिक विस्तृत क्षेत्र से संग्रहीत की जाए। जीवन को इसी उद्देश्य से संगठित करना चाहिए चाहे उससे तात्कालिक लाभ न भी हो, क्योंकि सम्भव है कि मन के कोने में पड़ा हुआ कोई अनुभव या ज्ञान बाद में, कभी आवश्यकता पड़ने पर, बड़ा

उपयोगी सिद्ध हो, पुस्तकें, पत्र, पत्रिकाएं, शौक़ के धन्धे (Hobbies) पर्यटन, मानवीय संसर्ग आदि ऐसे अनेकों साधन हैं जिनके द्वारा मन को विविधि प्रकार के ज्ञान और अनुभव से सम्पन्न किया जा सकता है।

अपने पेशे के सम्बन्ध में विशिष्ट रूप मे पढ़िए पर अपने अध्ययन को अपने पेशे तक ही सीमित न रखिए, पुस्तकें और मासिक पत्र मानसिक सम्पत्ति बढ़ाने के लिए बड़े उपयोगी हैं, जो कुछ पढ़ा जाय, उसे पचा लेना चाहिएँ, विचार और एकानुभूति द्वारा उसके हृदय में बैठ जाना चाहिए जिससे वह आपके निजी अनुभव के समान बन जाय। खूब पढ़ना चाहिए और जो कुछ पढ़ा, देखा या सुना जाय उस पर मनन करना चाहिए और उसका सम्बन्ध पूर्व संचित ज्ञान और प्रधान रुचियों से जोड़ना चाहिए। जो ज्ञान आप एकत्रित करें उसका बार-बार नये सिरे से संगठन करना चाहिए, ताकि आप उसे पूर्ण रूप से अपना सकें, इसी तरह अपने कारोबार से सम्बन्ध रखनेवाले सभी व्यक्तियों से मिलना चाहिए पर अपने को केवल व्यापारी मित्रों तक ही सीमित न रखकर अन्य लोगों का भी संसर्ग प्राप्त करना चाहिए। अपने उद्योग-धन्धे के संकुचित क्षेत्र मे बाहर निकलकर जीवन के दूसरे क्षेत्रों का परिचय और मेल प्राप्त करना चाहिए। शौक के धन्धों (Hobbies) जैसे बागबानी फ़ोटोग्राफी, गाना बजाना, चित्रकारी तथा कविता आदि, में जो समय लगता है उसे व्यर्थ न समझिए उनसे दूसरे प्रत्यक्ष लाभ तो होते ही हैं, परन्तु इसके अतिरिक्त उनसे नये मित्र बनाने के अवसर और विचारने की सामग्री भी मिलती है, जो भविष्य मे, आवश्यकता पड़ने पर, बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है,

दक्ष विचार के दो लक्षण होते हैं, उपजाऊपन और तेजी। ये दोनों गुण मुख्यतः अनुभव की प्रचुरता और अनुभव के संग-

ठन की उत्कृष्टता पर निर्भर रहते हैं, जिस समय उसके सामने कोई समस्या आती है तो उसका पूर्व संचित ज्ञान उसके सामने कई वैकल्पिक सुझावों को उपस्थित कर देता है, जिनमें हरएक से कई विभिन्न प्रकार के हल निकाले जा सकते हैं, जब कि एक साधारण विचारक मुश्किल से एक या दो हलों को ही सोच पाता है। इसी तरह विचारने में गति भी प्राप्त की जा सकती है। यदि आप अपने को गति के लिए संगठित करें. आप का कर्तव्य है कि न केवल अपने मन को भांति-भांति के तथ्यों और विचारों से भर दें। बल्कि अपने कुल ज्ञान को इस प्रकार संगठित और नियंत्रित करें कि आपको संकट के समय तेजी से सोचने और शीघ्र *निर्णय* की आदत पड़ जाय।

ख: अपने शब्द-भंडार को बढ़ाइए

आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान की खोजों से यह निश्चय हो चुका है कि सोचने से वाक् सम्बन्धी पेशियों का स्पंदन होता है, अर्थात् सोचना एक प्रकार का बोलना है और विचार मानों उपवाणी है। जैसे शब्दों के बिना वाणी काम नहीं कर सकती, वैसे ही शब्दों के बिना विचार भी नहीं हो सकता, यदि बिना शब्दों के सोचना सम्भव भी होता तो भी वे *विचार व्यर्थ हो जाते*, क्योंकि *बिना शब्दों के हम उन्हें साफ-साफ और ठीक-ठीक व्यक्त न* कर पाते और न दूसरों पर प्रकट ही कर पाते। एक बड़ा शब्द-भंडार न केवल विचारों को प्रकाशित करने में सहायक होता है वरन् विचारों की उपज को भी प्रोत्साहित करता है।

कदाचित् पशुओं में विचार-शक्ति की कमी का एक कारण यह भी है कि वे बोल नहीं सकते और जिन जंगली या पिछड़ी हुई जातियों के मस्तिष्क हमारे जैसे पैने भी हैं वे भी अपने मन का पूरा पूरा उपयोग करने, अथवा ठीक ठीक विचार करने में

इस कारण असमर्थ रह जाते हैं कि उन का शब्द भंडार क्षुद्र मों शब्दों का ही है,

जैसे बिना ईंट गारे के मकान नहीं बनाया जा सकता, उसी तरह बिना शब्दों के सोचा भी नहीं जा सकता और विचारने के लिए भी विचारने की सामग्री रखना आवश्यक है। भाषा के बगैर निश्चित रूप से सोचा नहीं जा सकता, इसलिए सोचने की योग्यता मे उन्नति करने के लिए शब्द-भंडार को बढ़ाना चाहिए, क्योंकि शब्दों पर अधिकार प्राप्त कर लेने से आप को विचारों पर भी अधिकार मिल जायगा, पर यह याद रखना चाहिए कि शब्द वास्तव में संकेत हैं, इसलिए शुद्ध ढंग से विचारने के लिए शब्दों का ठीक-ठीक अर्थ समझ लेना आवश्यक है, नये शब्दों को सीखने का प्रयत्न करना चाहिए, पर उनके धुंधले, अस्पष्ट और अन्दाजिया सकेतों से कदापि सन्तुष्ट न रह जाइए। बल्कि शब्दकोष की सहायता से उनका ठीक अर्थ भी जान लीजिए। फिर उन्हें स्थायी रूप से अपने शब्द-भंडार मे सम्मिलित कर लेने के लिए उन्हें नियम पूर्वक बार-बार बातचीत और लिखने मे प्रयोग कीजिए, यहाँ तक कि वह आप के नित्यप्रति के काम मे आनेवाले शब्दों में शामिल हो जॉय। सूक्ष्म विचारों और अर्थो को सोचने और उन्हे ठीक-ठीक प्रकट करने के लिए यह आवश्यक है कि साधारण पर्यायवाची शब्दों और उनके अर्थो के बारीक भेदो की जानकारी प्राप्त की जाय।

अधिकाश लोगो का अनुभव होगा कि उनके सोचने में प्रयुक्त होने वाला शब्द-भंडार उनके पठित शब्द-भडार से सकुचित है, इसका कारण यह है कि पढ़ते समय जब हमें कभी कोई अपरिचित शब्द मिल जाता है तो या तो हम उसपर ध्यान न देकर यो ही आगे बढ जाते हैं या प्रसंग (ConteXt) के सहारे उसके अर्थ का थोड़ा-बहुत अनुमान कर लेते हैं इस

का परिणाम यह होता है कि हमारे मस्तिष्क का विकास एकांगीय होता है, क्योंकि बहुत से शब्दों को हम पढ़ तो सकते हैं पर बोलने या लिखने में प्रयोग नहीं कर सकते, और न उनसे कोई सहायता सोचने ही में मिलती है, इसलिए सोचने में दक्षता प्राप्त करने के लिए मन को एक ऐसे शब्द भंडार से सुसज्जित करना चाहिए जो प्रचुर और यथार्थ हो।

ग. बातचीत करके या लिखकर अपने विचारों को निश्चित रूप दीजिए.

बहुधा ऐसा होता है कि विचारों की खोज में हमारा मन अनिश्चित मनन करता हुआ घंटों भटका करता है, या दिवा स्वप्न देखा करता है, और कोई फल प्राप्त नहीं कर पाता, मन केवल एक वस्तु से दूसरी पर भटकता रहता है, मानों कुहरे में चल रहे हों, कुछ ऐसी ही अवस्था कभी कभी उस समय होती है जब हम कोई लेख या निबन्ध या किसी उलझे हुए मामले पर अपना मत या निर्णय लिखने बैठते हैं और समझ में नहीं आता कि किधर से लिखना प्रारम्भ करें और क्या लिखें। ऐसे अवसरों पर आरम्भ की कठिनाइयों के निवारण करने का सब से उत्तम उपाय यह है कि विषय से सम्बन्ध रखने वाले जो जो विचार आप के मन में उठते जांय उन्हें वैसे का वैसा ही लिखते जांय, . . बिना इस बात को चिन्ता किए हुए कि उन का क्रम, उन की भाषा, उनके तर्क बिल्कुल उपयुक्त हैं या नहीं। क्योंकि यह सब बातें तो बाद में देखने की हैं, सर्वप्रथम काम तो विचारों का प्रस्तुत करना है। यह एक अनुभव सिद्ध नियम है कि ज्यों ही आप कुछ चीज लिखने का प्रयास करते हैं, विचार निश्चित रूप धारण करने लग जाते हैं और उन के अनेकों सहचार सूझने लगते हैं, जो बड़े उपयोगी सिद्ध होते हैं। जब एक बार सारे उपलब्ध विचारों को लिख लिया गया तो फिर

उनको विस्तृत करना, क्रम से सजाना, चमकाना, और साहित्यिक सौंदर्य से अलंकृत करना-आदि काम जो बाकी रह जाते हैं वे तो अपेक्षाकृत सहज ही में किये जा सकते हैं। मुख्य काम तो पहले विचारों का एकत्रित करना है, और इस कार्य का श्रीगणेश करने के लिए सब से अच्छा तरीका यह है कि धुंधले विचार जो मस्तिष्क में मंडरा रहे हैं, उनको लिख डाला जाय। ऐसा करने से वे विचार न केवल स्वयं स्पष्ट और चमकीले हो जाते हैं, बल्कि अपने पीछे-पीछे दूसरे विचारों के आने में भी सहायता देते हैं। यहा तक कि शायद वह इतनी तेजी से उपजने लगें कि आपको उन्हें लिखते जाने मे भी कठिनाई हो।

कुछ लोग इसी काम के लिए एक दूसरी युक्ति का अवलम्बन करते हैं, वे अपने विचार एक दूसरे व्यक्ति को सुनाते हैं और उससे उनके सम्बन्ध मे बातचीत करते हैं। धुंधले विचारों को स्पष्ट करने और नये विचारों के बुलाने में वर्तालाप से बड़ी सहायता मिलती है, अपने विचारों के बारे में दूसरों से बातचीत करने से न केवल उन लोगों की प्रतिक्रियाएं और सुझाव मिल सकते हैं, बल्कि विचारों को शब्दो में व्यक्त करने और जो धुंधला और अनिश्चित है उसे एक निश्चित रूप प्रदान करने का प्रयास, सोचने और विचारों को उत्पन्न करने की क्रिया को प्रोत्साहन देता है। साधारणतया बातचीत का मार्ग उतना सुगम नहीं है जितना लिखने का मार्ग, क्योंकि ऐसा व्यक्ति मिलना कठिन है जिन्हें आपके विषय मे रुचि और उसके सम्बन्ध में यथेष्ट ज्ञान भी हो, नहीं तो आपके विचार सुनने वाला ऊबता जायगा और अपना पिंड छुड़ाना चाहेगा। लिखने वाली रीति में ऐसी कोई कठिनाई नहीं, क्योंकि कागज पेंसिल आसानी से मिल जाते हैं और उनका जी भी नहीं ऊबता सकता।

(घ) सोचने की क्रिया को यथेष्ट समय दीजिए

भली भांति सोचने के लिए उसे काफी समय देना जरूरी है. सच तो यह है कि तमाम दिमागी काम में समय एक महत्वपूर्ण तत्व है, शायद यह बच्चों को सी सीधी-सादी सलाह जान पड़ती हो, पर वास्तव में फ़हड़ सोचने का एक बहुत बड़ा कारण यही है कि लोग इस काम में काफी समय नहीं लगाते। उनके पास ताश, गपशप, सिनेमा आदि के लिए सदा अवकाश रहता है। पर जो कहिए कि बैठकर अपनी किसी समस्या पर विचार करें तो उन्हें एक घंटा समय निकालना भी कठिन हो जाता है। उन का आचरण ऐसा होता है मानो विचारना एक स्वयं होने वाली क्रिया है न कि एक कला, जिसके सीखने में परिश्रम और अध्यवसाय की आवश्यकता होती है। सभी उपयोगी प्रकार के सोचने में, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है परिश्रम और समय लगाना पड़ता है और *जितना ही कठिन और महत्वपूर्ण कोई प्रश्न हो उस पर* विचार करने में उतना ही अधिक समय लगाना चाहिए, अलावा उस समय के जो सोचने में व्यतीत किया जाय. सोचने की घड़ियों के बीच अवकाश काल भी, जब कि हम देखने में बेकार लगते हैं, उपयोगी होते हैं क्योंकि उनसे अचेत मन को सहारा देने का मौका मिल जाता है, इस कारण किसी प्रश्न को लेकर सो जाने से बहुधा ऐसे हल-मिल जाते हैं जो चेतन मन के घंटों प्रयत्न से भी पकड़ में नहीं आए थे, *इसलिए कभी-कभी यह सलाह दी जाती है* कि यदि कोई प्रश्न दिन में प्रयत्न करने पर भी हल न हो पाए तो रात में सोने से जरा पहले उस पर विचार कर लेना चाहिए, और फिर उस को ध्यान से हटाकर सो जाना चाहिए और अगले दिन सवेरे उठने पर देखना चाहिए कि क्या मिलता है।

ग्रहणात्मक सोचना
(ASSIMILATIVE THINKING)

यह सोचने की एक बड़ी व्यापक और उपयोगी किस्म है। इसका अभिप्राय होता है दूसरों के विचारों को ग्रहण करना, नए तथ्यों को समझना और पूर्व संचित ज्ञान राशि में सम्मिलित कर लेना। स्कूलों और कालिजों की पढ़ाई का अधिकांश भाग इसी प्रकार के सोचने से सम्बन्ध रखता है। यहां हमारे विचारने का उद्देश्य अनुसंधान या आविष्कार करना नहीं होता, और न दूसरों के विचारों को केवल निगल लेना ही होता है, बल्कि उनको समझ कर पचा लेना।

ग्रहणात्मक सोचने में नए तथ्यों और विचारों का सम्बन्ध उस ज्ञान से जोड़ना होता है जो मनुष्य के पास पहले से मौजूद है और नव प्राप्त तथ्यों और विचारों को शृंखला और श्रेणी में बाँधना और सजाकर रखना होता है। ग्रहणात्मक सोचना सच्ची शिक्षा और पांडित्य का प्राण है। अगर ग्रहणात्मक विचारने की सहायता न मिले तो शिक्षा केवल तोतारटंत रह जाय और विद्यार्थी भले ही जानकारी इकट्ठी कर ले या परीक्षाओं में ऊंचे पद भी प्राप्त कर ले, पर ऐसी शिक्षा से न तो वह पाठ्य विषय को ज्यादा समझ ही पायेगा और न उस की बुद्धि ही का विकास होगा।

ग्रहणात्मक सोचने की रीतियों का ब्यौरेवार वर्णन पढने की कला और 'स्मृति' वाले अध्यायों में किया गया है, पर तत्काल के हवाले के लिए उनका सार नीचे दिया जाता है।

ग्रहणात्मक सोचने में पहला कदम यह है कि बात का अर्थ जितनी अच्छी तरह हो सके समझ लिया जाय और उसके आनुशंगिक अर्थों, प्रभावों और परिणामों पर ठीक से अधिकार कर लिया जाय। जहांतक शब्दों और वाक्यांशों का सम्बन्ध है, उन

के माने जान लेना ही काफी नहीं, उनको अपने बनाए हुए वाक्यों में प्रयोग करना चाहिए ताकि उनका अर्थ पूरी तरह समझ में आ जाय। इसी तरह नए सिद्धान्तों और गुरों पर तभी प्रभुत्व प्राप्त किया जा सकता है, जब शिक्षार्थी स्वयं उनके सत्य को प्रकट करने वाले दृष्टांत ढूढ निकले और उनसे सम्बन्ध रखने वाले निगमन (Deductions) और अनुमानों (Corollaries) और उदाहरणों को हल करे।

दूसरे, नए विचार या तथ्य को अपने पूर्व ज्ञान के ताने बाने में बुन लेना चाहिए, और ऐसा करने की तरकीब यह है कि नए विचार या तथ्य का पुराने तथ्यों से सम्बन्ध जोड़ा जाय, अर्थात् उनकी तुलना दूसरे विचारों और तथ्यों से की जाय, और उन से अन्य प्रकार के रिश्ते जितने अधिक हो सकें उतने स्थापित किए जांय, जैसे सादृश्य या विरोध, कारण, और परिणाम। द्रव्य और गुण सपूर्ण और अश इत्यादि

तीसरे, नए विचारों या तथ्यों को पिछले तथ्यों से अलग अलग जोड़ना ही पर्याप्त नहीं, बल्कि उनको छांट-छांटकर उचित स्थानों में रख देना चाहिए, ताकि वह नियमित ढंग से ज्ञान के उस ढेर में शामिल हो जाय जिससे उनका स्वाभाविक सम्बन्ध है। ज्ञानोपार्जन, बल्कि जानकारी जमा करने में भी वर्गीकरण (Classification) एक आवश्यक क्रिया है। अपने दिमाग को काठकबाड़ रखने का गोदाम न बनाइये, जहां हर चीज तितर-बितर पड़ी रहती है। अपने मानसिक घर में जो कुछ सामान लायें, उसे सदा समय-समय पर तरकीब से रखते रहना चाहिए ताकि हर चीज़ के लिए एक जगह और हर जगह के लिए एक चीज नियत हो जाय और जरूरत के वक्त किसी चीज को ढूंढने में कठिनाई न हो।

चौथा, विभिन्न खानों के अन्दर की सामग्री अथवा ज्ञान के अलग अलग समूहों का परस्पर सम्बन्ध जोड़ना चाहिए, उनके बीच में तार्किक सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए, विद्या की भिन्न-भिन्न शाखाओं की एक दूसरे से तुलना करनी चाहिए और उनके बीच की छिपी हुई समानताएं ढूँढ निकालनी चाहिए। पिछली शिक्षा के अनुभव और रीतियाँ वर्तमान शिक्षा में, और एक पाठ्य विषय के दूसरे में, प्रयुक्त करनी चाहिए.

८. निर्णयात्मक विचार DELIBERATIVE THINKING

यह ग्रहणात्मक विचारने की अपेक्षा उच्चतर स्तर की मानसिक क्रिया है, क्योंकि इसमें कुछ न कुछ स्वतंत्र ढंग से सोचना होता है, और समस्याओं और फिर उनके हलों को स्वयं ही ढूँढ निकालना होता है। वास्तव में ग्रहणात्मक विचार निर्णयात्मक विचार के लिए तैयारी है। निर्णयात्मक सोचने में जो समस्या सामने है उससे सम्बन्ध रखनेवाले तथ्यों को विवेक पूर्वक छाँटा और एकत्रित किया जाता है, फिर उन्हें जाँचा और तौला जाता है, कार्य के कारण और कारण के कार्य की खोजकर के और तब अपनी सम्मति या समस्या हल को निर्धारित किया जाता है।

निर्णयात्मक विचार के लिए यह आवश्यक है कि हमारे सामने विचार करने के लिए कोई निश्चित विषय हो या हल करने के लिए कोई समस्या हो या हमें दो या अधिक मार्गों में से एक को चुनना हो। जब तक किसी यात्री को एक परिचित रास्ते पर चलना होता है, वह बिना सोचे-समझे आगे बढ़ता जाता है, पर यदि किसी स्थान पर वह सड़क दो मार्गों में फूट गयी हो और उन दो रास्तों में से एक ही लक्ष्य तक पहुँचता हो, तो यात्री के सामने यह प्रश्न उठता है कि वह दोनों में से किस मार्ग को अपनाये। उचित मार्ग को चुनने के लिए यात्री को निर्णयात्मक विचार करना होता

है, और निर्णय तक पहुँचने के लिए उसे पहले कुल तथ्यों और सम्भावनाओं की जानकारी प्राप्त करनी होती है और फिर उस पर अच्छी तरह सोच विचार करना होता है।

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य यह नहीं है कि शिक्षार्थी को उसके भावी जीवन में आने वाली सभी समस्याओं के बने बनाए हल सिखा दिए जाय, बल्कि मनुष्य को स्पष्ट और दीर्घ काल तक सोचने की आदत डालना, जिससे उसमें ऐसी योग्यता आ जाय कि वह (१) अपने जीवन में दो मार्गों वाली परिस्थितियों को देख सके या समस्याओं को खोज सके, (२) फिर उन सामग्री को सचित कर सके जो उन समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक हैं और (३) फिर अपने तथ्यों या प्रमाणों को तोलकर और ऊहापोह करके अपनी समस्याओं को स्वयं हल कर सके। हमारी शिक्षा पूर्ण तभी होगी जब वह हमारे दिमाग को इतना पैना बना दे कि वह उन समस्याओं को पहचान सके जिनका सामना हम को अपने जीवन में या हमारे समाज का करना पडता है, हमारे दैनिक कार्यों और सामाजिक सम्बन्धों में ऐसे अनेकों प्रश्न हल करने के लिए मौजूद हैं जिनके लिए निर्णयात्मक विचार की आवश्यकता होगी।

जब कभी हमारे विचार-प्रवाह में कोई रुकावट या या कठिनाई आ जाती है, जिसके कारण हम दुविधा या असमन्जस में जाते हैं कि क्या करें तभी हमें निर्णयात्मक सोचने की आवश्यकता पड जाती है। इस प्रकार का सोचना किसी न किसी प्रश्न के हल करने ही के उद्देश्य से होता है, वे प्रश्न सरल हो सकते हैं, जैसे छुट्टियों का व्यतीत करना, या जटिल जैसे कोई पेचीदा प्रश्न किसी प्रकार या कैसी भी जटिलता का हो, उसका हल केवल निर्णयात्मक विचार द्वारा ही पाया जा सकता है।

एक बड़े मनोवैज्ञानिक का कहना है कि निर्णयात्मक सोच मकने की निम्नलिखित पांच मंजिलें होती हैं ।

(क) पहली मंजिल यह है कि आप किसी कठिनाई या समस्या को महसूस करें, सोचने या तर्क करने के लिए कोई विषय होना चाहिए। उद्देश्यपूर्ण सोचने का अर्थ ही यह है कि मस्तिष्क को उत्तेजित करने के लिए उसके सामने कोई ऐसी परिस्थिति या समस्या है जो उसे हैरानी में डालती है और हल खोज निकालने के लिए परिश्रम करने को प्रेरित करती है। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि प्रश्न आप के हृदय को एक निजी मामले के समान प्रभावित करे और आपको उससे दिलचस्पी अथवा अनुराग हो, क्योंकि, जैसा पहले बताया चुका है, दिमाग का काम उत्तम ढंग से तभी हो सकता है जब उसे संवेग या भावना से उत्तेजना मिले।

(ख) निर्णयात्मक सोचने की दूसरी श्रेणी है कि प्रश्न या समस्या को ठीक-ठीक परिमित और निश्चित कर लिया जाय, यह समुचित रुप से समझ लेना आवश्यक है कि उस कठिनाई का ठीक रूप क्या है जिसका निवारण करना है, या वह ठीक-ठीक प्रश्न क्या है जिसे हल करना है। जबतक कोई कठिनाई अस्पष्ट रहती है' उसका हल करना असम्भव होता है और इसके विपरीत प्रश्न को ठीक ठीक समझ लेना उस का आधा उत्तर निकालने के बराबर होता है। सीखने, सोचने और हर प्रकार के दिमागी काम में एक अत्यन्त आवश्यक क्रिया यह है कि प्रश्न के केन्द्र को निर्धारित कर लिया जाय। समस्या के मर्म को जानने के लिए उसके उसको खंडों में विभाजित कर लेना चाहिए और बारी-बारी से उनकी जांच करनी चाहिए। किसी कठिन रोग के निदान में डाक्टर भी उसी रीति का अवलम्बन करता है. वह रोगी के

लक्षणों की परीक्षा करता है और अपने विस्तीर्ण अनुभव तथा ज्ञान के सहारे एक के बाद दूसरी सम्भावना को निकालता जाता है, और इस प्रकार के रोग निदान को क्रमशः एक केन्द्र की ओर परिमित करता जाता है, यहां तक कि अन्त में वह बहुत से धुंधले अनुमानों के बजाय एक निश्चित और निर्णायक प्रश्न पर पहुँच जाता है जिसे हल कर लेने से उसकी मुख्य समस्या का हल हो जाता है। इसी प्रकार आपको चाहे गणित, व्यापार या किसी सामाजिक प्रश्न का समाधान करना हो, उसमें पहला क़दम यही है कि उसके मूल तत्व को ढूँढ़ निकाला जाय। यही शायद सोचने की क्रिया का सब से कठिन अंग है, इसी से धुंधला और दुर्बल सोचना प्रभावशाली सोचना बन जाता है, और जिसे भी अच्छा विचारक बनने की आकांक्षा हो उसे अपने प्रश्नों को जाँचने और उनके मर्मस्थानों का पता लगाने की आदत डालनी चाहिए।

(ग) निर्णयात्मक सोचने में तीसरी क्रिया यह है कि प्रश्न के जो-जो समाधान सम्भव हों उन पर विचार किया जाय और एक संभावित निर्णय (Hypothesis) बना लिया जाय। समस्या के मर्म को निश्चित रूप से निर्धारित कर लेने के बाद उसके हल की खोज करनी चाहिए। कई एक संभावित निर्णय, समाधान, या हल (Hypothesis) बना लेने चाहिए और उन में से हर एक के पक्ष और विपक्ष के सब तथ्यों को एकत्रित कर के फिर उन पर विचार करना चाहिए, अपने ज्ञान और अनुभव का पूरा पूरा उपयोग करना चाहिए। पर किसी भी उपयोगी विचार पर इतना मुग्ध न हो जाइये कि दूसरे सब विचारों की ओर से मन के पट बिलकुल ही बन्द हो जांय। प्रश्न का जो पहला हल समझ में आवे उसे ही, बिना जाँच पड़ताल के, कदापि न स्वीकार कर लेना चाहिए चाहे वह देखने में कितना ही उत्तम क्यों न हो। दूसरे

वैकल्पिक समाधानों की अवश्य खोज कीजिये और उन पर विचार कीजिये। जब आप को अपने प्रश्न का एक समाधान मिल जाय तो उस को नोट कर के ध्यान से अलग हटा दीजिये और फिर नये सिरे से दूसरे समाधानों को ढूंढना चाहिये, जानबूझकर एक नये दृष्टिकोण से रवाना होना चाहिये ताकि एक नये समाधान तक पहुँच सकें। यह स्मरण रखना चाहिये कि किसी भी समस्या मे सदा एक से अधिक समाधान होते हैं, इसलिये केवल सर्वश्रेष्ठ समाधान से ही सन्तुष्ट होना चाहिये। सम्भव है कि आपके सामने एक अच्छा हल मोजूद है, पर शायद आप एक बिल्कुल नई विचारधारा का अवलम्बन करके एक और, उस से भी अच्छे, समाधान को प्राप्त कर सकें। अधिकांशत: उच्चकोटि के विचारकों की श्रेष्ठता का रहस्य यही रहता है कि वे बडी सुगमता से किसी भी समाधान से सन्तुष्ट नहीं होते और न अन्तिम निर्णय पर पहुँचने मे उतावलापन करते हैं, बल्कि धैर्य और अध्यवसाय के साथ उत्तम से उत्तम हल की खोज करते हैं।

(घ) चोथा कदम यह है कि जो कुछ भी सभावित निर्णय Hypothsis बनाया है उसके परिणामा की जाच की जाय, प्रस्तावित समाधान को स्वीकार कर लेने से पहले यह देख लेना आवश्यक है कि वह सत्य valid है या नहीं और उस से जो नतीजे निकलने चाहिए वह ठीक बैठते हैं या नहीं। कुल कठिनाइयो, शकाओं और आपत्तियों पर विचार कर लेना चाहिए। दूसरों से अपने विचारों की समालोचना मागिए और अगर किसी दूसरे का परामर्श न मिल सके तो स्वय ही अपने विचारों के विरुद्ध सब आक्षेपों और आपत्तियों को ढूंढ निकालिए। इन कठिनाइयों और आक्षेपो पर विचार करने से न केवल अपने विचारों की जाच हो जाती है बल्कि यह भी सम्भव है कि ऐसा करने से दूसरे और बढ़िया

समाधान प्राप्त हो जांय, जो अन्य प्रकार से कदाचित ध्यान में न आते।

दक्ष विचारक तर्क और सत्य के प्रकाश के स्वागत के लिए अपने मन को सदा खुला रखता है। वह आपत्तियों पर विचार करने के लिए तैयार ही नहीं वरन् इच्छुक रहता है। कुछ लोग अहंकारवश या अपने मान प्रतिष्ठा के विचार से अभिभूत होकर अपने प्रिय मत या मन्तव्य के विरुद्ध कुछ सुनना या सोचना ही नहीं चाहते। इसमें सन्देह नहीं कि किसी भी संस्था में जब एक ऊपर का कर्मचारी कुछ निश्चय कर लेता है तो उसके मातहतों का यह कर्तव्य हो जाता है कि उसके निर्णय को तत्परता से कार्यान्वित करें। पर जब तक कि कोई निश्चय न कर लिया जाय, जबतक कि प्रश्न पर विचार किया जा रहा है, उस समय ऊंचे से ऊंचे पदाधिकारी को भी अपने आप को एक विचारक ही समझना चाहिए। जो कोई भी अपने मन के प्रयोग से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहता है, उस का कर्तव्य है कि विचारने में अपने मित्रों तथा सहकारियों द्वारा बताई गई कठिनाइयां, आक्षेपों और आपत्तियों का स्वागत करे और उनको और आगे सोचने के लिए चुनौती समझें।

(अ) सफल विचारने की पांचवीं और अन्तिम मंजिल है अन्तिम हल को निश्चित करना और फिर उसकी जांच करना। न केवल वैज्ञानिक संसार में वरन् सभी प्रकार के सोचने में कोई भी महत्वपूर्ण सिद्धान्त (Theory) और बगैर प्रयोगात्मक सत्यता Experimentel verification के स्वीकार नहीं किया जा सकता, ठीक उसी भांति जैसे कि कोई प्रयोग तभी उपयोगी हो सकता है जब उसके करने से पहले पर्याप्त सोचा-विचार कर लिया जाय। इस लिए जहां तक हो सके अपने प्रस्तावित हल, योजना या नीति की प्रयोग द्वारा परीक्षा कर लेनी चाहिए, इस प्रकार के प्रयोग के

लिए कोई छोटी सी इकाई छांट लेनी चाहिए, जिस से कि यदि गलती भी हो तो कोई विशेष हानि न हो। यदि हो सके तो और भी तथ्य अपने विचार की सत्यता की पड़ताल करने के लिए इकट्ठा करना चाहिए। सारांश यह कि किसी मत या समाधान को बड़ी सावधानी और सम्पूर्णता-से जाँच लेने के बाद ही स्वीकार करना चाहिए। शायद इस सलाह को पाठक अनावश्यक समझें, पर यह सच है कि इस नियम को पालन न करना एक बहुत ही व्यापक दोष है। अधिकांश लोग अपने सुन्दर समाधान से ऐसे प्रसन्न हो जाते हैं और शीघ्र ही फल प्राप्त करने के लिए इतना उत्सुक हो उठते हैं कि वह तुरन्त ही अपने मत को कार्यान्वित कर देने पर उतारू हो जाते हैं। पर ऐसा करना सर्वथा अनुचित है, और जो लोग निपुण विचारक बनने के इच्छुक हैं उन्हें अपने अन्तिम निर्णय पर पहुँचने में बड़ी सावधानी से काम लेना चाहिए और तत्कालीन परिस्थितियों में जो अच्छा से अच्छा समाधान मिल सके केवल उसीसे सन्तुष्ट होना चाहिए।

चाहे हमें इन पांचों क्रियाओं का अलग-अलग बोध न होता हो, पर निर्णयात्मक सोचने का सारा काम कुछ न कुछ इसी ढंग से होता है,

(९) रचनात्मक सोचना Creative Thinking

यह विचार का सर्वोच्च स्तर है, इस का उद्देश्य मौलिकता, नई बातों और प्रकृति के रहस्यों का अनुसंधान, नई युक्तियों या नये यंत्रों का आविष्कार, ज्ञान की सीमाओं को बढ़ाना, नई योजनाओं का निर्माण, अथवा नई कृतियों की रचना करना होता है। निर्णयात्मक सोचने द्वारा व्यक्ति अपने दैनिक प्रश्नों के समाधान का प्रयत्न करता है जिन्हें कदाचित बहुत से लोग पहले ही किसी न किसी ढंग से हल कर चुके हैं, पर रचनात्मक सोचना नये विचारों, नये तथ्यों, या नये समाधानों की खोज करता है जिनका

पता अबतक मानव जाति को नहीं लगा। निर्णयात्मक सोचने में प्रश्न यह रहता है कि दो या अधिक मार्गों में से एक को छांट लिया जाय। रचनात्मक सोचने में ऐसे स्थल पर मार्ग निकालना पड़ता है जहां पहले किसी को भी कोई मार्ग मलूम न था.

रचनात्मक सोचने में अधिकांशतः वैसी ही क्रियाओं का प्रयोग होता है जैसी कि निर्णयात्मक सोचने में प्रयुक्त होती हैं, और जो सुझाव विचारने के सामान्य सहायकों तथा निर्णयात्मक सोचने के सम्बन्ध में ऊपर दिये जा चुके हैं वह रचनात्मक सोचने में भी लागू होते हैं। पर रचनात्मक सोचने की कुछ विशेषतायें हैं, इसके लिये प्रबल भावावेग के उत्तेजन की जरूरत होती है, क्योंकि इसी उत्तेजन से वह शक्ति उत्पन्न होती है जो न केवल विचारों को मिलाकर नये जुट्ट बनाती है, बल्कि विचारों और तथ्यों को जमा करने के प्रयास के लिये भी प्रेरित करती है। यह भावावेश हमें तभी मिलता है जब हम अपने हृदय को पूरे हृदय से किसी रोचक, पर सावधानी से चुने हुए, कार्य या विचार के क्षेत्र में निमग्न कर दें। अगर अपने मनोनीत विषय से अनन्य अनुराग हो तो उससे सम्बन्ध रखनेवाली जानकारी को इकट्ठा करना, उस पर मनन करना, उसका विश्लेषण करना तथा उसको पचाने का काम, बहुत सहज हो जाता है। बहुत देर तक लगातार कड़ा विचार करना, या किसी विचार की खोज करते रहना ठीक नहीं। बल्कि थोड़ी-थोड़ी देर काम करने के उपरान्त थोड़ा सा सुस्ता लेना या विषय परिवर्तन कर लेना ही हितकर है क्यों कि विश्राम करने से मस्तिष्क के उच्चतर भागों को काम करने का सुअवसर मिल जाता है, और सचेत और अचेत मन एक दूसरे की सहायता करके मनोवांछित नये विचारों को उत्पन्न देते हैं. रचनात्मक सोचने के विषय का उल्लेख अगले अध्याय में विस्तृत रूप से किया गया है।

बारहवाँ अध्याय

कल्पना और मौलिकता, नये विचारों का बनना

(१) कल्पना क्या करती है ?

लोगों से अगर पूछा जाय कि क्या उनके पास अच्छी कल्पनाशक्ति है तो उनमें से अधिकांश तुरन्त यह सोचने लगेंगे कि क्या उनका मन असम्भव के साम्राज्य में उड़ान कर सकता है या क्या वे प्रेमचन्द और शरत बाबू की तरह सुन्दर उपन्यास लिख सकते हैं। पर सच पूछिये तो कल्पना विचार की कोई ऐसी क्रिया नहीं है जिसका सम्बन्ध केवल वास्तविकता और सम्भावना के क्षेत्र से परे की बातों से रहता है या जिसका उद्देश्य हमारे अवकाश के समय में केवल हमारा मनोरंजन करना होता है, बल्कि यह तो दैनिक जीवन की एक ऐसी अत्यन्त आवश्यक क्रिया है जो हमारे सोचने विचारने और काम करने के मार्ग पर प्रकाश डालती है और जिसके बिना हमारे कार्य दूसरों के अनुकरण या अपनी तात्कालिक धुन पर ही अवलम्बित रह जाते। मानव जीवन में कल्पना का क्षेत्र व्यापक है, न कि संकुचित।

कल्पना हमारी मानसिक आँखों के सामने उन चीजों की प्रतिमायें उपस्थित कर देती है जो हमारे भौतिक नेत्रों के सामने मौजूद न हों। इसका मुख्य काम है पदार्थों की अनुपस्थिति में उनकी प्रतिमाओं को मन में प्रगट करना अथवा उनके सम्बन्ध में विचारों का बनाना। ये प्रतिमाएं कभी तो ऐसे पदार्थों या विषयों की होती हैं जिन्हें हम स्वयं, या दूसरों की सहायता से, पहले अनुभव कर चुके हैं और कभी ऐसी बातों से सम्बन्ध रखती हैं जो

हमारे लिए बिलकुल नई हैं और जो हमारे अनुभव में पहले कभी नहीं आईं। कल्पना की इन दो क्रियाओं का भेद शीघ्र ही स्पष्ट हो जायगा। एक में पुराने विचारों और प्रतिमाओं का पुनः उद्भव होता है, दूसरी में नई प्रतिमाओं या नये विचारों का निर्माण। पहली को हम पुनरुद्भावक और दूसरी को रचनात्मक कल्पना कहेंगे।

(२) पुनरुद्भावक कल्पना

इतिहास, साहित्य, कला इत्यादि के समझने में कल्पना की आवश्यकता होती है, क्योंकि इन चीजों को तभी समझ सकते हैं जब कि अपने सामने उनके काल, लेखक, या कलाकार के विचारों का चित्र साफ़-साफ़ बन जाय। इसी तरह विज्ञान के समझने के लिए भी कल्पना की बड़ी ज़रूरत होती है। उदाहरणार्थ जब तक आपकी मानसिक दृष्टि के सामने अणुओं और परमाणुओं का ठीक-ठीक चित्र नहीं बन जाता तब तक आप उन्हें समझ ही कैसे सकते हैं! कल्पना की इन सब क्रियाओं को हम पुनरुद्भावक कह सकते हैं। इस पुनरुत्पादक कल्पना द्वारा हम अपने मनमें उन चित्रों को दोबारा उपस्थित कर देते हैं जो दूसरों के लिखने या बोलने के कारण पहले अंकित हुए थे या जो हमारे निजी पिछले अनुभवों से बनकर स्मृति के रूप में संचित थे। यही अतीत के चित्रों को हमारे समक्ष उपस्थित करती है और इस भाँति हमें भूत-काल के भूपतियों, महर्षियों तथा वीरों के साथ रहने का अवसर प्रदान करती है। कल्पना के इस प्रयोग में हमारा काम पीछे-पीछे चलता रहता है न कि अगुआ बनना, नकल करना न कि उत्पन्न करना, नई बातों का समझना न कि उनका आविष्कार करना।

(३) रचनात्मक कल्पना

दूसरों के विचार, भाव और कृतियों के समझने या उनकी व्यवस्था करने के सिवा कल्पना का एक और बड़ा महत्वपूर्ण

काम है। मान लीजिये कि कविता पढ़ने की जगह आप स्वयम् एक काव्य की रचना कर रहे हैं या किसी चित्र को देखने की जगह आप स्वयम् एक चित्र बना रहे हैं। ऐसी अवस्था में आपका उद्देश्य दूसरों के पीछे पीछे चलना या उनकी नकल करना नहीं होता बल्कि दूसरों के लिए एक नये उदाहरण या चित्र का निर्माण करना होता है। कल्पना की इस क्रिया को हम रचनात्मक क्रिया कह सकते हैं। दुनिया की उन्नति के लिए ऐसे व्यक्तियों की परम आवश्यकता है जो नये मार्ग दिखायें, नई वस्तुएँ या नये विचार पैदा करें। सच तो यह है कि किसी को, चाहे उसका पद कितना ही छोटा हो, या उसका जीवन कितना ही नीरस हो, यह आवश्यक है कि वह कुछ न कुछ हद तक मौलिकता या स्वयं किसी न किसी काम को प्रारम्भ करने की क्षमता, रक्खे। यह योग्यता बहुत हद तक रचनात्मक कल्पना को काम में लाने की दक्षता पर ही निर्भर रहती है।

(४) कल्पना शक्ति का महत्व

कल्पना शक्ति एक अत्यन्त ही मूल्यवान व्यावहारिक पूँजी है। यह बड़ी सफलता पाने वाले व्यक्तियों का विशेष लक्षण है। अगर नेपोलियन एक महान् सेनाध्यक्ष था तो इसीलिए कि उसने परम्परा को रूढ़ियों को तोड़ा और एक नये प्रकार के सामरिक कौशल की कल्पना की, जिसका मुकाबला बहुत समय तक कोई दूसरा न कर सका। इसी तरह नफील्ड और हेनरीफोर्ड जैसे शिल्पकारों की सफलता भी उनकी कल्पना शक्ति के कारण है जिसने उनके सामने नई सम्भावनाओं, नये कार्यक्रम और संगठन तथा काम के नये-नये ढंगों का प्रादुर्भाव किया। न्यूटन और आइन्स्टाइन जैसे विचारकों ने जो नई मानव-विचार प्रणाली स्थापित की वह न केवल इस वजह से कि उनके पास ज्ञान का

वृहद् भण्डार था बल्कि इस कारण कि उन्होंने अपने मन की मामग्री से विचारों और व्याख्याओं का नया ताना बाना बुना।

साधारण क्षेत्र में भी रचनात्मक कल्पना ही सफलता का प्रधान सूत्र है। यदि आप उपन्यास, नाटक या कविता लिखना चाहते हैं तो सब से पहले आपको यही रहस्य समझना पड़ेगा। एक प्रबन्धक कर्मचारी जो किसी संस्था का जमे हुए पुराने ढर्रे पर योग्यता पूर्वक चलाता है एक दूसरे व्यक्ति की अपेक्षा कहीं कम मान्य होता है, जो कि काम करनेके नये ढङ्गों का अनुसन्धान करता है और नवीन कार्य-कौशल की रचना करता है। ईमानदारी और मेहनत से काम करने वाला अवश्य ही समाज का उपयोगी तथा आदरणीय सदस्य है, जो अपने परिश्रम के पुरस्कार से कभी वंचित नहीं रह सकता। पर यदि वह इससे अधिक और कुछ नहीं है और यदि उसमें रचनात्मक कल्पना-शक्ति का अभाव है तो वह किसी नई व्यावसायिक क्रिया या उम्दा माल या और अधिक सफल आर्थिक संस्था की रचना करके या किसी उपन्यास अथवा गल्प को लिखकर अपने साथियों में विशिष्ट स्थान नहीं प्राप्त कर सकता, उसकी गणना साधारण वर्ग मे ही रहेगी। अगर आप इस प्रकार के क्षेत्रों में सफलता पाने के इच्छुक हैं तो आपको अपनी कल्पना को शिक्षित तथा विकसित करना चाहिए। उन्नति करने की यह आवश्यक शर्त है।

हमारे दैनिक काम काज में भी कल्पना का बहुत बड़ा हाथ रहता है। कल्पना भविष्य पर दृष्टि डालकर हमारे लिए नमूने तैयार करती है और योजनायें बनाती है। यही हमारे आदर्शों का निर्माण करती है और पहले ही से हमें आने वाली उस अवस्था का सुख-स्वप्न दिखा देती है जब हम उन आदर्शों को चरितार्थ कर चुके होंगे। कल्पना भविष्य में होने वाली बातों का चित्र हमारे सम्मुख उपस्थित कर देती है, और उनका कुछ न कुछ

आभास पहले से करा देती है। हमारे किसी कार्य से भविष्य में किस फल की आशा की जाय, हमारे कहे या लिखे हुए शब्दों का दूसरों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, हमारे किसी प्रस्ताव प्रार्थना या मांग के विरुद्ध दूसरों के किन किन आपत्तियों के पेश करने की सम्भावना है—यह सब पहले ही से कल्पना द्वारा समझा जा सकता है। इसी से हम दूसरों के मन के अन्दर पैदा होने वाले विचारों और भावनाओं का अन्दाज पहले से लगा लेते हैं जिससे हम उनकी शंकाओं का समाधान करने के लिए तैयार हो जाते हैं। अगर कल्पना न हो या उसका उचित प्रयोग न किया जाय तो हम कितने ही काम ऐसे कर डालें जिनसे दूसरों को या अनेक ही को हानि पहुँचे और जिनके लिए बाद में बहुत पछताना पड़े। कल्पना वर्तमान में आकर हमारे हर काम को प्रभावित करती है चाहे वह कितना ही सरल या जटिल क्यों न हो। मानसिक प्रवाह के लिए यह वैसे ही पथप्रदर्शक का काम करती है जैसे एक दीपक अन्धकार में चलते हुए उस पथिक के लिए जो कि दीपक को अपने साथ ले जाता है।

कल्पना मस्तिष्क की कलाकार है, वह आप के भविष्य के चित्र खींचती है। वह कलाकार कभी आशावादी होता है, और विजय, सफलता, सुख और आनन्द के चमकदार चित्र खींचता है। कभी यह कलाकार निराशावादी होता है, और भय, खतरे तथा मृत्यु के चित्र बनाता है। इन चित्रों मे बड़ी शक्ति भरी रहती है। वे आप को विश्वास और साहस के शिखर पर पहुँचा सकते हैं या आप को निराशा की गहराइयों में ढकेल सकते हैं। कल्पना ही आत्म-सूचना का आधार है, क्योंकि भविष्य के जो चित्र आप की कल्पना गढ़ती रहती है वह आगे चल कर सत्य होकर प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हो जाते हैं। नेपोलियन ने ठीक

कहा था कि विश्व पर कल्पना ही का साम्राज्य है। इसी तरह आप की कल्पना आप के जीवन पर शासन करती है।

मानसिक शक्तियों में कल्पना का स्थान सबसे ऊँचा है। दूसरी शक्तियाँ—जैसे समझने और याद रखने की—हमारे जीवन में बड़ी ही उपयोगी और आवश्यक हैं। उनके बिना जीवन का कारोबार चलना असम्भव होगा। यह बात तो शायद कल्पना के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकती पर कल्पना एक बड़े उच्चकोटि की शक्ति है। उसका काम नये विचारों का उत्पादन करना, नई बातों की खोज निकालना और उन बातों को स्पष्ट रूप से देखना है जिनका प्रत्यक्ष और वर्तमान संसार में नाम निशान भी नहीं और जिनका अस्तित्व केवल सम्भावना या भविष्य या अतीत के ही जगत में रहता है।

(५) कल्पना शक्ति का विकास

क्या कल्पना शक्ति मनुष्य के वश की वस्तु है? क्या प्रयत्नों द्वारा उसको बढ़ाना या विकसित करना सम्भव है? क्या यह सच नहीं कि कुछ लोगों को जन्म से यह शक्ति विशेष मात्रा में मिली रहती है और कुछ लोग इससे वंचित रहते हैं? निस्सन्देह मनुष्य मात्र में और प्रकार की योग्यताओं की तरह कल्पना शक्ति की मात्रा में भी भिन्नता रहती है। कुछ लोगों में दस प्रकार की योग्यता रहती है,, कुछ लोगों में पांच और कुछ में एक ही प्रकार की। परन्तु ऐसा कोई नहीं जिसमें कोई न कोई योग्यता न हो। हर व्यक्ति में कम से कम एक प्रकार की योग्यता अवश्य रहती है। इसी प्रकार कल्पना शक्ति की मात्रा कुछ व्यक्तियों के पास कम हो सकती है पर वह निस्सन्देह बढ़ाई जा सकती है। उन लोगों के काम में भी, जिन्हें प्रकृति ने प्रचुर मानसिक बल प्रदान किया है या जो बड़े ही प्रतिभासम्पन्न हैं विकास या उन्नति का क्रम दीख

पड़ता है—उनकी शक्तियाँ भी समय बीतने के साथ बढ़ती हुई जान पड़ती है। ऐसा बहुत ही कम होता है कि वे आरम्भ से ही अपनी पूरी शक्ति प्रकट करने लगें। उनकी रचनात्मक क्षमता का वर्षों तक पालन-पोषण होता रहता है और उनकी योग्यता समय के साथ और भी अधिक विस्तृत मौलिक और गहन बन कर ही अपनी चरम सीमा तक पहुँचती है। शेक्सपियर और डार्विन की रचनाओं से भी कालान्तर एवं क्रमशः विकास ही का पता चलता है। वे भी अपने काम और जीवन द्वारा अपनी कल्पना-शक्ति को शिक्षित और परिवर्द्धित करते दिखाई देते हैं और जो बात दस प्रकार की योग्यता रखने वाला व्यक्ति कर सकता है वही बात—यद्यपि निश्चय ही कम मात्रा में – एक योग्यता रखने वाला भी प्राप्त कर सकता है। यदि हम प्रकृति से मिली हुई कल्पना शक्ति की मात्रा को नहीं बढ़ा सकते तो अपने आपको इस तरह अवश्य शासित कर सकते हैं कि जितनी भी कल्पना शक्ति हमारे पास है उसीसे हमारी मानसिक कल अधिक दूरी तक और अधिक तेजी से जा सके।

इसलिए किसी को यह समझने की आवश्यकता नहीं है कि उनके भाग्य में जीवनभर कल्पना-विहीन परिश्रम करने वाला बना रहना ही लिखा है। अगर आप ऐसे भाग्यके विचार से दबे रहते हैं तो दोष आप ही का है, न कि आप के प्रारब्ध का। इसका कारण है उदासीनता एवं कुछ निराशा और ईश्वराधीनता का भाव। मगर इससे भी ज्यादा इसका कारण है इस बात से अनभिज्ञता कि आप उन्नति कर सकते हैं। कल्पना-शक्ति से जिस प्रकार बहुतों ने लाभ उठाया है उसी प्रकार आप भी उठा सकते हैं और उन्नति कर सकते हैं। यदि आप मनोविज्ञान के बताये हुए मार्ग पर चलें।

(६) मौलिकता का रहस्य

थोडे से और सरल शब्दों में इस प्रश्न का उत्तर यह है कि आविष्कार-कुशल मन (Mental Association) मानसिक सहचार की पुरानी आदतों को तोडकर नयी आदतें स्थापित करता है। उदाहरण के लिये फाउंटेनपेन के आविष्कार को लीजिये। वर्षों तक नर नारी लेखन सहचार की एक जमी हुई प्रणाली से सन्तुष्ट रहे, जिसमें लेखनी एक स्थान पर और दावात दूसरे स्थान पर रहता थी। उस सहचार पर किसी को शंका न थी। उसी को लोग अन्तिम समझते थे। ठीक उसी भांति जैसे आज भी हम लोग बहुत सी चीजों को अन्तिम मानते हैं। आविष्कारक की क्रिया का आरम्भ यही था कि कलम दावात के उस पुराने सहचार पर शंका को गयी। कलम को यहाँ और दावात को वहाँ रखना क्यों आवश्यक है? एक बार ऐसी शंका जागृत हो गई, तो फिर उसके बाद दूसरा कदम कठिन न रह गया क्योंकि तुरन्त ही यह प्रश्न उठता है कि कलम और दावात में एक नया सम्बन्ध फिर से क्यों न स्थापित किया जाय? इसके बाद यह प्रश्न स्वाभाविक ही था कि कौन सा नया सम्बन्ध? जिज्ञासु मन इस स्थान पर कोई उत्तर न पाकर रुक सकता था और अनुसंधान को छोड सकता था। या वह आगे बढकर यह प्रश्न कर सकता था कि दावात कलम के साथ क्यों न रहे, या कलम के भी *तरह ही* क्यों न रहे?

इसी प्रकार पाठक यदि कुछ सरल आविष्कारों का विश्लेषण करें, जैसे कलाई की घडी, तो वह देखेंगे कि उपरोक्त *प्रक्रिया* प्रतिरूपक (Typical) है जिसके दो मुख्य अंग यह हैं, एक तो नित्यानुगामी जमे हुए सम्बन्धों पर संदेह करना (जैसे कलम यहाँ दावात वहाँ, घड़ी जेब के भीतर) दूसरे नये, पर सम्भव जुड़ों को

सोच निकालना (जैसे दावात कलम के अन्दर, घड़ी कलाई के ऊपर)।

इस प्रकार मौलिकता के रहस्य का उद्घाटन हो जाता है। कल्पना नई चीजों को जन्म नहीं देती, वरन् पुरानी वस्तुओं, पुराने विचारों में उलट-फेर करके उन्हें नये संयोगों के रूप में उपस्थित कर देती है। यह सच है कि मनुष्यों की जन्म प्राप्त योग्यताओं में अन्तर रहते हैं। पर हम उन्हें मापने में अभी तक असमर्थ हैं, शायद सदा रहेंगे, अतएव इन अन्तरों का तो विचार करना ही व्यर्थ है। पर चाहे एक व्यक्ति की कल्पना-शक्ति कितनी ही दुर्बल या प्रबल हो, उसके लिये यह बिल्कुल सम्भव है कि अपने पदार्थों और कामों की दुनियां में अपने अभ्यासी सम्बन्धों के बारे में सदा शंका करते रहें और ऐसे प्रश्न पूछते रहें कि क्या वह काम किसी दूसरे ढंग से किया जा सकता है ?

(७) कल्पना और अन्तश्चेतना

मस्तिष्क, उसकी क्रियाओं और उसकी रचनात्मक या कल्पनात्मक शक्तियों के सम्बन्ध में बहुत कुछ तो अभी तक रहस्य के पर्दे ही में छिपा है पर इतना अवश्य मालूम है कि कल्पना में सचेत और अचेत मन दोनों ही का संयोग रहता है। अधिक ठीक तो यह कहना होगा कि उच्चश्रेणी का अधिकांश मानसिक काम अन्तश्चेतना के भीतर होता है। मनोविज्ञान वेत्ताओं ने इसके बहुत से प्रमाण संग्रह किये हैं। इसका उत्तम दृष्टान्त हैमिल्टन द्वारा की गयी एक गणित-सम्बन्धी खोज है। कोई पन्द्रह वर्ष तक वह एक प्रश्नको हल करने में लगे रहे पर सफलता न मिली। एक दिन, जब वह अपनी पत्नी के साथ टहल रहे थे, उनको ऐसा जान पड़ा कि विचार-सम्बन्धी बिजली का घेरा बन्द हो गया

और उससे जो चिनगारियाँ निकलीं वह मौलिक समीकरण थे जिनकी तलाश में वे वर्षों से थे। उन्होंने वहां जेब से एक नोट-बुक निकाला और उन समीकरणों को लिख लिया। इसका एक बड़ा विचित्र उदाहरण चार्लट ब्रॉंट (Charlotte Boronte) के जीवन में मिलता है। उसकी लिखी एक पुस्तक में एक पात्र ने दवा की एक खुराक के साथ कुछ अफीम खा ली। उसके बाद उस पात्र के मन और शरीर की दशा का जो वर्णन उसने पुस्तक में किया है वह इतना सत्य है कि उसे पढ़ने के बाद लेखिका के एक मित्र ने उससे पूछा कि क्या कभी उसने अफीम खाई थी। चार्लट ब्रांट ने उत्तर दिया कि उसने अफीम कभी नहीं खाई और बतलाया कि अफीम खा लेने के प्रभाव का जो वर्णन उसने लिखा वह उसको उसी क्रिया से मिला जिसका अवलम्बन वह सदा ऐसे मौकों पर लिया करती थी, जब उसे किसी ऐसी बात का वर्णन करना होता था, जो उसके निजी अनुभव में कभी न आई हो। ऐसे अवसरों पर वह कई रात सोने से पहले अपने इच्छित विषय पर गम्भीर चिन्तन किया करती थी। यहाँ तक कि अन्त में, शायद उसकी कहानी की प्रगति कई हफ्तों तक बन्द रहती थी। उसे एक दिन सवेरे नींद से जागने पर सब बातें साफ-साफ दिखाई पड़ने लगती थीं, मानों उसने उसे स्वयं अनुभव किया हो। उसके बाद उसका वर्णन अक्षरशः उसी तरह कर देती थी जैसी कि वह घटित हुई। नये विचारों को प्राप्त करने की, यह बड़ी पुरानी रीति है। पुराने जमाने के लोगों को जब कभी कोई गहन प्रश्न हल करना होता था तो रात को सोने से पहले वह उससे अपने दिमाग को भर लेते थे; क्योंकि उन्हें अनुभव से यह मालूम हुआ था कि ऐसा करने से एक दिन सवेरे उसका हल उन्हें मिल जायगा।

यद्यपि आधुनिक मनोविज्ञान ने अभी इतनी उन्नति नहीं की है कि वह उन नियमों या शर्तों की ठीक-ठीक व्याख्या कर सके

जो कल्पना-शक्ति के विकास के लिए पर्याप्त हैं, या उन साधनों का सुझाव कर सके जिनके द्वारा वे अवस्थायें इच्छानुसार पैदा की जा सकें, फिर भी मनोवैज्ञानिकों के निर्णय निश्चय ही कुछ ऐसी बातें बता सकते हैं जो मौलिकता के लिए आवश्यक और उपयोगी हैं। आगे इन्हीं नियमों का वर्णन किया गया है।

(८) कार्यक्षेत्र का नियत करना

कल्पनाशक्ति की उन्नतिके प्रयास में पहली सीढ़ी यह है कि अपने लिए इच्छा, आवश्यकता और योग्यता के अनुसार एक निश्चित विषय या कार्यक्षेत्र निर्धारित कर लिया जाय।

व्यायाम करने से सारे शरीर में बल का संचार होता है। हाथ, पैर और पुट्ठे सुडौल और दृढ बनते हैं और काम करने की क्षमता बढ जाती है। इसी प्रकार शायद आप सोचते होंगे कि यदि मन की शक्तियोंको उपयुक्त व्यायाम और अभ्यास द्वारा मज़बूत बना लिया जाय तो उनसे हर अवसर पर और हर काम में लाभ उठाया जा सकेगा। पर वास्तव में ऐसा नहीं होता। एक बड़ी विचित्र बात यह है कि मन की अधिकतर शक्तियाँ और क्रियायें विशेषोन्मुख—न कि व्यापक—होती हैं। अवधान, स्मृति, कल्पना इत्यादि सभी चुने हुए क्षेत्रों में समुन्नत हो सकती हैं, पर उनकी दक्षता उन विशिष्ट विषयों तक ही सीमित रहेगी। एक व्यक्ति गणित में चतुर है पर उसकी बुद्धि शायद व्याकरण और इतिहास में नहीं चल पाता। एक मनुष्य अपने व्यवसाय या अपने प्रिय विषय से सम्बन्ध रखने वाली छोटी-छोटी बातों को भी खूब याद रखता है, जब कि वह दूसरी बातें बहुत प्रयत्न करने पर भी स्मरण नहीं रख सकता बल्कि शीघ्र ही भूल जाता है। इसी तरह किसी मनुष्य की कल्पना भी उसके विशेष विषय के सम्बन्ध में नये नये विचार पैदा करने की योग्यता प्राप्त कर सकती

है, पर यह आशा करना ठीक न होगा कि एक विषय में कल्पना-शक्ति बढ़ाने से वह क्षमता दूसरे विषयों में भी उपयोगी सिद्ध होगी।

मन की समस्त शक्तियाँ और क्रियायें चुने हुए विशेष क्षेत्रों में ही उन्नति कर सकती हैं—उनकी दक्षता बहुत ही विशेष ढंग से काम करती है। यह बात कल्पना के सम्बन्ध में भी लागू होती है, बल्कि सच तो यह है कि कल्पना जितनी ही उच्चकोटि की शक्ति है उतनी ही विशेष Specialised ढंग से वह काम करती है।

जिस तरह स्मृति पर शासन करने में, या उसकी उन्नति करने में, हमारा लक्ष्य यह नहीं रहता कि एक व्यापक धारणा शक्ति पैदा करें, बल्कि स्मृति के कुछ विशेष कार्यों में अपनी दक्षता को बढ़ाना रहता है, इसी प्रकार कल्पना को अपने अधिकार में रखने और उस पर शासन करने में हमारा ध्येय कुछ मनोवांछित दिशाओं में अधिकाधिक योग्यता प्राप्त करना रहता है। एक उपन्यास लेखक का मन जो अपने चुने हुए काम में अत्यन्त उपजाऊ है, यांत्रिक आविष्कारों में या युद्ध-कौशल में बिल्कुल बंजर या ऊसर हो सकता है। हमको यह बात ध्यान में रखनी चाहिए और उसी के अनुसार प्रबन्ध करना चाहिए कि कल्पना का काम अत्यन्त ही विशेष प्रकार Specialised का होता है। कदाचित् इसका एक प्रसिद्ध उदाहरण चार्लस डार्विन था, जिसने अपने जीवन के अंतिम दिनों में यह शोक प्रगट किया कि वर्षों मन को विज्ञान पर एकाग्र करने के कारण वह कविता का प्रेम बिल्कुल ही खो बैठा। यह आवश्यक नहीं है कि हम सब को ऐसा ही मूल्य चुकाना पड़े परन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि अगर हमको चावल पैदा करना है तो हम खेत में बाजरा कदापि न बोयेंगे। यह बात कल्पना पर भी लागू होती है। पहले आप तय कर लीजिए कि किस तरह की फ़सल पैदा करनी है, तब उचित प्रकारके बीज अपने मन के खेत

में बो दीजिये, फिर उनको हर तरह से खाद देने, सोचने और बढ़ाने में लग जाइये।

(९) कल्पना की सामग्री

दूसरी बात जो ध्यान में रखने योग्य है वह है कि रचनात्मक कल्पना के काममें कोई चीज़ बिलकुल मौलिक या सर्वथा नई नहीं होती। भौतिक दुनियाँ की भांति मानसिक दुनियाँ में भी मनुष्य कोई नई चीज़ शून्यसे उत्पन्न नहीं कर सकता। वह केवल इतना ही कर सकता है कि जो कुछ पहले से मौजूद है उसमें सुधार या उलट फेर करके उसे नये क्रम या रूप में उपस्थित कर दे। कवियों या उपन्यासकारों की उत्तम से उत्तम रचनायें भी उसी विचार सामग्री से बनती हैं जो पहले से उनके क़ब्ज़े में रहती हैं।

कुछ लोग यह समझ लेते हैं कि ज्ञान या जानकारी का कल्पना से कोई सम्बन्ध नहीं है और मानसिक रचना का अर्थ है कि कुछ नहीं में से कुछ पैदा कर लिया जाय। यह तो सच है कि निर्जीव दिखावटी जानकारी काल्पनिक रचना की शत्रु हो सकती है; पर जीता-जागता ज्ञान जो कि पचकर आपके मन का एक अंग बन गया है, कल्पना का प्राणाधार है। स्कॉट, डार्विन आदि बड़े-बड़े लेखक और वैज्ञानिकों ने बड़े परिश्रमसे अपने विशेष विषयों में विश्व-कोष की सी जानकारी संचित की थी। इन लोगों ने अपनी नई रचनाओंकी सामग्री तथ्योंकी कड़ी चट्टानों से खोद-कर निकाली थी। उनके उद्भव की नींव उनके कठिन परिश्रम पर ही बनी थी।

बहुधा एक नौसिखिया यह मान लेने की भूल कर बैठता है कि रचनात्मक कामका कठिन और ठीक-ठीक परिश्रमसे कोई सम्बन्ध नहीं है। उसका यह भ्रम घातक है। कोई भी व्यक्ति किसी विषय के बारेमें अच्छी तरह नहीं विचार सकता जब तक कि वह उसे अच्छी तरह जानता नहीं। बिना यथेष्ट ज्ञान के नये विचार या तो

मन में प्रगट ही नहीं होते और अगर होते भी हैं तो इतनी थोड़ी मात्रा में कि उनका कोई मूल्य नहीं। सदैव तथ्य ही नये विचारों के सबसे अच्छे प्रवर्तक होते हैं। इसलिए यदि कभी आप नये विचारों के अभाव मे रुक जाय तो तथ्यों की ओर ध्यान दीजिए। यही आपके लिए नये साधन और काम करने के नये ढंग मालूम करने की सबसे उत्तम रीति है। कुछ वर्ष हुए एक प्रयोग किया गया था जिसमे यह पता चला कि लोगों के पास जो ज्ञान या जानकारी है उसकी मात्रा और उनकी रचनात्मक या मौलिक रूप से विचार करने की योग्यता में एक निश्चित सम्बन्ध है। प्रतिभावान् पुरुषों की मानसिक क्रियाओं के बारे मे हम जो कुछ जानते हैं उससे भी इसी नतीजे की पुष्टि होती है। शेक्सपियर ने अपनी अधिकतर रचनाओं की सामग्री पुरानी किताबों और कहानियों में से निकाली थीं। कितने ही आदमियों ने, जिनकी कृतियों की उड़ान विस्तार और नवीनता में दैवी भेंट की झलक दीख पड़ती है अपनी सफलता को अनगिनत घण्टों तक निहायत सूखे और अरोचक पदार्थों का अध्ययन करके और उनमें से तथ्यों को चुन कर ही प्राप्त किया। कार्लाइल बड़े कड़े परिश्रमसे लिखता था और अपनी इतिहास की बड़ी-बड़ी पुस्तकों का एक-एक पृष्ठ लिखने से पहले उस विषय की जानी हुई सभी प्रामाणिक पुस्तकें देख लेता था। डाक्टर जान्सन का कहना था कि एक पुस्तक के लिखने के लिए लेखक को आधा पुस्तकालय उलट डालना चाहिए। मानसिक पुतलीघर मे से सुन्दर और नवीन पदार्थ तभी तैयार होकर निकल सकते हैं जब उसमे उत्तम कच्चा माल प्रचुर मात्रामें पहुँचाया जाय।

(१०) विस्तार पूर्वक विश्लेषण

नये विचार पैदा करने के लिए तीसरा नियम यह है कि जमा की हुई मानसिक सामग्री या प्रश्न के तथ्यों पर गहरा

सोच विचार किया जाय और उनका विस्तार पूर्वक विश्लेषण किया जाय।

कल्पना तभी दो या अधिक प्रतिमाओं को मिलाकर एक कर सकती है और उनमें से एक नया विचार पैदा कर सकती है। जब उन तथ्यों को जिनसे विषय का सम्बन्ध है भली भाँति समझ लिया जाय और उनका मूल्य आँक लिया जाय। जितने अधिक स्पष्ट और चमकीले आपके विचार होंगे उतनी ही सुगमता से वह जुड़-कर नये विचार बना सकेंगे।

जाने हुए तथ्यों का सविस्तर विश्लेषण करना कई तरह से लाभकारी है। एक तो यह उन विचारों को, जो मन में, पहलेसे मौजूद हैं, क्रमबद्ध करता है। दूसरे यह नये तथ्यों की खोज में जिनका अब तक पता नहीं, सहायक होता है, जैसे कि रासायनिक विश्लेषण से हमें रेडियम मिल गया। तीसरे यह मन को उपमायें या समानतायें ढूँढ लेने में मदद देता है, क्योंकि बहुधा बड़ी महत्वपूर्ण समानतायें बड़े विचित्र ढङ्ग से छिपी रहती हैं। चौथे यह एक सच्चे सश्लेषण के लिए मार्ग खोल देता है। सच तो यह है कि सावधानी से किये गये कुल विश्लेषण में प्रायः सदैव ही नवीन परिणामोंका निकालना शामिल रहता है।

(११) मनन और चिंतन

जब आप अपने काम करने की मेज छोड़े तभी अपने कार्य को न छोड़ दें। अगर आपकी इच्छा केवल साधारण जीविका उपार्जन करना हो है तो ऐसा करना बिल्कुल ठीक हो सकता है। पर यदि आप काल्पनिक दूरदर्शिता प्राप्त करना चाहते हैं तो ऐसा करना कदापि उचित नहीं। आपको अपने काम को अपने साथ मन में लिए रहना चाहिये। अकेले रहने के अवसरों को अत्यन्त मूल्यवान समझकर उपयोग कीजिये। ऐसे मौके पाने का प्रयत्न

कीजिये। यही अवसर हैं जिनके द्वारा आप नित्य कर्म के विशेषज्ञ से बढ़कर—जो कि कोई भी काम करने वाला कुछ समय बीतने पर बन जाता है—एक उत्पादक विशेषज्ञ बन सकते हैं।

जब आप अपनी मेज़ और उन विस्तृत कार्यों से जिनका प्रतीक आपकी मेज़ है, छुट्टी पावें तो अपने सारे के सारे काम को साथ न लिये रहें—उसकी छोटी बातों को अथवा दैनिक कर्मों को साथ नहीं रखना चाहिये। केवल बड़े-बड़े प्रश्नों के ही सम्बन्ध में विचार करना चाहिए। उसके बड़े बड़े सम्बन्धों को और अच्छी तरह समझने का प्रयत्न कीजिये। यह सोचिये कि उसमें क्या क्या सुधार किए जा सकते हैं। ऐसा करने में आपका अभिप्राय ऐसी आदत डालना है जिससे मनका कार्य और प्रवाह आपके अभीष्ट विषय की ओर बिना रोक टोक के चलता रहे। कल्पना के क्षेत्र में बहुत सी सफलताओं का रहस्य छुट्टी के घंटों का उचित उपयोग ही है। कुछ लेखक हर रोज अपना थोड़ा सा समय इस काम के लिये अलग निकाल रखते हैं जब वह अपने काम पर एकाग्र मन से ध्यान लगाते हैं चाहे वह एक लाइन लिखें या न लिखें। आपको ठीक ऐसा रखने की आवश्यकता तो नहीं, पर याद रखने की बात यह है कि ये लोग एक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक नियम को काम में ला रहे हैं जिसका आपको भी आदर और प्रयोग करना चाहिये।

चिन्तन, मनन और कड़े परिश्रम के ही द्वारा सुविख्यात लेखकों ने अपनी रचनायें लिखीं। ऐडम स्मिथ ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक वेल्थ ऑफ नेशन्स (Wealth of Nations) राष्ट्रों की सम्पत्ति के लिखने में दस वर्ष और (Gibbon) ने अपना 'रोमन साम्राज्य की अवनति और पतन' (Decline and fall of the Roman Empire) नामक ग्रंथ लिखने में बीस वर्ष लगाये। जब

एक कवियित्री ने वर्ड्स्वर्थ को बताया कि उसने अपने एक काव्य की रचना मे ६ घन्टे व्यतीत किये तो वर्ड्स्वर्थ ने उत्तर दिया कि वह स्वयं उसमें ६ हफ्ते लगाता। रड्यार्ड किप्लिंग ने अपनी छोटी-छोटी कहानियों को, जो कि उत्कृष्ट कृतियाँ हैं, बड़ी कड़ी मेहनत से लिखा। उनके लिखने की क्रिया का जिक्र करते हुए उसने लिखा कि वह उन कहानियों को लिख लेने पर वैसे ही पड़ा रहने देता था, फिर कुछ समय बाद उन्हें पढ़कर उनके अनावश्यक शब्दों, वाक्यों और प्रकरणों को काली रोशनाई और बुरुश से काला करके मिटा दिया करता था। इस तरह उसकी कहानियाँ तीन से पाँच वर्ष तक पड़ी रहती थीं और हर साल उत्तरोत्तर छोटी होती जाती थीं। नेपियर बीस साल तक कठिन परिश्रम करता रहा तब कहीं जाकर लघुगणक (Logarithm) का अनुसन्धान कर पाया।

(१२) तथ्यों से एक दूसरे का सामना कीजिए

तथ्यों का एक दूसरे से सामना करने से बहुत से नये विचार उत्पन्न हो जाते हैं। जैसा हमने ऊपर लिखा है नये विचार शून्य में से नहीं आजाते, वरन् पुराने विचारों के नवीन योगों से बनते हैं। अतएव यदि एक तथ्य का दूसरे तथ्य से सामना करना नये विचारों को उत्पन्न करने की एक अच्छी रीति है, तो हमें चाहिये कि इस युक्ति को निश्चित ढंग से अपनावें। एक मनोवैज्ञानिक डाक्टर लार्ड (Dr. Lord) ने इस रीति की सिफारिश की है। उनकी सलाह है कि अपने कारोबार में काम आने वाली २० या अधिक महत्त्वपूर्ण वस्तुओं के नाम एक कागज पर लिख लीजिए। जैसे-जैसे वह याद आती जायं उनके नाम लिखते जाइये, किसी विशेष क्रम की आवश्यकता नहीं, पर उन सब पर एक से आरम्भ करके अपनी सूची के अन्त तक नम्बर डालते जाइये। तब उसके बाद नं० १ और नं० २ पर मन में ध्यान दीजिये। यह देखिये कि उन

दोनों में क्या सम्बन्ध है, वे एक दूसरे पर क्या प्रभाव डालते हैं, और उनके आपस के सम्बन्धों में क्या सुधार किया जा सकता है।

इसी तरह नं० १ का अपनी सूची के तीसरे, चौथे इत्यादि सब नम्बरों के साथ बारी-बारी से अध्ययन कीजिये। इस के बाद नं० २ और ३, २ और ४ इत्यादि को एक साथ जांचिये। इसी तरह सूची के सब पदार्थों को बारी-बारी से एक साथ देखिये और विचार कीजिये कि उनमें क्या नये संबन्ध स्थापित किये जा सकते हैं।

एक नामी मनोवैज्ञानिक डा० एलमरगेट्स (Elmergates) का दावा है कि उसने इस विधि से बहुत आविष्कारों को सोच निकाला. जिससे उसे हजारों डालरों का लाभ हुआ। यहाँ यह न समझना चाहिये कि एक तथ्य का दूसरे से सामना करने से तुरन्त ही नया विचार मिल जायगा। इस प्रकार की तुलना करने में कड़े परिश्रम, धैर्य और अध्यवसाय की आवश्यकता होती है और सफलता उन्हीं को मिलती है जो अन्त तक खोज में डटे रहते हैं।

(१३) काम के बाद विराम

मौलिकता की चौथी शर्त यह है, कि कुछ देर मानसिक परिश्रम, गहरी छानबीन और चिन्तन करने के बाद या तो मानसिक क्रिया को कुछ समय के लिए बन्द कर दिया जाय या दिमाग को किसी दूसरे विषय में लगाया जाय।

देखने में आता है कि बहुत देर तक अचेत काम होने के उपरान्त ही आकस्मिक उद्भास पैदा होते हैं। बिलकुल निष्फल दीख पड़ने वाले उद्योग के बाद कुछ दिन बीत जाने पर ही वे प्राप्त होते हैं। इसके कुछ उदाहरण ऊपर दिये जा चुके हैं। एक बार क्लार्क मैक्स्वेल ने प्रोफेसर टाम्सन को एक साध्य

Proposition दिया जिस पर मैक्स्वेल स्वयं बहुत दिन से लगे हुए थे। टाम्सन ने मैक्स्वेल को एक लम्बा पत्र लिखा जिसमें इसके सिद्ध करने के अनेक सुझाव थे, पर कोई भी ठीक नहीं उतरता था। कुछ दिन बाद जब टाम्सन रेल में सफर कर रहा था तो उसे इच्छित लब्ध फल Solution मिल गया। सर वाल्टर स्कौट जब कभी दिन के समय कमी कठिनाई को हल करने में असफल रह जाता था तो वह सदा यह आशा रखता था कि अगले दिन प्रातःकाल उसे उस प्रश्न का हल मिल जायगा। उसे अपने प्रात:काल के विचारों पर बड़ा भरोसा रहता था और यदि उसे दिन में काम करने के समय कोई मनोवांछित विचार न मिल पाता तो वह कहा करता था कि कोई चिन्ता नहीं, मैं कल सवेरे सात बजे उसे पा जाऊँगा। हैमिल्टन, चार्लोट ब्रांट और टाम्सन को तुरन्त ही इच्छित फल न प्राप्त हो सका। उसका कारण यही था कि अचेत क्रियाओं को अपना काम पूरा करने के लिए समय की आवश्यकता थी और ज्यों ही वह काम पूरा हुआ उन्होंने उसके परिणाम या फल को तुरन्त ही सचेत मन में भेज दिया। परिश्रम और विश्राम को बारी-बारी से दुहराना ही मौलिकता की कुञ्जी है।

बड़े प्रतिभावान व्यक्ति भी उत्कृष्ट मौलिक विचारों को इच्छानुसार नहीं बुला सकते, और ऐसा जान पड़ता है कि बहुत देर तक किसी विषय पर मन को एकाग्र करना एक मनोवैज्ञानिक भूल है। ठीक तरीका तो यह है कि कुछ देर तक ध्यानपूर्वक काम किया जाय, उसके बाद फिर किसी दूसरे चित्ताकर्षक काम में मन लगाया जाय। फ्रांस के एक लेखक का कहना था कि "जब से मैंने पढ़ना बन्द किया तब से मैंने बहुत कुछ सीखा है, और सच तो यह है कि हमारी फुरसत के वक्त की चहलकदमियों ही में हमारे बड़े बड़े मानसिक और नैतिक अनुसन्धान किये जाते हैं।" प्रोफेसर महाफो Mahaffy

नरनड काट Rene Descetes के सम्बन्ध में लिखा है कि वह बहुत सोया करता था और उत्तम कार्य के उत्पादन के लिए निरुद्योगता की विशेष कर सिफारिश किया करता था। प्रोफेसर विलियम जेम्स ने अध्यापकों को व्याख्यान देते हुए बताया कि उनके एक दोस्त जब किसी विशेष काम में सफलता प्राप्त करने के इच्छुक होते थे तो कभी दूसरे विषय के सम्बन्ध में सोचने लगते थे और इसका परिणाम अच्छा ही होता था।

उचित अंशों में दिमागी बेकारी अन्तश्चेतना को काम करने का मौका देता है। इसके विपरीत, दिमागी मेहनत, जिसमें आपकी आँखें और दिमाग निरन्तर लगे रहते हैं, आपके जाग्रत मानसिक जीवन के सारे क्षेत्र पर अधिकार जमा लेता है जिसके कारण अचेत मन को स्वयं काम करने का या सचेत मन के पास सन्देश भेजने का बहुत कम अवसर मिलता है। इस माने में किसी वैज्ञानिक लब्धफल Solution को पाने के लिए या कविता का ऐसा पद लिख डालने के लिए जो दिमाग में उमड़ रहा है कड़ा मानसिक परिश्रम करना मनोविज्ञान के नियमों के बिल्कुल विरुद्ध है, जब तक मन को बेकारी या मनोरंजन द्वारा विश्राम न दिया जाय। अचेत मन को इतना अवसर अवश्य मिलना चाहिए कि वह अपनी रचनात्मक शक्ति का प्रयोग कर सके।

शायद यह मानने के लिए कोई आसानी से तैयार न होगा कि बेकारी में भी कोई गुण है क्योंकि सर्वमान्य सिद्धान्त तो यही है कि मनुष्य को सदा काम करते रहना चाहिए। पर क्या काम के मूल्य के सम्बन्ध में जो प्रचलित विचार हैं वह अक्षरशः सत्य है? यह तो अवश्य सत्य है कि परिश्रम से चरित्र का अनुशासन होता है मगर दिमागी-तरक्की के लिए रोजमर्रा के काम में डूबे रहना या किसी प्रकार की खोज में निरन्तर बिना किसी विषय-परिवर्तन

का विश्राम के साथ रहना सरासर भूल है। किसी एक विषय पर मन को बहुत देर तक एकाग्र किए रहने से दिमाग़ न केवल थक जाता है बल्कि एक ही दिशा में सोचते रहने के कारण उसमें बहुधा ऐसी लकीरें पड़ जाती हैं जो उसकी उर्वर शक्ति को दबा देती हैं। एक बुद्धिमान विचारक जो किसी प्रकार के अनुसन्धान करने के लिए उत्सुक है, दूसरे सब काम छोड़कर एक ही विषय के पीछे पड़कर और उसीमें निरन्तर अविराम ढंग से लगे रह कर अपने दिमाग़ को कभी नहीं थका डालता, बल्कि वह जानता है कि सावधानी से काम करने के बाद उस ओर से सचेत मन को हटा लेना चाहिए जिससे इच्छित फल के पैदा करने में अन्तश्चेतना भी उचित रूप में भाग ले सके।

"काम के बाद विराम" के नियम का एक और कारण यह है, जैसा कि प्रकृति में और जगह भी देखने में आता है—कि मानसिक क्षेत्र में भी आवर्तन (Rhythm या Periodicity) का राज्य है। दिन के बाद रात आती है, समुद्र की लहरों में चढ़ाव के बाद उतार होता है, दिल फैलने के बाद सिकुड़ जाता है—इसी तरह दिमाग़ के भी फैलने और सिकुड़ने के समय होते हैं जो बारी-बारी से प्रगट होते रहते हैं। कुछ विशेष समय ऐसे होते हैं जब कि मन की उर्वराशक्ति तीव्र होती है और नये विचार गहराइयों में से बुलबुलों की तरह उठ कर निकल आते हैं। इसके विपरीत कुछ समय ऐसे होते हैं जब कि मन की उर्वराशक्ति शिथिल होती है और उसमें नये विचार नहीं उठते। ऐसी शिथिलता के समय में मन के घोड़े को एड़ लगा कर जबरदस्ती उससे नये विचार पैदा करने की कोशिश करना व्यर्थ है। ऐसे काल में न तो बेकार कोशिश करके शक्ति को नष्ट करना चाहिए और न असफलता के कारण निराश होना या अपनी खोज ही को छोड़ बैठना चाहिए—बल्कि आशा और उत्साह के साथ उर्वर काल के आने

की प्रतीक्षा करनी चाहिए। मानस-सागर में ज्वार-भाटा किस-किस समय आता है इसका तो अभी ठीक-ठीक पता नहीं है मगर निरूपण और अनुभव से सम्भव है, हर व्यक्ति अपने लिए उर्वर कालों का पता लगा ले और फिर उनसे लाभ उठा सके।

(१४) संवेग-शक्ति

कल्पना शक्ति बढ़ाने का पाँचवाँ उपाय यह है कि अपने चुने हुए विषय या कार्य क्षेत्र पर अपनी भावना, अनुराग और ध्यान को केन्द्रित किया जाय। रुचि या शौक की ताकत न केवल सचेत मन को संचालित करती है बल्कि यह अचेत मन पर प्रभाव डालने और उसको प्रेरित करने का भी एक उत्तम साधन है। एक चुने हुए काम के प्रति तीव्र अनुराग मन की तमाम बिखरी हुई शक्तियों को एकत्रित और संगठित कर देता है जिससे उनका बल कई गुना बढ़ जाता है। भावना या उत्साह ही से वह शक्ति पैदा होती है जिसके द्वारा सचेत मन चुने हुए विषय में कड़ा परिश्रम करता है। इसी शक्ति से उत्तेजित होकर अन्तरमन के भीतर पुराने विचार आपस में मिल कर नये जुट बन जाते हैं और इसी के कारण वे नये जुट अन्तश्चेतना की सतह को पार कर बाह्य मनमें प्रगट हो जाते हैं, जैसे पानी के अणु (Molecules) ताप बल पाकर पानी की सतह से बाहर निकल कर भाप का रूप धारण कर वायुमण्डल में आ जाते हैं। यही वह शक्ति है जो मन की शक्तियों के अस्तव्यस्त अंगों को एक दिशा में कर देती है जिससे मन एक प्रबल चुम्बक की तरह अपने अनुरूप पदार्थों, विचारों और तथ्यों को अपनी ओर खींच लेता है और उनसे नये जुट बना देता है।

(१५) रसायन शास्त्र की उपमा

मन द्वारा नये विचारों के उत्पादन की तुलना हम रासायनिक चेत्र में नये पदार्थों के पैदा करने की क्रिया से कर सकते हैं। कुछ रासायनिक-तत्त्वों या यौगिकों में परस्पर इतना प्रबल खिंचाव होता है कि अगर वे केवल एक दूसरे के सम्पर्क में आ जाते हैं तो तुरन्त ही रासायनिक ढंग से मिलकर एक या अधिक नये पदार्थों को उत्पन्न कर देते हैं। उनके बीच रासायनिक क्रिया मानों आपसे आप हो जाती है। लेकिन कुछ दूसरे पदार्थ ऐसे होते हैं जिनमें आपस में खिंचाव होते हुए भी रासायनिक संयोग उस समय तक नहीं होता जब तक कि उन्हें कोई बाहरी उत्तेजना न मिले जिसके द्वारा ताप, प्रकाश या बिजली के रूपमें शक्ति पहुँचायी जाय जो रासायनिक क्रिया को आरम्भ कर दे। इस सम्बन्ध में रसायन शास्त्र के ज्ञाताओं को याद होगा कि वे किस प्रकार से प्रयोगशाला में भिन्न-प्रकार के पदार्थ बनाया करते थे—वहाँ पर परख नली में रासायनिक सामग्री रहती थी जिसको वे काँच की डंडीसे चलाते रहते थे और आवश्यक गर्मी पहुँचाने के लिए लैम्प या बनर रहता था।

क्या ही अच्छा होता यदि मनुष्य के मनमें नये विचार पहले प्रकार की रासायनिक क्रियाओं की तरह ही पैदा हो सकते, यानी आपसे आप, बिना परिश्रम के। मगर वास्तव में ऐसा नहीं होता बल्कि नये विचारों के पैदा होने की क्रिया तो दूसरे प्रकार के रासायनिक परिवर्तनों के समान है जिसमें कि नये पदार्थोंको बनानेके लिए रासायनिक पदार्थोंके अतिरिक्त उनको क्षोभक (Stirrer) और ज्वालक (Bunsen Burner भी चाहिए। मनकी प्रयोगशालामें रासायनिक पदार्थ तो वे तथ्य. (Facts) अनुभव या ज्ञान

हैं जो अवलोकन, निरीक्षण, वार्त्तालाप, अध्ययन तथा दूसरे उपायों द्वारा संग्रह किये गये हैं। चलाना या हिलाना इकट्ठा किए हुए तथ्योंका मन द्वारा मनन तथा विश्लेषण है, और वह शक्ति जो रासायनिक क्रिया को आरम्भ करती है और नये यौगिकों को सम्मत्र करता है। किसी चित्ताकर्षक रुचि या चुम्बकीय लक्ष्य से उत्पन्न होती है। नये विचार शून्यमें से तो पैदा हो ही नहीं सकते। इसलिए ज्ञान का एक बड़ा भंडार रखने का मूल्य तो स्पष्ट ही हो जायगा। दूसरे इन तथ्यों को मनमें इतने ध्यान से घुमाना, उन पर सोच विचार करना, उनको ग्रहण करना और उनका विश्लेषण करना चाहिए ताकि समय पूरा होने पर अन्तश्चेतना उन्हें सचेत मन में नये व्यूहों के रूप में पुनरुद्भावन कर सके। और अन्तिम बात यह है कि एक हृदयग्राही शौक या लक्ष्य होना चाहिए जो न केवल आपको अपने विषय सम्बन्धी जानकारी इकट्ठा करने और पचाने में मदद देगा बल्कि यह शक्ति भी प्रदान करेगा जो पुराने विचारों में से नये जुट्ट पैदा करने के लिए परमावश्यक है।

कदाचित इस बात के मान लेने में कोई कठिनाई न होगी कि नये विचार अकारण या अकस्मात नहीं बन सकते बल्कि किसी उद्देश्य या लक्ष्य द्वारा निर्दिष्ट किये जाते हैं। इसे दूसरे शब्दोंमें यों कह सकते हैं कि कल्पना की क्रिया उद्देश्य सम्बन्धी विचारसे ही आरम्भ होती है। इस निर्देशक विचार के साथ-साथ उसे उद्देश्य पूर्ति के लिए इच्छा भी सम्मिलित रहती है। मनमें जमा किये हुए और समय समय पर उठने वाले विचारोंमें से जो निर्देशक विचार के अनुरूप होते हैं उनको मन काम में ले आता है और बाकी जो इस विचारके अनुरूप नहीं होते या किसी दूसरे कारणसे अरुचिकर होते हैं उन्हें मन छोड़ देता है। कल्पना शक्ति बढ़ानेकी सारी क्रिया इस बात पर अवलम्बित है कि एक मानसिक झुकाव पैदा

किया जाय। मनुष्य किसी वांछित या विशेष प्रकारके कल्पना फल को प्राप्त करनेमें अपने चित्त को लगाता है या यों कहिये कि किसी अभीष्ट विषय या क्षेत्रमें अपनी कल्पना शक्ति को उन्नत करना चाहता है और धीरे-धीरे उसमें एक विशेष प्रकार की अभिरुचि या अनुराग पैदा कर लेता है। वह अपनी इच्छा शक्ति या व्यवसाय या संकल्प (Will) को भी उसी इच्छित दिशा में संगठित कर लेता है। पूरी सफलता प्राप्त करनेमें वर्षों लग सकते हैं पर अन्तमें वह व्यक्ति अपने विषय या चुने हुए क्षेत्र में ऐसी तीव्र कल्पना शक्ति, विचारों का उपजाऊपन और विकल्पों या पक्षान्तरों (Alternatives) का ज्ञान प्राप्त कर लेता है जिन्हें देखकर एक नौसिखिया आश्चर्यचकित रह जाता है।

जब हम इस बात की छान बीन करते हैं कि मन के भीतर ही भीतर क्या चीज है जो पुराने विचारों को मिलाकर नये विचारोंकी उत्पत्ति करती है तो हमें पता चलता है कि विचारों के संयोग का सबसे फलोत्पादक कारण उनकी समानता या सादृश्य की शक्ति ही है। इस बातको हम इस तरह समझ सकते हैं कि आपके जीवन में कोई काम, व्यापार मनबहलाव का (Hobby) धन्धा या योजना है जिसके लिये आप बड़े उत्सुक हैं। बहुत अच्छा! आपके प्रिय उद्देश्य में, चाहे वह कुछ भी हो, आपकी जो गहरी अभिरुचि है वह एक चुम्बक का काम करती है। उस चुम्बक को आप बार-बार अपने संचित अनुभव में, जिसे स्मृति कहते हैं, डालते हैं, तब वहीं चुम्बक खींच कर अपने सदृश पदार्थों को निकाल लेता है और साथही साथ उन दूसरी चीजों को अलग कर देता है जिनसे प्रबल भिन्नता या अन्तर है। आप अपने दैनिक जीवन के अनुभवों को भी इस चुम्बककी सीमाके अन्दर लाते हैं तो वही फल मिलता है। सम्भव है कि आप जान-बूझ कर ऐसा न करते हों। अधि-

कतर यह क्रिया अनजान में आप के अन्तर मन में ही होती रहती है। पुराने विचारों में समानता और असमानता ढूँढ निकालना नये विचारों के उत्पादन की क्रिया का बड़ा अंश है।

दुनियामें हर अच्छी चीज को प्राप्त करने के लिए उसकी कीमत अदा करनी पड़ती है। इसी तरह कल्पना सम्बन्धी योग्यता प्राप्त करनेके लिए यह आवश्यक है कि आप अपने मन को जी जानसे किसी चुने हुए प्रिय काम में लगा दें। आप और हम शायद बाहर की सड़कों पर मीलों चले जाते हैं। वहाँ मनुष्यों के मुखड़े और उनका आना-जाना देखते हैं पर इन सबका हमारे ऊपर कोई असर नहीं होता। एक उपन्यासकार जो उसी जगह टहलने जाता है और उन्हीं दृश्यों को देखता है, जब घर लौटता है तो अपने साथ आधी दर्जन कहानियाँ आरम्भ करने के लिए नये विचार ले आता है। इसका कारण यह है कि वह अपने विशेष विषय पर ध्यान लगाये रहता है जिससे कि उसके मन पर पड़ी हुई एक गहरी छाप से उसे एक कहानी का मसाला मिल जाता है। एक आदमी वर्षों मोटरगाड़ी या रेडियो सेट चलाता है पर इस बात का जरा भी शौक अपने मन में नहीं लाता कि कैसे उनमें सुधार किया जा सकता है। एक दूसरा आदमी थोड़ा भी किसी यंत्र पर काम करता है तो उसके मन में तरह-तरह के विचार पैदा हो जाते हैं—चाहे वे असाध्य ही क्यों न हों—कि कैसे इस यंत्र की उन्नति की जाय या कैसे उसे एक और अच्छे नये ढंग से बनाया जाय। दोनों प्रकार के मनुष्यों में क्या अन्तर है? प्रधानतः यह कि वह अपने विषय में किस सीमा तक तल्लीन है? कल्पनाशक्ति की शिक्षा के लिए न केवल मनकी दूसरी शक्तियों की शिक्षा बल्कि भावनाओं का उचित प्रयोग और ठीक मानसिक वृत्ति का पैदा करना भी परमावश्यक है। दिमाग को सुचारु रूप से काम में लाने में जिन तत्वों

का हाथ रहता है उनमें भावना या संवेग (Emotion) का स्थान सर्वप्रधान है और भावना ही योग्यता और प्रतिभा का असली रहस्य है। अभिरुचि या अनुराग के रूप में भावना ही मन की संचालक शक्ति है और जिस काम से आप प्रेम करते हैं उसके चारों ओर आपकी कल्पना निरन्तर विचरती रहती है और उसी उद्योगिता से नये विचार उत्पन्न होते रहते हैं।

(१६) सहानुभूति

अनुराग से मिलता-जुलता भावना का एक और रूप है जो कल्पना के काम में—विशेषकर कवियों और उपन्यासकारों के लिए—बड़ा लाभदायक है। हमारा संकेत सहानुभूति की ओर है। सहानुभूति पैदा करना कल्पनाशक्ति बढ़ाने के लिए छठा उपाय है जिसका सुझाव हम यहाँ करते हैं। यहा पर सहानुभूति से हमारा तात्पर्य समवेदना या दूसरों के लिए जो कष्ट में हों, दुःख अनुभव करना नहीं है बल्कि कल्पना में दूसरों के संग होकर उनके भावों को समझना व महसूस करना है, चाहे वे किसी भी परिस्थिति में हों। हम उन लोगों के साथ-साथ भी महसूस कर सकते हैं जो नाच-गा रहे हों ठीक उसी प्रकार जैसे कि उन लोगों के साथ जो कि किसी कष्ट से पीड़ित हों। सहानुभूति का अभिप्राय है पात्र (Object) मे अपने को एक कर देना; उसके विचार और भावनाओं में जाकर बैठ जाना या यों कहिए कि थोड़ी देर के लिए अपने निजी व्यक्तित्व के बाहर निकलकर उसकी भावनाओं के भीतर घुस जाना। इसी के द्वारा हम दूसरों के हृदय के विचारों और भावनाओं को समझ सकते हैं जो दूसरी तरह तो हमारे लिए एक बन्द पुस्तक के समान

इस प्रकार अपने व्यक्तित्व के बाहर निकलना कल्पना ही का काम है; पर इसमें प्रवर्तक शक्ति सहानुभूति ही है। असल में

दोनों—सहानुभूति और कल्पना-मिल कर काम करते हैं और यह कहना कठिन है कि एक नये विचार के निर्माण में उनका अलग-अलग कितना हाथ है।

एक कवि मीठे संगीत और चमत्कारी विचारों से भरी हुई कवितायें तर्कशास्त्र या दलीलों द्वारा नहीं लिखता बल्कि भावना के जरिये से; और यह भावना सहानुभूति के रूप में प्रगट होती है। प्रकृति, सौन्दर्य, मानवीय आनन्द, दुःख शोक इत्यादि कवि की शीघ्रग्राही (Sensitive) बुद्धि पर अंकित हो जाते हैं, क्योंकि वह उदासीनता या विरोध का भाव रखने की जगह हर एक तथ्य में सम्पूर्ण मन और हृदय से घुस जाता है जिससे वह सचाई को इतने अच्छे तरीके से ग्रहण कर लेता है जितना वह और किसी साधन द्वारा न कर सकता।

किसी व्यवसायी या और काम करने वाले को भी सहानुभूति की उतनी ही आवश्यकता होती है जितनी एक कवि को। अन्तर केवल इतना ही है कि उनके सहानुभूति को प्रगट करने के ढंग और उद्देश्य अलग-अलग होते हैं। एक न्यायाधीश भी, जो कि फौजदारी के किसी पेचीदा मुकद्दमे की साक्षी को सुलझाना चाहता है, सहानुभूति ही को काम में लाता है कि अपने को अभियुक्त के मन और हृदय में रख सके और दोनों पक्षों के गवाहों की प्रवृत्तियों को समझ सके। अगर वह अपना फ़ैसला केवल बयानों को तराज़ू की भाँति तोल कर ही देता है तो संभव है कि वह अन्याय कर बैठे।

सच तो यह है कि यदि कोई व्यक्ति यह चाहता है कि उसके पास एक रचनात्मक मन हो जो नये विचारों के पैदा करने में फलदायक हो तो उसकी एक बड़ी आवश्यकता सहानुभूति है। उसमें दूसरों के साथ महसूस करने की योग्यता होनी चाहिये। इसी

भावना के साथ कल्पना भी रहती है। दोनो अभिन्न हैं। कल्पना-शक्ति की शिक्षा का सबसे बड़ा अंग यह है कि ठीक ठीक मानसिक और भावना सम्बन्धी गुण प्राप्त किए जायें।

शायद कुछ लोग यह प्रश्न करें कि सहानुभूति की शक्ति कैसे प्राप्त की जाय। कम से कम एक विषय में तो अवश्य ही आपके पास सहानुभूति पहले से मौजूद है—आपके प्रधान लक्ष्य या उद्देश्य के सम्बन्ध में। कोई बात जिसके बारे में आप उत्साहपूर्ण हैं, उसमें अवश्य ही आपको सहानुभूति होगी। जिस किसी चीज के प्रति आपके हृदय में उत्साह या उत्सुकता होगी उसमें आपको अवश्य ही सच्ची सहानुभूति भी होगी।

१७. आवश्यकता की पूर्ति.

कल्पना को जाग्रत करने का एक और उपाय यह है कि किसी आवश्यकता को पूरा करने या किसी उपयोगी पदार्थ के निर्माण करने या किसी सेवा के करने की इच्छा से अपनी भावना को उत्तेजित कीजिये। ऐसा शौक जिसे केवल अपने आत्म-सन्तोष के लिये आप पोषित करते हैं, निस्सन्देह आप की कल्पना को प्रोत्साहित करता है पर यदि उस शौक का किसी निजी या सामाजिक आवश्यकता के साथ गठबन्धन कर दे तो उसकी उत्तेजन शक्ति और भी प्रबल हो जायगी। अंग्रेजी की यह मशहूर कहावत है कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है।

(१८) सिद्धान्त बनाकर जांच करना

सातवों उपाय जो नये विचारों के बनाने में अथवा छिपे हुए लब्ध-फल (Solution) के खोज निकालने में बड़ी सहायता करता है, वह यह है कि जब कभी आपको किसी व्यवसाय या कारोबार सम्बन्धी समस्या की जाँच करनी हो तो आप हमेशा एक सिद्धान्त स्थिर करके, बल्कि अच्छा तो यह होगा कि कई

वैकल्पिक सिद्धान्त बना लें और फिर उन सब की एक एक करके परीक्षा करें। सचाई तक पहुँचने के लिए यह सब से अच्छा रास्ता है। यही तरीका तमाम वैज्ञानिक खोज में काम लाया जाता है।

डार्विन की आदत थी कि वह हर विषय में एक काल्पनिक सिद्धान्त बना लेता था। जो कुछ प्रमाण उसे निरूपण (Odservation) और प्रयोग द्वारा मिलते थे उन्हीं के आधार पर वह एक सिद्धान्त बना लेता था और फिर उसी की दिशा में काम करना आरम्भ कर देता था। हर पेशे और हर व्यवसाय में एक काल्पनिक सिद्धान्त बना लेने का नियम उतना ही उपयोगी है जितना एक वैज्ञानिक के लिए। मान लीजिये एक व्यवसायी के कारोबार के मुनाफे में कमी आ रही है और साधारण निरीक्षण करने पर उसका कोई कारण नहीं मिलता तो ऐसी दशा में क्या किया जाय? एक बार फिर जाँच कीजिये—इस बार एक निश्चित सिद्धान्त बनाकर—जैसे कि विज्ञापन में त्रुटि है या माल अच्छा नहीं है—और कुल मामले की इस दृष्टि से परीक्षा कीजिये। बिना एक कसौटी बनाये आप केवल अँधेरे में ही भटकते रहते हैं और अपनी जाँच के बाद अपने को वहीं का वहीं पाते हैं। पर एक सिद्धान्त बना लेने के बाद आप आत्म-विश्वास से आगे बढ़ते जाते हैं क्योंकि आपके पास एक माप या पैमाना है और यद्यपि आपको यह पता चले कि आपके विज्ञापन में कोई त्रुटि नहीं है मगर आशा इस बात की है कि आपको ठीक उस बात का पता चल जायगा जिसकी वजह से आपके लाभ में कमी हो रही है।

(१९) उपमा (ANALOGY)

नये विचार पैदा करने और विशेषकर प्रकृति के गुप्त नियमों को ढूँढ निकालने का आठवाँ उपाय उपमा का प्रयोग है।

हमारा मन अनुभव से विचार जमा करता है। ये विचार श्रेणियों में विभाजित किये जाते हैं, और हर श्रेणी के गुणों के लिए अलग माप मनाया जाता है। अधिकतर नये तथ्य जाने हुए तथ्यों से विभिन्नता ही के कारण पहचाने जाते हैं पर उनके अनुसन्धान का आरम्भ बहुधा समानता और सादृश्य की बातों ही से होता है। हमारी तमाम मानसिक क्रियाओं पर विभिन्नता और सादृश्य का शासन रहता है। यदि हम मंगल-ग्रह निवासियों की कल्पना करते हैं तो भी मानवीय शब्दों में सोचे बिना नहीं रह सकते—किन बातों में वे हमारे समान हैं और किन बातों में हमसे विभिन्न।

सच तो यह है कि उपमा (Analogo) हमारे तमाम सोचने की एक आवश्यक विधि है। और अक्सर अद्भुत प्रतिभावान् व्यक्ति केवल इतना ही करते हैं कि मानसिक या प्राकृतिक घटनाओं में ऐसी समानतायें या सम्बन्ध खोज निकालते हैं जिनका पहले पता न था। हैवलाक एलिस (Havelock Ellis) ने अपनी पुस्तक (Impressions and Comments) में इस बात को बड़ी स्पष्टता से यों लिखा है कि अरस्तू की यह कहावत बड़ी सुन्दर और सत्य है कि रूपक या उपमा का उस्ताद होना ही सबसे महत्त्वपूर्ण बात है। यह अद्भुत प्रतिभा (Genius) का लक्षण है क्योंकि इसका अर्थ है असमान चीजों में समानता ढूंढ़ निकालने की योग्यता। सब बड़े विचारक रूपक के उस्ताद हुए हैं क्योंकि स्पष्ट और चमकदार विचार सोचने में प्रतिभाओं का प्रयोग होता है और जिस विचारक की उपमायें धुँधली या हलकी हैं उसका सोचना भी धुँधला और हलका ही होगा। हम जिस उपमा को पसन्द करते हैं उसका कारण यह है कि इसकी सहायता से बहुत सी चीजों को छोटा (Reduce) करके हम एक कर देते हैं, और ऐसा करना दर्शनशास्त्र के निर्माण का एक आधार है। इसलिए यदि किया

मनुष्य का एक ऐसी रीति की तलाश है जिससे लाभदायक फल की आशा की जा सके तो उसे चाहिए कि अपने प्रश्न को एक असम्बद्ध (Isolated) समस्या ख्याल करने की जगह उसके सदृश तथ्यों को दूसरे क्षेत्रों में तलाश करें क्योंकि उनका अध्ययन अवश्य ही उसके मुख्य प्रश्न पर कुछ न कुछ प्रकाश डालेगा। विज्ञान का हर एक विद्यार्थी इस बात को जानता है कि अनुसन्धान के काम में उपमा या तुलना का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैज्ञानिक खोज में उपमा का इतना महत्त्व इसी कारण है कि संसार का निर्माण नियम और व्यवस्था पर है और उसमें एक न्याय-संगत योजना है।

(२०) नये विचारों की प्रतीक्षा कीजिए

मन का किसी भी शक्ति के प्रयोग करने में यह आवश्यक है कि उस पर विश्वास किया जाता और यह आशा की जाय कि वह अपने निर्धारित काम को कर सकेगी। अतएव कल्पना को उत्तेजित करने का नवां उपाय यह है कि कल्पना शक्ति पर भरोसा रक्खा जाय। आशापूर्वक नये विचारों की प्रतीक्षा कीजिये तो कठिन परिश्रम के बाद वे अवश्य आयेंगे। यह नियम हर प्रकार के नये विचार बनाने वालों पर लागू होता है, चाहे वह उपन्यासकार राजनीतिज्ञ, आविष्कारक अथवा कर्मचारी हो। मनुष्य के मन पर सूचना का गहरा प्रभाव पड़ता है। अगर आप अपने से कहें कि मैं यह काम नहीं कर सकता तो आप उसे न कर सकेंगे और अगर आप अपने से कहें कि यह काम मैं कर सकता हूँ तो-यदि दूसरी बात समान हों तो आप उसे कर सकेंगे। मन की ऐसी कोई क्रिया नहीं है जो आत्मसूचना द्वारा उत्तेजित और परिवर्द्धित न की जा सके।

(२१) कल्पना को काम में लाना

कुल मामला इतना आसान है कि इस बात का आश्चर्य होता है कि हमारी शिक्षा ने इस ओर क्यों इतना कम ध्यान दिया है। हम में से हर एक के समीप सैकड़ों ऐसी चीजें हैं, जिनके सम्बन्ध में हम यह प्रश्न कर सकते हैं कि क्या यह चीज किसी दूसरे ढंग से नहीं बनाई जा सकती? बीसियों काम, खेल कूद, मौज इत्यादि ऐसे हैं जिनके सम्बन्ध में हम में से प्रत्येक यह सवाल कर सकता है कि क्या यह काम दूसरे ढंग से नहीं किया जा सकता? वास्तव में हम यह कह सकते हैं कि वही मन सचमुच जीवित है जो सदा अपने से ऐसे प्रश्न पूछता रहता है। अधिकांश लोगों के मन तो कभी ऐसे प्रश्न पूछते ही नहीं; क्योंकि एक तो वे आलसी होते हैं, दूसरे उन्हें इस बात का भलीभांति पता नहीं होता कि ऐसे प्रश्न करते रहना ही आविष्कार की कुंजी है।

यह बात सब को विदित होनी चाहिये कि किसी भी समाज के लिये इस से बढ़कर उपयोगी दूसरा कार्य नहीं कि वह अपने नागरिकों की आविष्कार-कुशलता मे वृद्धि करे। क्योंकि शारीरिक जीवन की तरह मानसिक जीवन में भी गुणकारक परिवर्तन ही प्रगतिशील विकास का रहस्य है। यह सच है कि जानकारी या ज्ञान का सिखलाना सदा शिक्षा का एक प्रधान अंग रहेगा, क्योंकि प्रामाणिक तथ्यों की जानकारी के बिना नये तथ्यो के निर्माण की कोई आशा ही नहीं हो सकती। पर ज्ञान के सिखलाने को केवल एक साधन समझना चाहिये, न कि अन्तिम उद्देश्य। ज्ञानोपार्जन केवल इस आशय से होना चाहिये कि एक पूछताछ करने वाला, प्रयोगात्मक उत्पादक मन पैदा किया जाय- जो किसी भी संस्कृति की सबसे बड़ी पूंजी है।

इस का यह अर्थ नहीं कि हम उस समय तक हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें जब तक हमारी शिक्षाप्रणाली इस विचार को अपना-कर कार्य रूप में परिणत कर ले। हमें स्वयं ही यह निर्णय करना चाहिये कि अपने यांत्रिक, सामाजिक, घरेलू, राजनैतिक अथवा आर्थिक कार्यों को नये ढंग से करेंगे। हर छोटी-बड़ी चीज जिससे हमारा काम पड़ता हो, उसके सम्बन्ध में इस प्रकार के प्रश्न करने की आदत डालनी चाहिये कि क्या यह अनिवार्य है कि यह वस्तु इसी रूप में बनायी जाय? क्या इस वस्तु की बनावट दूसरी तरह की नहीं हो सकती? क्या यह काम किसी दूसरे ढंग से नहीं किया जा सकता? क्या यह पदार्थ या उतना काम उपयोगी है, जितना यह हो सकता है? क्या इस में कोई सुधार किया जा सकता है?

ऐसे प्रश्न करते रहने की आदत डालने के फल आपके और आपके समाज के लिये बड़े महत्त्व के हो सकते हैं।

नित्यप्रति के कामों के ढर्रे, बाग में फूलों की क्यारियों की बनावट इत्यादि, घर, कारखाने या दफ्तर के अनेकों काम ऐसे हैं, जिनमें उपयोगी परिवर्तन करने की आदत डाल कर आप अपनी कल्पना को बहुत बड़ी सीमा तक परिवर्द्धित कर सकते हैं, और जो मनुष्य सदा छोटे छोटे काल्पनिक परीक्षण करता रहता है वही अपने में ऐसी योग्यता पैदा कर लेता है कि आवश्यकता पड़ने पर वह अपनी कल्पना द्वारा बड़े चमत्कारी काम कर डालता है।

तेरहवाँ अध्याय

सीखने की प्रगति और मानसिक नव-स्फूर्ति

१. सीखने का वक्र

मनोवैज्ञानिकों ने बहुत से प्रयोग यह पता लगाने के लिए किये हैं कि अभ्यास द्वारा किसी हुनर के सीखने में किस प्रकार उन्नति होती जाती है अनुसंधान के लिये जो विषय चुने गये उनमें से कुछ ये थे—मशीन पर टाइप करना, तार द्वारा संवाद भेजना और लेना, या विशुद्ध मानसिक क्रियायें, जैसे किसी भाषा का पढ़ना सीखना। शिक्षार्थी की प्रगति को जांचने के लिये निम्नांकित कसौटियां प्रयुक्त की गयीं, काम की एक निश्चित मात्रा को पूरा करने में कितना समय लगता है; किसी निश्चित समय में काम की कितनी मात्रा की जा सकती है, जैसे दस मिनट में कितने शब्द टाइप किये जा सकते हैं, तीसरे काम की एक निश्चित मात्रा पूरी करने में कितनी भूलें होती हैं, जैसे १००० शब्द टाइप करने में कितनी अशुद्धिया होती हैं। संचित होती हुई ज्ञान-राशि के क्रमिक प्रभाव को जब हम रेखा-चित्र द्वारा प्रकट करते हैं तो सीखने का या अभ्यास का वक्र (Curve) एक प्रति रूपक आकार धारण कर लेता है जिसका कुछ आभास निम्न चित्र से हो सकता है। कई कारणों से इस वक्र का ढालूपन विस्तृत सीमाओं के भीतर घट बढ़ जाता है, जैसे कि विद्यार्थी की व्यक्तिगत विशेषताएं कार्य की प्रकृति, अभ्यास का काल-विभाजन इत्यादि।
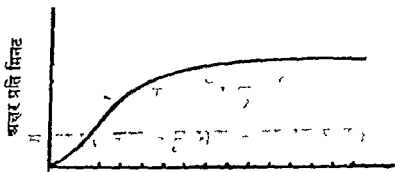
अभ्यास के सप्ताह

तमाम अवस्थाओं में सीखने के लाक्षणिक वक्र से प्रकट होता है कि वह पहले तेजी से ऊपर उठता है, फिर उठान की दर धीमी हो जाती है अथवा उसका ढालूपन कम हो जाता है। इसका अर्थ यह है कि आरम्भ में सीखने की प्रगति तेज होती है, फिर मन्द पड़ जाती है और कुछ समय बाद रुक सी जाती है और योग्यता का अवर्द्धमान धरातल आ जाता है—जो रेखा-चित्र में पठार के रूप में दीखता है। इस पठार के आगे उस व्यक्ति के लिए उन्नति की कोई सम्भावना नहीं दिखाई देती।

२. सीखने में पठार.

वास्तव में चित्र में जो पठार है वह शिक्षा-क्रिया के एक अल्पकालीन ठहराव को व्यक्त करता है न कि उसका अन्त। प्रयोगों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि करीब करीब सभी प्रकार के सीखने की क्रियाओं में विशेषकर किसी जटिल काम के सीखने में, जैसे मशीन पर टाइप करना, यदि शिक्षार्थी अभ्यास को जारी रखे, बारंबार दुहरा कर केवल यन्त्रवत नहीं, बल्कि उन्नति करने के निश्चित उद्देश्य से, तो योग्यता में आकस्मिक

वृद्धि की सम्भावना रहेगी, जिसके कारण शिक्षण-वक्र फिर ऊपर को उठ जायेगा। इसके उपरान्त फिर एक दूसरा पठार आ जायगा। यह चक्र एक से अधिक बार दुहराया जा सकता है, और यदि सीखने की क्रिया दीर्घ काल तक जारी रखी जाय तो शिक्षण-वक्र प्रायः एक सीढ़ी की शक्ल का बन जायगा और उस में, एक के बाद दूसरा, कई पठारों का सिलसिला रहेगा, जैसा कि नीचे के चित्र में दिखाया गया है।
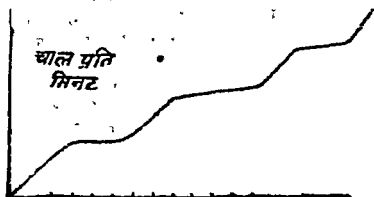
अभ्यास के सप्ताह

पठार एक ऐसा समय होता है जब प्रत्यक्ष में कोई प्रगति नहीं होती। इस काल के लोगों का यह विश्वास हो जाता है कि वह उस विषय के संबंध में और अधिक नहीं सीख सकते, उनका मन रुका सा दीखता है। नये विचार समझ में नहीं आते और पुराने विचार मस्तिष्क की पकड़ से फिसलकर निकले से जाते हैं। पठारों की अवधि लम्बी या छोटी हो सकती है। यह इस बात पर निर्भर करती है कि विषय क्या है और उसके सीखने में कितना समय लगाया गया है। ऐसा देखने मे आया है कि कभी कभी इस का विस्तार एक वर्ष अथवा और भी अधिक होता है, मगर साधा-

रणतः यह कम अवधि का ही होता है। पठार के समान ही अवस्था का अनुभव एक दिन के भीतर भी हो सकता है जब कि कार्यकर्ता को ऐसा जान पड़ता है कि उसकी कार्यक्षमता क्षीण हो गई है और वह घंटे दो घंटे तक कुछ काम नहीं निकाल सकता। पठार के काल में शिक्षार्थी बड़ा निरुत्साहित हो जाता है और इस कारण एक लेखक ने ठीक ही इसे "निराशा का पठार" के नाम से निरूपित किया है, क्योंकि निरुत्साह से किसी को कभी लाभ नहीं पहुँचा। इसलिये पहली सलाह, जिसका देना आवश्यक है, यह है कि जब कोई विद्यार्थी एक अवरोध के काल से होकर गुजर रहा हो तो उस को हतोत्साह या निराश कभी नहीं होना चाहिये और न शिक्षक को उसके प्रति अधीरता या अप्रसन्नता का प्रदर्शन करना चाहिये। मानवीय उद्योग की प्रत्येक शाखा में पठार का पाया जाना एक साधारण घटना है, और चाहे यह विश्राम अथवा शारीरिक और मानसिक बैटरी को पुनः आविष्ट करने का समय हो, या पिछली शिक्षा के एकत्रीकरण या आगे होने वाली उन्नति के लिये परोक्ष रूप से तैयारी का समय हो। आशाजनक लक्षण तो यह है कि अधिकांशतः इस के बाद दक्षता में अचानक बड़ा उत्थान हो जाता है और विद्यार्थी को इस विचार से प्रसन्न और आशान्वित होना चाहिये कि थोड़ा आगे चलने पर ही सफलता पकड़ में आ सकती है।

३ पठार के कारण

क्योंकि पठार तमाम शिक्षा के व्यापक लक्षण हैं, यह स्वाभाविक ही है कि मनोवैज्ञानिक इस विषय पर बहुत ध्यान दें और यह पता लगाने के विशेष प्रयत्न करें कि पठार क्यों उत्पन्न होते हैं और समय और सामर्थ्य का जो ह्रास उनके कारण होता है वह किस प्रकार घटाया या दूर किया जा सकता है, उनकी खोजों के निष्कर्ष संक्षेप में नीचे दिये जाते हैं :—

(१) विषय-सामग्री का गहन होना—विषय अधिक कठिन होने के कारण पठार उत्पन्न हो सकता है।

पठार का स्पष्टतः एक अर्थ यह हो सकता है कि शिक्षार्थी के लिए सीखने की सामग्री के अधिक कठिन भागों को चिन्हित करे। प्रारम्भ की मंजिलों में कार्य अपेक्षाकृत सहज होता है और सीखने की प्रगति भी तेज होती है। आगे चलकर कार्य की कठिनता उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है और उसी हिसाब से प्रगति भी मन्द होती जाती है, यहां तक कि एक स्थिर अवस्था आ जाती है क्योंकि सीखने के विषय की कठिनाई बहुत बढ़ जाती है या कोई विशेष कठिन भाग आ जाता है।

यदि पठार विषय-सामग्री की बढ़ती हुई कठिनाई के कारण उपस्थित हो गया है तो उस की दवा यह है कि और अधिक परिश्रम से काम किया जाय और प्रयत्न को आवश्यकतानुसार बढ़ाया जाय। इसके विपरीत यह भी सम्भव है कि पठार एक विश्राम स्थान या पड़ाव हो। प्रकृति ने हम सब को ऐसा बनाया है कि हम निरंतर नहीं चलते रह सकते बल्कि कभी-कभी रुक जाना हमारे लिये आवश्यक है। अतएव एक पठार हमारे लिये यह चेतावनी हो सकता है कि उस समय और अधिक नहीं सीखा जा सकता और पूरी छुट्टी ले लेना ही श्रेयस्कर है। ऐसी छुट्टी कई सप्ताह की होसकती है या एक दिन की या दिन में घंटे आध घंटे ही पूर्ण विश्राम करने से भी काम चल सकता है. जैसे गरम देशों में ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्न काल मे ऐसे विश्राम की उपयोगिता और भी बढ़ जाती है अगर उसके साथ साथ किसी प्रकार का मनोविनोद भी हो। पर महत्वपूर्ण बात यह है कि मस्तिष्क को थका देने वाली क्रियाशीलता से निवृत्ति मिले।

(२) दूषित बुनियाद—दूषित या खराब बुनियाद के कारण भी पठार प्रकट हो सकता है। बहुधा ऐसा होता है कि पठार

प्रारम्भिक शिक्षा के अपूर्ण या दोषयुक्त होने की वजह से पैदा होता है। अगर शिक्षण-काल के प्रारम्भ में नींव कच्ची डाली गई थी तो मुश्किल से ही यह आशा की जा सकती है कि वह बाद में आने वाली और अधिक कठिन विषय सामग्री के बोझ को संभाल सकेगी। निपुणता में उन्नति के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि उस के पहले की श्रेणियों, परिभाषाओं, प्रारम्भिक सिद्धान्तों, पुस्तक के पिछले अध्यायों—पर पूर्ण रूप से अधिकार पा लिया जाये। यदि कार्य की शुरू की मंज़िलें जल्दबाज़ी या उतावलेपन में ऊपर ही ऊपर से सीखी गई थीं तो निस्सन्देह ही आगे की उन्नति में बाधा पड़ेगी।

अगर पठार अपर्याप्त तैयारी के कारण उत्पन्न हुआ है तो स्पष्टतः उस का उपचार यह है कि शुरू के हिस्सों को दोबारा सीखा जाय या दोहराया जाय। नये संकल्प करना और अतिरिक्त प्रयत्न करना ही काफ़ी नहीं है...ज़रूरत इस बात की है कि पीछे लौट कर नींव दुबारा डाली जाय। जिस काम को पहले आप ने जल्दबाज़ी या ऊपर ही ऊपर से देख कर सीखा था उस का मनोयोग के साथ पुनरावलोकन करना चाहिये और इस बात को सावधानी से ध्यान में रखना चाहिये कि हर क्रिया को पूर्णतया समझ लिया जाय। ऐसा करने से धुंधले विचार स्पष्ट हो जाते हैं और ज्ञान की परिपुष्ट इमारत बनाने में यह एक अति आवश्यक अंग है। सच तो यह है कि चाहे अध्ययन का विषय कुछ भी हो, समय समय पर पुनरावलोकन करने से निपुणता में उन्नति हो जाती है। दुहराने से दूसरे लाभ तो होते ही हैं, पर इससे यह भी आशा की जा सकती है कि यह पठार का निवारण करेगा और उन दूसरे उपचारों से मिल कर, जिन का उल्लेख यहां किया गया है, शिक्षण-काल के एक अत्यन्त ही दुखदायी लक्षण को पराजित करने में सहायता देगा।

(३) गलत विशेष-रीति (Technique) का अवलम्बन—पठार इस कारण से भी उपस्थित हो सकता है कि शुरू की मंजिलों में काम करने के गलत तरीके अख्तयार किये गये या बुरी आदतें डाल ली गईं। अधिकांशतः काम करने के तरीके या आदतें दक्षता की एक सीमा बांध देती हैं जो उस अनपेक्षिक सीमा से बहुत नीचे होती हैं जो कार्य की भौतिक या शारीरिक परिस्थितियों द्वारा नियोजित की जाती है. यह स्पष्ट ही है कि ऐसी अवस्था में हमें काम करने की विधि में परिवर्तन करके परीक्षा करनी चाहिये, उदाहरणतः यदि आप किसी विषय को मन ही मन पढ़ने के अभ्यस्त हैं तो आप अपने पाठों को ध्वनि सहित पढ़ना शुरू कर दें। आप नोट तैयार करना आरंभ कर दीजिये या नोट लेने की अपनी विधि में परिवर्तन कर दीजिये। सदा प्रयोगात्मक मनोभाव रखिये और स्वयं अपने आप यह पता लगाने की कोशिश कीजिये कि काम करने के कौन से तरीके निपुणता बढ़ाने में आप के लिये सब से हितकर हैं। अपने प्रश्न का विश्लेषण कीजिये और देखिये कि क्या आप अपनी कठिनाई का निदान कर सकते हैं। अपने दृष्टिकोणों और आत्म-अनुशासन के तरीकों में आप जितने भी परिवर्तन या विकल्प सोच सकते हों उन्हें बारी बारी से अजमा कर देखिए। समझ बूझ कर योजना और सावधानी से तैयारी का प्रयोग कीजिये। फिर कार्य में बिना किसी तैयारी के कूद पड़ने का प्रयोग करिये; बड़ी तन्मयता से काम कीजिये, फिर बिल्कुल उपेक्षा के भाव के साथ काम करिये. बड़ी तेजी से काम करिये, फिर बहुत धीरे धीरे सोच विचार के साथ रात में देर तक काम करिये, फिर सवेरे तड़के काम कर के देखिये। हर अवस्था में फलों को ध्यान पूर्वक जांचिये और स्वयं पता लगाइये कि इन तरीकों में से, जो कि सम्भव हैं और जिनका आप ने प्रयोग किया है. आप के लिये कौन से सर्वोत्तम प्रमाणित होते हैं।

(४) रुचि का क्षीण हो जाना—पठार काल का एक और साधारण कारण यह है कि रुचि निस्तेज हो जाती है या सीखने के प्रति इच्छा शक्ति दुर्बल पड़ जाती है। इस का अर्थ यह होता है कि काम अर्ध हृदय से किया जाता है और प्रयत्न मन्द पड़ जाता है। आरम्भ में प्रगति तेज होती है क्योंकि कार्य पर काफी शौक और उत्साह के साथ आक्रमण किया जाता है। बाद में जब रुचि मन्द पड जाती है, तरक्की की रफ्तार भी हल्की हो जाती है और आखिरकार एक अवर्द्धमान अवस्था या पठार प्रकट हो जाता है। यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि यदि उत्तेजना को बढाने लिये यथेष्ट उपाय किये जाय तो निपुणता की देर से रुकी हुई और देखने मे अन्तिम सतह भी बहुधा पीछे छोडी जा सकती है और एक उच्चतर सतह प्राप्त की जा सकती है। कार्य के अधिक ऊंचे तल तक पहुँचने के लिये सर्वोत्तम उपायों में एक यह है कि चाहे वास्तविक शौक न भी हो तो भी कार्य में जी लगने का मनोभाव अख्त्यार कर लिया जाय। कृत्रिम अभिरुचि यथा-समय वास्तविक अभिरुचि में परिणत हो जाती है, अन्तःक्षोभ की उत्तेजना से बडी शक्ति पैदा हो जाती है, उत्साह की अग्नि को तेजी से जलता रखिये अपने काम से आनन्द प्राप्त करने का अभ्यास कीजिये, अपने लिये और दूसरों के लिये उस की महत्ता की कल्पना करने की कोशिश कीजिये।

यह निश्चित हो चुका है कि आगे उन्नति करने के लिये आत्म-प्रतियोगिता एक बडी प्रभावशाली प्रेरणा है। शिक्षा और व्यापार दोनों ही में उसकी स्फूर्तिदायिनी शक्ति का प्रभाव प्रमाणित हो चुका है। आत्म-प्रतियोगिता में व्यक्ति अपने ही पिछले दिन या पिछले सप्ताह में किये हुए काम को मात करने की चेष्टा करता है। यह पता चला है कि जब एक व्यवसायी या कर्मचारी के सामने उस के काम करने की प्रगति को वक्र रूप में चित्रित किया जाता

है तो वह इस बात के लिये उत्सुक हो जाता है कि उस वक्र को और ऊँचो सतह तक उठावे। इसी प्रकार प्रतिक्रिया पाठशाला के विद्यार्थियों में भी देखा गई है। कर्मचारियों या बच्चों के बीच प्रतियोगिता का अपेक्षा आत्म प्रतियोगिता अच्छी होती है क्योंकि इस से न केवल तेज कर्मचारी और चमत्कारी बालक बल्कि धीमे काम करने वालों और मन्द बुद्धि वालों को भी स्फूर्ति मिलती है। इस प्रकार धीमे काम करने वाले श्रमिक और मन्द-बुद्धि बालक दोनो ही को ऐसा काम मिल जाता है जो उन की क्षमता के भीतर है, क्योंकि उन से केवल इतना कहा जाता है कि अपनी पिछली कृति के आगे बढ़ जाओ। इस के विपरीत यदि एक सुस्त काम करने वाले या कुन्दज़हन बालक से यह कहा जाय कि वह किसी फुर्तील कर्मचारी या चतुर बालक का मुकाबला करे तो इस का अर्थ यही होगा कि उस की क्षमता के बाहर का कार्य उस के सुपुर्द कर दिया जायगा, और परिणाम यही होगा कि उसका उत्साह भंग हो जायगा और उस की कार्य-क्षमता का और भी ह्रास होगा।

(५) अचेत शिक्षण का समय—एक पठार अचेत शिक्षण का समय हो सकता है जब कि परोक्ष लाभ प्राप्त होते हैं यद्यपि परिणाम स्पष्ट नहीं होते और बाहर से उन्नति का कोई पता नहीं चलता। यह सम्भव है कि सीखने की क्रिया जारी है और जो कुछ पहले सीखा था वह परिपुष्ट होता जा रहा है। शायद उन्नति का निर्णय उस के विषयात्मक फलों से करना ही न चाहिये। जिन प्रमेयों (Phenomena) का विवेचन स्मरण-शक्ति के सम्बन्ध में किया गया है उन से भी यहां संकेत होता है कि सीखने का एक बड़ा भाग अंतरचेतना के भीतर होता है। सच तो यह है कि शिक्षण-क्रिया एक दीवार बनाने के समान नहीं है, जहां ईंट पर ईंट चुनते हुए हम काम की प्रगति को प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं, बल्कि यह तो प्रयोग करने की क्रिया के समान है, जैसे किसी

यन्त्र का अनुसंधान करना, जिस में देर तक खोज करने का भले ही कोई इन्द्रियगोचर फल न मिले, फिर भी वह समय व्यर्थ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सम्भव है कि अन्त में उसी की सहायता से मनोवांछित फैल अचक्के में आप की समझ में आ जाय।

(६) दक्षता की विभिन्न श्रेणियां—किसी जटिल कार्य के सीखने में जो पठारों का हमेशा सामना करना पड़ता है उसका एक कारण यह माना जाता है कि ऐसे सम्पादनों में योग्यता की भिन्न-भिन्न श्रेणियां होती हैं जिन में एक निश्चित दूरी या अन्तर रहता है। दक्षता की अगली ऊंची श्रेणी तक पहुँचने के लिये इस दूरी को कठिन परिश्रम अथवा अध्यवसाय द्वारा पार करना पड़ता है। सीखने की इन मंजिलों में से प्रत्येक को प्राप्त करने में एक भिन्न कक्षा की आदतें डालनी पड़ती हैं। और किसी ऊंची कक्षा की आदतें डालने से पहले, उस के नीचे की कक्षाओं की आदतों का सुदृढ़ रूप से जम जाना आवश्यक है। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि ऊंची कक्षाओं की आदतें अपेक्षाकृत नई होने के कारण धीरे धीरे ही जड़ पकड़ पायेंगी. जब नीचे की सब श्रेणियां अभिन्न हो जाती हैं और स्वयमेव बन जाती हैं, तभी उन के आधार पर ऊंची कक्षाओं की आदतें सुचारु रूप से काम कर सकती हैं। टाइप-राइटिंग सीखने में इसी प्रकार की घटनायें दिखाई पड़ती हैं. शिक्षार्थी प्रारम्भ में अक्षरों को एक एक कर के टाइप करने का प्रयत्न करता है, जब वह अक्षरों का अभ्यास डाल लेता है तो शब्द-अभ्यास डालना आरम्भ करता है, उसके उपरान्त वाक्यांशों का अभ्यास, और इसी प्रकार आगे। इसी तरह किसी विदेशी भाषा को बिना अटके लिखना या बोलना सीखने में यह आवश्यक है कि पहले शब्द-भंडार और व्याकरण के तत्वों पर अधिकार प्राप्त कर लिया जाय। ऐसा कर लेने के उपरान्त ही भाषा की उच्चतर आदतें स्वतंत्रता से प्रकाशित हो

सकती हैं जिन में कि शब्दों को तारतम्य के साथ प्रकट करना पड़ता है। इस का एक और दृष्टान्त पढ़ने के मनोविज्ञान में पाया जाता है। एक तेजी से पढ़ने वाला साधारण पाठक की अपेक्षा तीन या चार गुना तेज पढ़ सकता है, पर वह हर शब्द को तिगुनी या चौगुनी तेजी से नहीं देखता, बल्कि वह अपने नेत्रों से बड़े बड़े कौर ग्रहण कर लेता है, वह हर एक दृष्टिपात में अधिक शब्दों को पकड़ लेता है, क्रमिक दृष्टिपातों के बीच उस के ठहराव या विश्राम भी कम देरी के होते हैं और वह आंख से वस्तुतः बगैर देखे हुए भी कहीं अधिक अनुमान कर लेता है, वास्तव में एक नीचे दर्जे से एक ऊंचे दर्जे तक जो पढ़ने में उन्नति होती है उस में केवल यही नहीं रहता कि अकेले शब्दों को तेजी से पढ़ लिया जाय बल्कि उनको उत्तरोत्तर बड़े समूहों में मिला कर पढ़ा जाय। उन में प्रकार का अन्तर रहता है न कि केवल दर्जे का,

समस्त शिक्षण रूपान्तर की क्रिया है...इसका अर्थ यह होता है कि उत्तमतर नियन्त्रणों (Controls) का प्रयोग और स्थापन किया जाय, जो अधिक कार्यसाधक होने के साथ ही साथ अल्पव्ययी भी हो। किसी प्रकार की उच्च निपुणता वाले और नौसिखिया के काम में केवल कोटि या दर्जे ही का नहीं वरन किस्म का भी अन्तर होता है। वह बिल्कुल दूसरे ही ढंग का काम होता है। इस लिये प्रत्येक पठार उन्नति की किसी विशेष मंजिल को चिन्हित करता है, हर एक मंजिल को परिपुष्ट होने के लिये कुछ समय की आवश्यकता होती है, और उस के बीतने पर ही उच्चतर नियन्त्रण प्राप्त हो सकता है। इसलिये किसी भी जटिल शिक्षण में पठार एक अनिवार्य मंजिल है टाइपराइटर का प्रयोग करने से लेकर एक विदेशी भाषा में बात चीत करना सीखने तक और इस मंजिल को पार करने में उतावलापन करने से उन्नति के बजाय उलटा परिणाम हो सकता है।

(७) थकाना—पठारों के घटित होने का एक और कारण थकान का भाव है, थकान मानसिक हो सकती है या शारीरिक, यद्यपि मानसिक थकान पर किये गये अनुसंधानों के फल इतने साफ, सम्पूर्ण या निश्चित नहीं हैं जितना कि हम चाहते हैं, तथापि एक बड़े महत्व की बात यह निकलती है कि मानसिक थकान शारीरिक थकान से बिल्कुल भिन्न होती है और बहुत धीरे-धीरे आती है।

जब किसी मांसपेशी का प्रयोग बार बार किया जाता है, तो वह खराब पदार्थों के जमा हो जाने के कारण क्रमशः जहर से भर जाती है, वह अपनी कार्य-क्षमता धीरे-धीरे खोती रहती है यहाँ तक कि अन्त में वह दिमाग से आई हुई प्रेरणाओं (Impulses इम्पलसेज) का उत्तर देना अस्वीकार कर देती है और हिलना-डुलना बन्द कर देती है। उस समय उसे विश्राम करने देना ही उचित है, जब तक कि विषैली वस्तुएं खून की धारा मे घुलकर साफ न हो जायँ। इसके विपरीत चाहे दिमाग का अधिक काल तक प्रयोग किया जाय तो भी उस की शक्तियों में इस प्रकार क्रमशः कमी होती नहीं दिखाई पड़ती।

मानसिक थकान के विषय पर बहुत से प्रयोग किये गये। प्रयोगों के लिये कार्यों को चुनने में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया कि वे शुद्ध मानसिक हों और उन में शारीरिक श्रम का अंश न्यूनतम हो। यह अनुमान किया गया कि आँखों को एक छपे हुए पृष्ठ पर केन्द्रित करने या कलम से लिखने से शारीरिक श्रम होगा जो प्रयोगों में गड़बड़ी पैदा कर सकता है। क्योंकि दिमाग के बिना थके हुए ही आँखें या हाथ थक सकते हैं, इसलिये जो काम मनोवैज्ञानिकों को सब से अधिक पसन्द आया और जिसमें बहुत से प्रयोग किये गये, वह मन में सवाल लगाना था, जिस में केवल

इतनी ही शारीरिक क्रिया करनी पड़ती थी कि उत्तर को लिख दिया जाये या बोल दिया जाय।

इन प्रयोगों से यह पता चला कि इस प्रकार का काम लगातार ४ घन्टे जारी रखने पर भी कार्य-क्षमता में कोई इन्द्रिय-गोचर कमी नहीं होती। एक दूसरा श्रेष्ठ प्रयोग तो बहुत ही कठिन प्रकार के कार्य पर किया गया। यह प्रयोग एक ऐसे असाधारण मनुष्य पर किया गया जो अपने मन में चार अंकों की संख्याओं का गुणा कर सकता था जो काम कि हम में से बहुतों की सामर्थ्य के बिल्कुल बाहर है चाहे हम कितनी ही ताजी और स्वस्थ अवस्था में क्यों न हों। उस ने यह वृहत् कार्य, जिस में आश्चर्यजनक एकाग्र-चित्तता की जरूरत होती है, एक दिन में बारह घन्टे किया और दिन प्रति दिन जारी रक्खा। कार्य के बिल्कुल अंत के निकट गति में कुछ धीमापन आ जाता था पर बहुत अधिक नहीं, लेकिन यह देखते हुए कि कार्य कितना कठिन था, रफ्तार में इतनी थोड़ी सी कमी से कोई भारी अन्तर नहीं पड़ता है, क्योंकि बुद्धि-सम्बन्धी कार्य क्षमता में बिना कमी हुये ही, लम्बे समय तक किया जा सकता है, इस लिए यह निष्कर्ष निकालना उचित ही है कि दिमागी थकावट अधिक महत्वपूर्ण नहीं है।

थकान की अनुभूति वास्तविक थकान की माप नहीं। दूसरा अद्भुत अनुसन्धान यह है कि काम करते जाने में अयोग्यता की भावना का वास्तविक अयोग्यता की भावना या वास्तविक अयोग्यता से कोई घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है। थकावट मालूम पड़ने हुए भी यह आवश्यक नहीं कि कार्य-क्षमता में कमी आ जावे। कोई मनुष्य थकान अनुभव कर सकता है। और सोच सकता है कि उस को अवश्य ही रुकना पड़ेगा और अधिक परिश्रम उस के लिये असम्भव है, फिर भी यदि वह अध्यवसाय से काम पर डटा रहे तो उस को यह देखकर आश्चर्य हो सकता है कि सावधानी से

जाच करने पर भी कोई विशेष कमी न तो उसके कार्य की तेजी में और न शुद्धता या यथार्थता ही में होती है। यह एक विचित्र सत्य है कि लम्बे समय तक लगातार कार्य करने पर भी और थकान की अनुभूति बढने पर भी दिमाग अपनी ताजगी और लचीलेपन को कायम रखता है। इस में आश्चर्य की क्या बात है यदि इस बात का स्मरण किया जाय कि मनुष्य का हृदय सौ वर्ष तक या और अधिक लगातार बिना रुके हुये कार्य कर सकता है?

जब मनुष्य कुछ समय तक कार्य करता है उस में थकान के भाव उत्पन्न हो जाते हैं और जितनी अधिक देर वह काम करता है उतनी ही अधिक थकान उस को मालूम पड़ने लगती है। परन्तु रेलवे एकाउन्ट्स आफिस में चेक लिखने वाले क्लर्क प्रायः उतने ही चेक आखिरी घन्टे में लिखते हैं जितने उन्हों ने पहले घन्टे में लिखे थे। दूसरे प्रकार के कार्य भी जैसे घन्टों तक लगातार ईंट ढोना या रुमालों की तह करना, थकान की गहरी ही अनुभूति पैदा कर देते हैं पर फिर भी व्यक्ति काम करता चला जाता है। इस से यह सिद्ध होता है कि किसी मनुष्य की अपने सम्बन्ध में जो भावना है वह यथार्थता से कहीं दूर होती है। जितनी थकान कोई शख्स महसूस कर रहा है उस से इस बात का कोई ठीक अंदाज नहीं मिलता कि वह सचमुच कितना थका है और कितना और काम कर सकता है। थकान की अनुभूति थकान की सच्चा प्रतीक नहीं। साधारणतः ज्यों ही मनुष्य को थकान का अनुभव होने लगता है वह काम में ढिलाई कर देता है पर सच पूछिये तो उस समय भी वह उतना ही काम कर सकता है जितना कि पहले, बशर्ते कि उसे इस बात का पता हो कि थकान के भाव और वास्तविक थकान के बीच बड़ा कालान्तर रहता है।

किसी घोड़े को देखकर ही आप यह नहीं कह सकते कि वह कितना तेज दौड़ सकता है या कितना भारी बोझा खींच सकता है या कितनी दूर तक खींच सकता है। इसी तरह यह देखकर कि कितनी थकान आप को मालूम हो रही है आप यह नहीं बतला सकते हैं कि आप वास्तव में थके हैं या नहीं। सामान्यतः मनुष्य उतना थका हुआ नहीं होता जितना कि वह कल्पना करता है।

ऐसा जान पड़ता है कि थकान का भाव वास्तविक थकान का परिणाम न हो कर, उसे रोकने का एक साधन है, जिसका उद्देश्य यह होता है कि हम को अति परिश्रम से बचाये। थकान का भाव एक प्रकार का अभय वाल्व (Safety valve) है जो हम को प्रकृति की ओर से मिला है लेकिन हम में से बहुतों ने इस को ऐसे हलके दबाव पर ही भाप निकालने (ब्लो आफ करने) के लिये अभ्यास (Set सेट) कर रक्खा है कि हमारी कार्य करने की क्षमता कभी उस उच्चतम श्रेणी तक नहीं पहुँच पाती जिसे प्राप्त करने की योग्यता हम में है।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि सारे दिन कठिन और लगातार काम करने के बाद भी दिमाग नहीं थकता और न उस की कार्य-क्षमता में ही कमी आती है, तब थकान के भाव का क्या कारण है जिस से हम सभी परिचित हैं और जिस की वास्तविकता से किसी को इकार नहीं हो सकता? इस मे सन्देह नहीं कि ज्यों ज्यों हम कोई-मानसिक कार्य लगातार करते जाते हैं त्यो त्यों हम में क्रमशः एक ऐसी भावना और अवस्था पैदा होती जाती है जो बहुत अरुचिकर होती है और जिस के कारण हमारी कार्य-क्षमता उत्तरोत्तर क्षीण होती जाती है। ऐसी अनुभूति के अस्तित्व पर तर्क या सन्देह नहीं हो सकता, प्रश्न केवल इतना ही है कि इस का अर्थ और वास्तविक प्रकृति क्या है?

४—थकान के कारण

वह भावना जिसे हम मानसिक थकान कहते हैं प्रायः दो बातों से उत्पन्न होती हुई दिखाई देती है। पहला कारण जी ऊबना है। एक काम को करते हुये ज्यों ज्यों देर होती जाती है, त्यों त्यों हमारा मन उस में कम लगता है और हमारी इच्छा परिवर्तन के लिये, अथवा कोई दूसरा काम करने के लिये, उत्तरोत्तर प्रबल होती जाती है जैसे सिनेमा देखने जाना, किसी मित्र से मिलना, ताश खेलना या उपन्यास पढ़ना। स्वभावतः जब हमारा आधा ही मन काम में लगता है तो आप से आप हमारी कार्य-क्षमता कम हो जाती है। यदि हम काम को जारी रखने के प्रति अरुचि पर विजय प्राप्त कर सकें, यदि काम के लिये उत्साह और शौक़ को कायम रखने के साधन और उपाय निकाल सकें, तो थकान की कम से कम आधी समस्या हल हो जायगी। शेष आधी समस्या भी हल हो सकती है, यदि हम मानसिक कार्य करते समय शारीरिक परिश्रम और खिंचाव को बिल्कुल निकाल देने का प्रबन्ध कर सकें, शारीरिक थकान मानसिक थकान की भावना का दूसरा कारण है। मानसिक कार्य करते समय हमें अपनी आँखों, अपने हाथों, अपनी पीठ इत्यादि का प्रयोग करना पड़ता है और यह सब अंग थकावट महसूस कर सकते हैं, जिस के कारण रुकने की इच्छा उत्पन्न हो सकती है। इसी प्रकार हम कोई भी मानसिक काम करें, किसी न किसी आसन से तो बैठेंगे ही या खड़े ही होंगे, और उस में कुछ न कुछ ज़ोर तो शरीर पर अवश्य ही पड़ेगा। चाहे हम मशीन पर टाइप करें या कलम से लिखें, या अनुवीक्षण यन्त्र में निगाह गड़ावें या प्रयोगशाला में काम करें, हमें प्रत्येक आसन में पीठ या गरदन तो झुकानी ही पड़ेगी और वैसे भी शरीर को कुछ न कुछ साधना ही पड़ेगा, और इन अंगों के खिंचाव का नतीजा यह होगा कि शरीर में थका-

वट आने लगेगी। हम अपना आसन बदलना चाहते हैं और आसन बदलने की यह इच्छा शीघ्र ही फैलकर काम बदलने की इच्छा बन जाती है।

थकावट प्रधानतः मन से नहीं शुरू होती है। इस में सन्देह नहीं कि जिस को लोग मानसिक थकान समझते हैं उस का आरम्भ वस्तुतः दिमाग के निरन्तर परिश्रम से नहीं होता, वरन् उन दूसरे अंशों से होता है जो मानसिक कार्य के साथ अनिवार्य रूप से वर्तमान रहते हैं। उन अंशों में से कुछ यह हैं। बहुत थकी हुई आंखें जिन का इलाज किसी नेत्र-वैद्य से कराना चाहिये। संकुचित या कष्टदायक आसन जो पुट्ठों में थकावट उत्पन्न करते हैं। शोर-गुल। गरम या कम हवादार कमरे में काम करना। फल के हेतु या काम में विलम्ब हो जाने के कारण अत्यधिक चिन्ता, काम में अरुचि या ऐसे समय काम करना जब कि शरीर अथवा मन की अवस्था ठीक न हो। बहुधा यह सब बातें ही थकान की उस भावना का सच्चा कारण हैं जो मानसिक कार्य करने के साथ साथ प्रकट हो जाती हैं। यदि काम में परिवर्तन करके या खुली हवा में कसरत करके हम थकी हुई मास-पेशियों में से जहर को निकाल दें, तो थकावट की भावना शीघ्र ही गायब हो जाती है, अगर किसी अरुचिकर काम में देर तक लगे रहने के कारण थके हुये मन को प्रबल उत्साह या शौक की नई लहर द्वारा उत्तेजित किया जाय, तो थकान मानो जादू से उड़ जायगा, ऐसा बहुत कम होता है कि खाली मानसिक काम से थकावट पैदा हो, पर मानसिक परिश्रम के साथ शारीरिक थकान, जी ऊबना या चिन्ता के मिल जाने से ही बहुधा स्नायुशक्ति का ह्रास (Nervous Breakdown) अतिशय परिश्रम के कारण हो जाया करता है।

१. अगर हम अपने मन को ऐसे कामों में लगाये रक्खें जिन में हमारा शौक कायम रहे और शरीर को किसी प्रकार का

परिश्रम या अनुपेक्षा न हो, तो इस में सन्देह है कि हमें कभी भी थकावट मालूम हो या हमारी कार्य क्षमता में दिन के आरम्भ से लेकर अन्त तक कोई कमी हो! इसका यह अर्थ नहीं कि मस्तिष्क कभी थकता ही नहीं, वरन् यह कि जितनी देर तक मस्तिष्क का हम लोग प्रयोग करते हैं उस में उसे थकने की कोई आवश्यकता नहीं और दिन भर काम करने के बाद भी मन को तरोताजा बनाने के लिये रात की नींद काफी है। हाँ, मानसिक कार्य के लिये अनुकूल भौतिक वातावरण की बड़ी आवश्यकता है। ठीक दिशा से और पर्याप्त मात्रा में प्रकाश मिलना चाहिये साधारणतः जितने प्रकाश में लोग काम करते हैं वह बिलकुल अपर्याप्त होता है और प्रयोगों द्वारा यह बात सिद्ध हो चुकी है कि कारखानों के कर्मचारियों की उत्पादक शक्ति में बड़ी वृद्धि केवल प्रकाश की तेजी को बढ़ाने से हो जाती है। कुर्सी और मेज की ऊँचाई ठीक होनी चाहिये। अगर मेज और कुर्सी ऐसी हों कि उन की ऊँचाई घटाई बढ़ाई जा सके तो बहुत ही अच्छा हो क्योंकि उनसे आसन बदलने में सुविधा होगी। कभी कभी थोड़ी देर तक खड़े होकर काम करने से आराम मिलता है और थकावट दूर होती है। कमरे के भीतर की हवा की अवस्था उसके तापक्रम, तरी, उस में कितना कार्बनद्विओषद है और किस चाल से बाहर की हवा अन्दर आ रही है, यह सब बातें बड़ी महत्वपूर्ण हैं। सारांश यह कि मानसिक काम, सब से बढ़िया और चिरकाल तक, तभी हो सकता है जब हर प्रकार के शारीरक आयास की मात्रा न्यूनतम हो, जब शरीर के अंगों को ढीला रक्खा जा सके, और उन पर कम से कम खिचाव पड़े।

मानसिक कार्य की भौतिक परिस्थितियों के अतिरिक्त यह भी बड़े महत्व की बात है कि उस काम का हमारी रुचियों से क्या सम्बन्ध है। उत्तम रीति से संचालित शिक्षा, जिस में

से रखने का संकल्प किसी प्रबल प्रेरणा द्वारा उत्तेजित किया गया है, थकावट दूर रखने में बहुत प्रभावशाली होती है। विशेष प्रकार के शौकों को पैदा करके और सुदृढ़ करके, मनुष्य थकान को दूर रखना और थकावट मालूम पड़ने पर भी काम को जारी रखना सीख सकता है। प्रबल विचारों में थकान पर विजय पाने की बड़ी शक्ति भरी रहती है। यदि दूसरी बातें सम न हों तो एक ऐसा कार्य-कर्त्ता जो किसी प्रबल विचार से अनुप्राणित है एक दूसरे कार्य-कर्त्ता की अपेक्षा जो ऐसे विचार से उत्तेजित नहीं है कहीं ज्यादा मेहनत और दक्षता से काम करता है। यह अनुप्राणित करने वाला विचार कुछ भी हो सकता है जैसे अपने पेशे में महत्वाकांक्षा, उत्कृष्टता प्राप्त करने या किसी को प्रसन्न करने की अभिलाषा, कर्त्तव्य-पालन का संकल्प या लोक-सेवा की कामना इत्यादि। एक प्रबल विचार चाहे वह कुछ भी हो, मनुष्य को असाधारण काम करने के लिये प्रेरित करता है। हर एक व्यक्ति को जो दुनिया में कुछ होना या करना चाहता है, उचित है कि वह एक लक्ष्य या आदर्श को अपनावे। यह बड़ी अद्भुत बात है कि किसी उच्च आदर्श या भावना से प्रेरित होकर मनुष्य दुख और कष्ट को भूल जाता है और कठिनाइयों का सामना करते हुये प्रयत्न करता रहता है; यहाँ तक कि उस का उद्देश्य चरितार्थ हो जाता है।

सारांश यह कि मानसिक काम करने से ही मस्तिष्क नहीं थकता, कोई मांस-पेशी यदि बार बार प्रयुक्त की जाय तो गति-शून्य बन सकती है। पर मन बराबर लगातार काम किये जा सकता है। मानसिक थकावट इस कारण पैदा होती है कि काम करने में कुछ रुकावटें उपस्थित हो जाती हैं, जो उस क्रिया के संचालन में बाधा डालती हैं और समय बीतने के साथ उत्तरोत्तर प्रबल और भयकर होती जाती हैं। आप इन रुकावटों को दूर कर दीजिये तो

थकावट की समस्या ही हल हो जायगी! एक सुशिक्षित मन, समान शक्ति के व्यय से, न केवल अधिक मात्रा में कार्यसंपादन कर सकता है वरन् अधिक समय तक भी काम करता रह सकता है, क्योंकि उसने इन बाधाओं से बचने का गुर सीख लिया है।

५—मानसिक नव-स्फूर्ति Mental Second Wind

पठार के बाद जो योग्यता में एक दम से वृद्धि होती है उससे यह बड़ा रोचक और चमत्कारी विचार पैदा होता है कि मानसिक शक्ति की पुनरावृत्ति कैसे होती है।

जिन लोगों ने लगातार बहुत देर तक कठिन शारीरिक परिश्रम किया है उन्हें कदाचित् ऐसे अवसर याद होंगे जब उनकी थकावट काम करने के साथ बढ़ती गई, यहाँ तक कि वह थकावट से बिलकुल चूर हो गये और ऐसा प्रतीत होने लगा कि अब एक क्षण भी और काम नहीं कर सकते! वह काम को बन्द करना ही चाहते थे कि सहसा उन्हें जान पड़ने लगा कि थकान घट रही है और किसी गुप्त स्रोत से नई शक्ति उमड पड़ी है, यह आश्चर्यमय घटना शारीरिक खेलों में अक्सर होती है और इसे नव-स्फूर्ति Second Wind कहते हैं! जिन्होंने इसका अनुभव किया है उनका कहना है कि इस समय शक्ति बढ़ जाती है, काम बड़ी सुगमता से और अच्छी तरह होने लगता है और बजाय थकान और शिथिलता के एक प्रकार की ताजगी और उत्साह का अनुभव होने लगा है और ऐसा जान पड़ता है मानो नई शक्ति का कोई छिपा हुआ खज़ाना मिल गया हो। तजर्बे में यह भी आता है कि यदि दृढ़ता पूर्वक प्रयत्न को जारी रक्खा जाय तो दूसरी और तीसरी बार भी शक्ति की पुनरावृत्ति हो सकती है, जिस के द्वारा मानसिक शक्ति को भी पुनरावृत्ति होती है। उपर्युक्त दृश्य केवल भौतिक स्तर पर ही नहीं वरन् मानसिक स्तर पर भी देखा जाता है। यदि इस प्रकार की मानसिक घटना बहुत कम होती है

तो इस का कारण यह है कि अधिकांश मनुष्य आलस्य के कारण ऐसी आदत डाल लेते हैं कि ज्यों ही थकावट का आभास हुआ कि काम बन्द किया। पर यदि अरुचि और थकावट की अवहेलना कर के काम में डटा रहा जाय तो हम मानसिक शक्ति के महान स्रोतों को पा जायेंगे और आशातीत उच्चतम और चमत्कारपूर्ण कार्यों का सम्पादन कर सकेंगे!

हम अपनी पूरी शक्ति से कदाचित् ही लाभ उठाते हैं। इस कथन की पुष्टि के लिये और मानसिक शक्ति की पुनरावृत्ति का निर्श्चय कराने के लिये अनेक प्रमाण नित्य के जीवन से दिये जा सकते हैं। यह सभी जानते हैं कि किसी भावना से प्रेरित होने से मनुष्य में ऐसी प्रबल शक्ति उमड़ पड़ती है जिस का उसे पहले पता तक नहीं होता। क्रोध के आवेश में आकर मनुष्य असाधारण शक्ति प्रदर्शित करता है। इसी प्रकार माता अपनी सन्तान को खतरे में देख कर शेरनी के समान हो जाती है। दूसरे यह सभी जानते हैं कि शराब जैसी उत्तेजक वस्तुओं के प्रभाव से शरीर और मन दोनों ही की शक्तियों के आश्चर्यजनक भंडार दिखाई देने लगते हैं। तीसरे ऐसे कितने उदाहरण हैं जब किसी विचार की प्रेरणा से व्यक्ति को बड़ी शक्ति मिल जाती है और बड़े विलक्षण काम कर डालता है। जैसा कि प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स ने लिखा है, हम में से अधिकांश लोग अपनी दक्षता की चरम सीमा तक कभी नहीं पहुँचते वरन् निचली श्रेणियों में ही काम कर के सन्तुष्ट हो जाते हैं।

सभी के भीतर गुप्त शक्ति के बड़े भंडार दबे रहते हैं, जो उपर्युक्त उपायों द्वारा बाहर निकाले और प्रकट किये जा सकते हैं यदि आप उन का आविर्भाव कर सकें तो उनके द्वारा ऐसे बड़े से बड़े कार्य सम्पादन कर सकते हैं कि जिन्हें पूरा करने में आप अपने को इस समय सर्वथा असमर्थ समझते हैं। अगर आप

अपनी शक्ति के छिपे हुये खजानों का उपयोग कर सकें तो आप धार-धारे दक्षता के एक उच्चतर धरातल पर रहने और काम करने लगेंगे, जिस से आप की उत्कृष्टता में उन्नति और दक्षता की मात्रा में वृद्धि होगी और आप का काम करने में आनन्द भी अधिक आयेगा।

६—मानसिक नव स्फूर्ति कैसे प्राप्त की जाय ?

शक्ति के इन छिपे हुये खजानों को पाने का रहस्य यह है कि पुनरावृत्ति के प्रकट होने तक काम को जारी रक्खा जाय शायद दो घंटे कठिन परिश्रम करने से ही आप की शक्ति का पहला भंडार समाप्त हो जाता है और आप बहुत थक जाते हैं, तो भी आप को उस समय काम रोकना नहीं चाहिये बल्कि काम पर डटे रहना चाहिये यहाँ तक कि शक्ति का दूसरा पर्त खुल जावे। हाँ ऐसा करने के पूर्व कोई पन्द्रह मिनट विश्राम करना अवश्य लाभदायक होगा। थोड़े ही समय के अभ्यास से आप को यह पता चल जायगा कि कितनी देर या कितना काम करने के बाद और कितनी देर विश्राम करने से आप को सर्वश्रेष्ठ फल मिल सकता है। यदि ठीक मात्रा से अधिक आराम किया जाय तो काम करने में आया हुआ आवेग जाता रहता है और पिछला परिश्रम अकारथ जाता है। कड़े परिश्रम के बाद अधिक देर तक विश्राम करने में शक्ति घट भी जाती है और और उसे उत्तेजित करने में पहले से भी अधिक परिश्रम करना पड़ता है। पहलवान जब कुश्ती लड़ने खड़ा होता है तो उस की शक्ति कुछ देर लड़ने के उपरान्त ही अपनी चरम सीमा को पहुँचती है। इसे गरमाना कहते हैं और गरमा कर ही मनुष्य या मशीन अपनी पूरी शक्ति से काम कर पाते हैं। गरमाने के बाद अधिक देर सुस्ताया जाय तो वह तेजी कम हो जायगी और उसे फिर प्राप्त करने के लिए

दुबारा शक्ति का व्यय करना होगा। आराम करते समय मन को ठीक अवस्था में रखना भी आवश्यक है। आराम के १० मिनट में ध्यान को किसी दूसरे काम में न लगाना चाहिये नहीं तो छोड़े हुये काम को फिर आरम्भ करते समय दूसरे पदार्थ के कुछ विचार बाकी रह जायेंगे और मानसिक विक्षेप उत्पन्न करेंगे। विश्राम के समय शरीर और मन को बिल्कुल ढीला छोड़ देना चाहिये, मुड़ी हुई माँसपेशियों को चलाना चाहिये, आँखों को आराम देना चाहिये और विचारों को निरुद्देश्य इधर उधर विचरने देना चाहिये। इस प्रकार थोड़ी देर आराम करने से शरीर और मनमें ताज़गी आ जायगी और नवीन शक्ति का संचार होगा। फिर नई गति से काम करते जाइये और आप की शक्ति के पुनरुत्थान का पूरा पूरा लाभ होगा।

साधारणतः केवल एक दो बार के प्रयत्न से ही आप अपने को शक्ति के उच्चतर स्तर पर न उठा सकेंगे। लगातार परिश्रम करने ही से यह योग्यता प्राप्त होगी कि आप अपनी गुप्त शक्तियों का कठिन काम के समय इच्छानुसार आवाहन कर सकें।

नव-स्फूर्ति को प्राप्त करने में सब से अधिक इस बात की आवश्यकता है कि थकान को रोकने की आदत डाली जाय, चाहे कठिनाइयां और रुकावटें सामने दीखती हों तो भी अध्यवसाय से काम करते रहने का अभ्यास डालना चाहिए। यह कठिनाइयाँ चाहे कितनी अकाट्य दीखती हों पर वास्तव में ये केवल मनही पर होती हैं।

थकावट को रोकने के दो मुख्य उपाय हैं; पहला उपाय यह है कि ठीक तरह से आराम किया जाय। श्रांत करने वाले कड़े काम के बीच में थोड़ा थोड़ा आराम का विराम होना चाहिये। मनुष्य लगातार देर तक काम नहीं कर सकता। दक्षता से आराम करने की कला जानना उतना ही महत्वपूर्ण है जितना दक्षता से काम

करने की कला का जानना, पर इस का यह आशय नहीं कि थकावट के पहले चिन्ह को देखतेही काम बन्द कर देना चाहिये और आराम करना आरम्भ कर देना चाहिये बल्कि इसके विपरीत यथासम्भव थकावट को दूर रखने की कला सीखनी चाहिये ताकि अधिक से अधिक समय तक काम करते रह सकें जब बिलकुल थक जाय, तभी थोड़ी सी देर कोई दस १५ मिनट, पूर्णरूप से ढील छोड़ दें और आराम करें। देर तक काम करने ही से शक्ति की पुनरावृत्ति हो सकती है।

दूसरी बात यह है कि हर मनुष्य को अपनी शक्ति की रक्षा करनी चाहिये। केवल यही नहीं कि विश्राम होशियारी से बनाई हुई योजना के अनुसार किया जाय पर दैनिक कार्यक्रम भी ऐसा होना चाहिये कि जिस समय आप ताजे हों तब कठिन और गहन काम किया जाय और जब आप कुछ थके हों अथवा जब कम शक्ति का समय हो तब हलका सा काम किया जाय। मनुष्य तो जीता जागता डायनमो (*Dynamo*) है और डायनमो के समान ही जितना भार वह जिस समय वहन कर सके उतना ही भार उसे अपने ऊपर रखना चाहिये। कम भार से शक्ति व्यर्थ जायगी और अधिक से काम बिगड़ जायगा। जब भारी बोझा ढोना हो तब अपनी सब से उत्तम शक्तियों का प्रयोग करना चाहिये और जब हलका भार वहन करना हो तब उसी के अनुसार कम शक्ति का उपयोग कीजिये। प्रातः काल रात के लम्बे विश्राम के बाद काम का भारी भार उठाया जा सकता है और शाम के समय, जब दिन भर काम करने के बाद शक्ति घट जाती है, वही काम करना चाहिये जिस में अधिक शक्ति की आवश्यकता न हो।

मुद्रक :—कुमार प्रिंटिंग वर्क्स दारागंज प्रयाग।

उपयोग किये हुए ग्रन्थों की सूची

1 Psychology *William James*
2 How to Use Your Mind *Kitson*
3 Stream Line Your Mind *Mursell*
4 Live Successfully Books (*Times of India*)
5 Memory and Its Cultivation *Edridge Green*
6 Perfect Memory *Basil Hogarth*
7 Elementary Psychology *Gates*
8 Originality *Knowlson*
9 Influencing Human Behaviour *Overstreet*
10 The Mind and Its Education *Brett*
11 The Return to Religion *Links*
12 Increasing Personal Efficiency *Laird*
13 Self Mastery Through Suggestion
14 Auto-Suggestion *Emile Coue*
15 Brain Building for Achievement *Casson*
16 Peace Power and Plenty *Swett Marden*
17 Psychology *Woodworth*
18 Creating New Ideas *Knowlson and Ennis*
19 Concentration *Ernest Wood*
20 How to Live on Twenty Four Hours a Day *Bennett*
21 The Conquest of Happiness *Bertrand Russel*
22 Make the Most of Your Life *Lurton*
23 The Human Machine *Arnold Bennett*